देवेन्द्र कौशिक

आधुनिक मध्य एशिया

(१६ वीं शताब्दी के आरम्भ से लेकर अब तक का इतिहास)



प्रगति प्रकाशन • मास्को

अनुवादक अली अशरफ

Д КАУШИК

Средняя Азия в новые времена

На языке хинди

हिन्दी अनुवाद • प्रगति प्रकाशन • १९७७

सोवियत संघ मे मुद्रित।

$K\frac{11604-382}{014(01)-77}$ 57[illegible]—76

पृष्ठ

लेखकों के लिखे हुए है, जिन्हे आमू दरिया के उत्तर, हिंदूकुश के परे समाजवादी निर्माण की उपलब्धियों की बाबत सच कहने से कोई दिलचस्पी नही थी। हालांकि ये ऐसी सफलताएं है, जिनका उल्लेख भारतीय गणराज्य के प्रमुख नेताओं जैसे जवाहरलाल नेहरू, सर्वपल्ली राधाकृष्णन और राजेंद्र प्रसाद ने सोवियत संघ की अपनी यात्राओं के बाद उत्साहपूर्वक किया।

इसलिए यह आशा की जा सकती है कि इस पुस्तक को विशेष दिलचस्पी से पढ़ा जायगा। लेखक एक भारतीय विशेषज्ञ है, जिन्होंने सोवियत संघ मे वैज्ञानिक अध्ययन के दौरान अपने तथ्य जमा किये। वह पहले ताशकद मे रहे जो उज्बेकिस्तान की राजधानी और प्रसिद्ध अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन स्थल है। वही उन्होंने अपना थीसिस लिखा और सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया, जिसकी बदौलत उन्हे विज्ञान (इतिहास) के कैडीडेट (पी एच० डी०) की उपाधि मिली।

कई जातियो मे यह कहावत है कि किसी चीज के बारे मे सौ बार सुनने से अच्छा उसको एक बार देख लेना है। देवेन्द्र कौशिक ने सोवियत मध्य एशिया मे नये सोवियत समाज को खुद अपनी आखो से देखा है। उन्होने देखा है कि वह पेचीदा आधुनिक प्रौद्योगिकी का उपयोग करता है और उन्नत विज्ञान तथा संस्कृति के फलो से लाभान्वित हो रहा है।

एक ऐसे इतिहासकार की हैसियत से जिसने मध्य एशियाई जनगणो के अतीत का गहरा अध्ययन किया है, यह भारतीय विद्वान इस स्थिति मे थे कि उन विशाल परिवर्तनो का सही मूल्यांकन करे, जो सोवियत संघ के उस भाग मे हुए है। वास्तव मे वह यही बताते हैं कि उज़्बेकिस्तान, ताजिकिस्तान, तुर्कमानिस्तान और किर्गिज़स्तान के लोगो ने (वह कजाखस्तान की बात कम करते हैं) १९ वी सदी के पूर्वार्द्ध से हमारे जमाने तक क्या रास्ता तय किया है। उन्होंने अनेक अप्रकाशित दस्तावेजो, साख्यिकीय सार-सूचियो, पत्र-पत्रिकाओ तथा पुरालेखागार की सामग्री का उपयोग किया है। उनकी पुस्तक वास्तव तथ्यों से भरी पड़ी है मगर लेखक इनके बारे मे दर्शक नही, जैसे कुछ लोग थो के बारे मे कहे जाते है। उन्होंने अपने तथ्यो को खूब जाचा

है और उचित कालक्रमानुसार पेश किया है जिस से उनके गहन मद्धातिक चिन्तन का परिचय मिलता है।

लेखक ने १९वीं सदी के पूर्वार्द्ध में मध्य एशिया के खान शासित प्रदेशों—बुखारा, खीवा और कोकान—की स्थिति का वर्णन किया है और ठीक ही उनके अत्यंत आर्थिक सैनिक राजनीतिक और सांस्कृतिक पिछड़ेपन पर जोर दिया है। वह मध्य एशिया में अंग्रेजों की साजिशों और व्यापारिक तथा राजनीतिक घुसपैठ की कोशिशों, और उस इलाके में जारशाही के सैनिक विस्तार पर प्रकाश डालते हैं। उन्होंने यह बिल्कुल सही कहा है कि जारशाही के अधिकारियों द्वारा वहां स्थापित प्रशासन औपनिवेशिक था, पर वह यह भी बताते हैं कि वहां प्रगतिशील रूसी वैज्ञानिकों का, जिन में इतिहासविद् भूवैज्ञानिक वनस्पतिविद् और प्राणिविज्ञ सभी थे, कार्यकलाप बहुत महत्वपूर्ण था। औपनिवेशिक तुर्किस्तान अर्थतंत्र के विश्लेषण से लेखक इस सही नतीजे पर पहुंचे हैं कि उस इलाके में पूंजीवाद से पहले के संबंधों की प्रमुखता थी।

पुस्तक का एक मूल्यवान पहलू यह है कि यह वादायक है। लेखक तथ्यों को इकट्ठा करके इतिहास के पूंजीवादी जालसाजों की कुत्सापूर्ण मनगढ़न्त का पर्दाफाश करते हैं, जिन्होंने सोवियत यथार्थता को तोड़ मरोड़ कर पेश करने का प्रयत्न किया है। इनमें जेफ्री व्हीलर रिचर्ड पाइप्स, ह्यूग सीटन-वाटसन, अलेक्जांद्र पार्क और स० जेंकोव्स्की है। देवेन्द्र कौशिक ने व्हीलर के इस दावे का खंडन किया है कि बुखारा अक्तूबर क्रांति से पहले उन्नति कर रहा था। उस अंग्रेज लेखक ने मध्य युग के उस अंधकारमय अवशेष, बुखारा के सामंती उपराज को बढ़ा चढ़ा कर दिखाने का प्रयास किया है, ताकि सोवियत युग में बुखारा नखलिस्तान में जो शानदार परिवर्तन हुए हैं, उनके असर को कम करे।

कौशिक ने अंग्रेज और अमरीकी "सोवियतज्ञों" के इस झूठे दावे की धज्जियां उड़ाई है कि मध्य एशिया में समाजवादी क्रांति बाहर से लाई गई और लोगों पर जबरदस्ती लादी गई थी। वह साबित करते है कि शोषित जनता में—उज्बेकों, ताजिकों, किरगिजों और तुर्कमानों में—समाजवादी क्रांति की जमीन तैयार थी और वे अक्तूबर क्रांति की विजय

के लिए, सोवियत सत्ता के लिए, जिसे वे स्वयं अपनी सत्ता मानते थे, वीरतापूर्वक लड़े। भारतीय विद्वान ने ह्वीलर के इस कथन का मज़ाक उड़ाया है कि मध्य एशिया का अर्थतन्त्र आज औपनिवेशिक है।

मुझे सब से अच्छी बात यह लगी कि लेखक ने मध्य एशिया और भारत के इतिहास में समान तत्त्वों की हमेशा तुलना करने का प्रयास किया है। उन्होंने आधुनिक युग में उनके संबंधों का वर्णन अधिकतर भारतीय गणराज्य के राष्ट्रीय अभिलेखागार की भूली बिसरी दस्तावेज़ों के आधार पर किया है। इस प्रसंग में मैं उस दिलचस्प सूचना की चर्चा करना चाहूँगा, जो उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन में हिस्सा लेनेवालों द्वारा सोवियत रूस की यात्रा और व्ला० इ० लेनिन से उनकी भेंट के बारे में दी है।

मुझे आशा है कि भारतीय स्वाधीनता के सेनानियों—महात्मा गांधी और जवाहरलाल नेहरू—के देश में इस पुस्तक के दूसरे भाग पर मुख्य ध्यान दिया जायेगा, जिस में मध्य एशिया की जातियों के इतिहास के आधुनिकतम दौर—तुर्किस्तान में, बुखारा और खीवा खानशाही में श्रमजीवी जनगण की सत्ता की विजयों और सुदृढ़ बनाने के लिए उनका संघर्ष, राष्ट्रीय प्रभुसत्ताप्राप्त राष्ट्रीय जनतंत्रों की स्थापना, शोषक वर्ग का उन्मूलन, आर्थिक तथा सांस्कृतिक पिछड़ेपन का अंत और उद्योग, कृषि तथा संस्कृति का समाजवादी रूपांतरण—पर प्रकाश डाला गया है। इन सब की इस पुस्तक में सविस्तार चर्चा की गई है। इनका अध्ययन से लेखक के स्वदेशवासी ज्यादा अच्छी तरह समझ सकते हैं कि ज़ारशाही रूस के पिछड़े औपनिवेशिक इलाकों का समाजवादी रूपांतरण करने तथा ऐतिहासिक दृष्टि से इतनी कम मुद्दत में उन्हें वस्तुतः प्रभुसत्ता प्राप्त और उन्नत औद्योगिक कृषिक जनतंत्र बनाने के लिए क्या उपाय करने और कौन से साधन अपनाने पड़े।

लेखक ने मसविदे को केवल कहीं कहीं कुछ संक्षिप्त किया गया जिसका विषय वस्तु पर कोई असर नहीं पड़ता। जहां कहीं हम टिप्पणी करने, या लेखक के किसी वक्तव्य पर बल देने की जरूरत हुई है, हम ने फुटनोट में 'सं०' का चिह्न लगाकर ऐसा किया है। चित्र भी हम ने चुने हैं।

न० आ० सानन्नि

विज्ञान (इतिहास) के डाक्टर

प्राक्कथन

हम भारतवासियो को मध्य एशिया की घटनाओं म हमेशा गहरी दिलचस्पी रही है। अनेक बार इन घटनाओं ने हमारे इतिहास की गति को प्रभावित किया है। ऐसे समय जबकि सोवियत सघ तथा भारत के जनगण की मैत्री दिना दिन जोर पकड रही है यह स्वाभाविक है कि मध्य एशिया के जनगण के जो वास्तव म हमारे पडोसी है, ऐतिहासिक विकास म हमारी दिलचस्पी और गहरी हो। प्रस्तुत पुस्तक म १९ वी सदी के शुरू से लेकर लगभग डेढ सौ वर्ष तक के मध्य एशिया के आधुनिक इतिहास पर विचार किया गया है।

दूर अतीत म मध्य एशिया का बडा महत्त्व था, भिन्न भिन्न सस्कृतिया और सभ्यताओ की धाराए वहा आकर मिलती थी। मगर १५ वी सदी के अत म महान नाविको की युगप्रवर्ती यात्राओ के बाद वह गुमनामी म पड गया। लेकिन १९ वी सदी के प्रारम्भिक वर्षों से जारशाही रूस तथा ब्रिटन की औपनिवेशिक प्रतिद्वद्विता के प्रभाव के कारण इस इलाके का कुछ-कुछ पुराना महत्त्व फिर बहाल हो गया। इस प्रकार मध्य एशिया का आधुनिक इतिहास जब शुरू हुआ, उस समय दो प्रतिद्वद्वी पश्चिमी साम्राज्यो का साया इस इलाके पर था। मध्य एशिया की जातिया सामती खानो के कुशासन तले अत्यत आर्थिक और सास्कृतिक पिछडेपन की स्थिति म पडी हुई थी। उनकी हैसियत दो यूरोपीय शक्तियो की औपनिवेशिक प्रतिद्वद्विता म शतरज के मोहरा की थी।

इस पुस्तक की तैयारी म मैंने जो काय अपने सामने रखा है, वह था मध्य एशिया म जारशाही

रूस की वैदेशिक नीति के उद्देश्यों की छानबीन करना, जहा तक उसका सबध साम्राज्य की अदरूनी, खासकर आर्थिक स्थिति से था। मेरा दूसरा लक्ष्य मध्य एशिया मे आग्ल-रूसी प्रतिद्वद्विता की समस्या का आलोचनात्मक तथा व्यापक अध्ययन करना था। मध्य एशिया मे जारशाही सरकार के आक्रामक चरित्र के बावजूद उसने प्रचलित आर्थिक, सैनिक तथा राजनीतिक परिस्थितियो के कारण भारत पर कब्जा करने का कभी इरादा नही किया। भारत पर रूसी आक्रमण का हौआ अग्रेज साम्राज्यवादी हलको ने झूठमूठ खडा किया था क्योकि वे मध्य एशिया मे अपनी विस्तारवादी कारवाइयो पर परदा डालना चाहते थे। मैने रूसी तथा भारतीय मूल सामग्री की सहायता से मध्य एशिया मे ब्रिटेन के आक्रामक मनसूबो का परदाफाश किया है। मध्य एशिया मे अग्रेजो की साजिशो का ही प्रभाव था कि उस इलाके पर रूसी कब्जे की रफ्तार तेज हो गई, जो बुनियादी तौर पर विकासमान पूजीवाद की विस्तारवादी आवश्यकताओ का नतीजा था।

मध्य एशिया पर रूसी कब्जा **वस्तुनिष्ठ रूप से** उस क्षेत्र के ऐतिहासिक विकास के लिए प्रगतिशील महत्त्व रखता है। इसका नतीजा यह हुआ कि इस इलाके मे आरम्भिक पूजीवाद का उदभव हुआ जिसके कारण सामाजिक आर्थिक परिवर्तन तेज हो गये।*

१९१७ की अक्तूबर समाजवादी क्राति ने मध्य एशिया की जातियो के जीवन मे नया युग शुरू किया। क्राति मे पहले मध्य एशिया जारशाही रूस का उपनिवेश था। उसके विकास का स्तर पूजीवाद से पहले का था। उसका अर्थतत्र पिछडा हुआ था और जीवन-स्तर दरिद्रता की हद तक नीचे गिरा हुआ था। क्राति के बाद मध्य एशिया की जातियो ने अन्य सोवियत जातियो के साथ मिलकर ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत कम

---

*सोवियत इतिहासकारो की राय मे इस कब्जे का मुख्य प्रगतिशील पहलू यह था कि उसने मध्य एशिया के उत्पीडित श्रमजीवी जनगण को रूसी साम्राज्य की क्रातिकारी शक्तियो से जोड दिया और यह चीज भविष्य मे जार, पूजीपतियो और जमीदारो के शासन का तख्ता उलटने के लिए, सारे देश मे समाजवादी क्राति की विजय के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण साबित हुई। —स०

समय म एक समाजवादी समाज का निर्माण किया। समाजवादी बहुजातीय राज्य की स्थिति म, जो समानता और स्वतन्त्रता पर आधारित था, इस भूतपूर्व उपनिवेश न जिस जारशाही साम्राज्य की परिधि म बलपूर्वक घेर रखा गया था, ससार के समक्ष स्वेच्छापूर्वक मित्रतापूर्ण सबध का ज्वलत उदाहरण पेश किया।

कुछ और सोवियत जातियो की तरह मध्य एशिया क जनगण भी ससार म पहले थ जो पूजीवादपूर्व सबधो से समाजवाद म अपने सक्रमण म पूजीवाद स बचकर निकल गये। उनका अनुभव उन राष्ट्रो के लिए दिलचस्प होगा, जिन्होने औपनिवेशिक गुलामी का जूआ उतार फेंका है और स्वतत्र आर्थिक तथा राजनीतिक विकास का रास्ता अपनाया है। प्रस्तुत पुस्तक म सक्षेप म बताया गया है कि मध्य एशिया के लोगो न कैसे सोवियत सत्ता की स्थापना की अपने आर्थिक और सास्कृतिक पिछडेपन को दूर किया, समाजवाद का निर्माण किया और तब स अब तक क्या उपलब्धिया प्राप्त की।

आधुनिक मध्य एशिया के इतिहास के अध्ययन क प्रति भारतीय दृष्टिकोण अब तक उपेक्षित रहा है। इस इलाके से सबधित काफी सामग्री भारतीय अभिलेखागारो म मौजूद है और इस सामग्री तथा मध्य एशिया तथा भारत की समस्याओ के प्रसग म इसकी छानबीन वाछनीय है। मैंने इस मूल सामग्री का कुछ उपयोग किया है। इस किताब मे मध्य एशिया और भारत के सबधो पर भी एक अध्याय जोडा गया है। इस शीर्षक के अतर्गत सिक्यांग या चीनी तुर्किस्तान को भी शामिल कर लिया गया है क्योकि मध्य एशिया म आग्ल-रूसी प्रतिद्वद्विता से इसका गहरा सबध है।

मैं बहुत से सोवियत विद्वानो तथा लेखको का विशेष रूप स आभारी हू जिनके अनुसधानो और कृतियो का मैने व्यापक उपयोग किया है।

इसी तरह मैं आभारी हू सोवियत प्रोफेसरगण म० ग० वहाबोव, न० अ० खालफिन, अ० अ० गोर्दियेंको, ख० त० तुसूनोव, ताशकन्द के सर्वश्री ग० अ० हिदायातोव, त० अ० तुतुनजान तथा व० लूबनिकोव का, जिन्होने अपने विचारो से इस पुस्तक मे प्रस्तुत समस्याओ पर ज्यादा अच्छी तरह दृष्टिपात करने और समझने मे मेरी सहायता की।

विशेष रूप से मैं प्रोफेसर न० अ० खालफिन का आभारी हूं, जिन्होंने इस पुस्तक का सपादन किया और इस के बारे म कुछ शब्द लिखे हैं।

मैं अपने मित्रा सर्वश्री सुरेश चद्र अग्रवाल, साधुराम और शक्तिधर के प्रति भी अपनी कृतज्ञता प्रकट करना चाहता हूं, जिन्होंने बडी मेहनत से पाडुलिपि पढी और कई कारआमद सुझाव दिये।

अपनी पत्नी राया तुगुशेवा का मैं बहुत आभारी हूं जिनकी सहायता और प्रोत्साहन इस काम को पूरा करने मे मेरे लिए बहुत मूल्यवान सिद्ध हुए।

इस पुस्तक को कई प्रकार की सहायता से लाभ पहुचा है। मैं डा० बुद्धप्रकाश के प्रति कृतज्ञता प्रकट करना चाहता हूं जिन्होंने सबसे पहले मध्य एशिया के इतिहास मे मेरी दिलचस्पी पैदा की।

विभिन्न पुस्तकालयो के कर्मियो के सौजन्य तथा सहयोग के लिए भी मुझे धन्यवाद देना चाहिये जहा से मैंने इस कृति के लिए सामग्री प्राप्त की। इन म खासकर उल्लेखनीय है मास्को का लेनिन पुस्तकालय, ताशकन्द का अलीशेर नवाई पुस्तकालय, उज्बेक सो० स० जनतत्र की कम्युनिस्ट पार्टी के इतिहास के सस्थान के पुरालेख सग्रहालय तथा पुस्तकालय, इडियन काउसिल आफ वर्ल्ड एफेयर्स, नई दिल्ली का पुस्तकालय और लन्दन का ब्रिटिश म्यूजियम। मैं राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली तथा पजाब राज्य अभिलेखागार, पटियाला के अधिकारियो का भी आभारी हूं, जिन्होंने अपने रिकार्ड मुझे देखने दिये और उनका प्रयोग करने की मुझे इजाजत दी।

१९६२ से १९६४ तक लेनिन राज्य विश्वविद्यालय ताशकन्द की फैकल्टी के मुझे गाजियेव साता से सामग्री जुटाने म बडी सहायता मिली।

इस काम को पूरा करने म और जिन लोगो ने तरह तरह से योगदान दिया, मैं उन सबो का हार्दिक धन्यवाद देता हूं। परन्तु मूल्यांकन और व्याख्या मेरा अपनी है और कुछ त्रुटिया रह गई हो तो मैं उनकी पूरी जिम्मेदारी स्वीकार करता हूं।

देवेंद्र कौशिक

नई दिल्ली,
जनवरी १९६८

भूमि और उसके लोग

भूमि

पाच सोवियत जनतत्र – कज़ाखस्तान, उज्बेकिस्तान, ताजिकिस्तान गिज़स्तान और तुर्कमानिस्तान – एक विशाल क्षेत्र म फैले हुए है जिनके तर म पश्चिमी साइबरिया दक्षिण म अफगानिस्तान और ईरान पश्चिम वोल्गा और कास्पियन सागर और पूव म चीन है। इन जनतत्रा म लगभग तीन करोड लोग रहते हैं, जो सोवियत सघ की कुल आबादी का दसवा हिस्सा है। इनका क्षेत्रफल ४० लाख वग किलोमीटर है जो सोवियत सघ का छठा भाग है। कज़ाखस्तान को निकाल दिया जाये, तो मध्य एशिया का क्षेत्रफल कोई १२ लाख वग किलोमीटर है। सच पूछिए तो सोवियत मध्य एशिया का नाम उपयुक्त पाच म स केवल चार पर ही लागू होता है और उसम कज़ाखस्तान शामिल नही है, जो नसली और सास्कृतिक समानता के बावजूद भौगोलिक दृष्टि स मध्य एशिया से भिन्न है। यह एक स्तेपी इलाका है और ज़ारशाही के जमाने के तथा सोवियत लेखको ने भी इसे अलग माना है।

इस पूरे क्षेत्र म मौसम तथा प्राकृतिक स्थितियो की अत्यत विविधता पायी जाती है। पश्चिम और उत्तर म विशाल मैदान है। पूव और दक्षिण म काफी बडा इलाका पहाडी है। एक बडी पवतमाला, दक्षिण पश्चिम म कोपेत दाग से पूव म पामीर और तियान शान तक मध्य एशिया को शप

महाद्वीप से अलग करती है। इन इलाकों में बड़ा भेद पाया जाता है। विशाल मैदान हैं जिनमें निचान समुद्र तल से नीचे पहुंच जाती है और पहाड़ों की चोटियां सदा बर्फ से ढकी रहती हैं, घनी आबादीवाले नखलिस्तानों के चारों ओर निर्जन रेगिस्तान हैं। पहाड़ों पर उत्तरध्रुवीय हिमपात है तो निचले मैदानों में उष्णदेशीय गर्मी। उत्तर में मौसम शीतोष्ण है और दक्षिण में गर्म है और गर्मियों में अत्यंत शुष्क हो जाता है। समुद्रों से बहुत दूर होने के कारण मौसम वास्तव में महाद्वीपीय है। पहाड़ों की चोटियां साल भर बर्फ से ढकी रहती हैं और आमू-दरिया की घाटी में तरमीज में तापमान छांव में +५०° सेन्टीग्रेड तक पहुंच जाता है जो पूरे सोवियत संघ में सब से अधिक गर्म है, जबकि मध्य तियान शान और पामीर में जुलाई में औसत तापमान क्रमशः +५° और +१४° है जो जाड़ों में −४७° तक गिर जाता है। पर्वतीय इलाकों को छोड़कर हिमपात बहुत कम होता है। उत्तर में अराल सागर साल के कई महीने जमा रहता है और यही हाल सिरदरिया के निचले मुहाने का है। अर्द्ध रेगिस्तानी और रेगिस्तानी इलाकों की आम विशेषता तूफानी हवाएं हैं।

भौगोलिक दृष्टि से मध्य एशिया और कज़ाखस्तान को चार हिस्सों में बांटा जा सकता है: स्तपी जिसमें उत्तर कज़ाखस्तान या परती-ज़मीन का इलाका शामिल है; अर्द्ध रेगिस्तान, जो लगभग सारे शेष कज़ाखस्तान में फैला हुआ है; इसके दक्षिण में रेगिस्तान का इलाका, जो पश्चिम में कैस्पियन और पूरब में चीन की सीमा तक फैला हुआ है, और पामीर और तियान शान का पहाड़ी इलाका।

मध्य एशिया की बड़ी और छोटी नदियां जिन्हें बारहों महीने बर्फ से पानी मिलता रहता है इसके नखलिस्तानों को हरा भरा बनाये रखती हैं। दो बड़ी नदियां आमू-दरिया और सिर-दरिया हैं जिनके स्रोत पामीर और तियान शान में हैं। छोटी नदियों में ज़रफशान, चू, मुर्गाब, तजेन और अत्रेक हैं। कज़ाखस्तान में इर्तिश, ईली, उराल और इशिम नदियां बहती हैं। इस इलाके की महत्वपूर्ण झीलों में अराल सागर, बलखाश झील तथा इस्सीक-कुल झील हैं।

हिमवत पर्वतो तथा सूखे रेगिस्तानो से मध्य एशिया के लोगो की आर्थिक और सास्कृतिक प्रगति मे कोई बाधा नही पडी। सुदूर अतीत से वहा अत्यत विकसित कृषि सभ्यता फलती फूलती रही है जिसका आधार सिचाई था। अनुकूल प्राकृतिक स्थितियो, जसे गर्मी के लम्बे मौसम, उपजाऊ लोएस भूमि सिचाई की गुजाइश मैदानो और पहाडियो पर बडे चरागाह और प्रचुर खनिज धन की बदौलत नाना प्रकार का आर्थिक कार्यकलाप सम्भव हुआ।

मध्य एशिया और कजाखस्तान की भौगोलिक स्थिति व्यापार के लिए निर्णायक महत्त्व की रही है। समुद्री रास्ता की खोज से पहले पूर्वी तथा मध्य एशिया को पूर्वी यूरोप से तथा निकट पूर्व के देशो से जोडनवाले मुख्य व्यापारिक रास्ते इसी इलाके से होकर गुजरते थे। आज के विमान और भू-सचार की सेवाए भी, जो सोवियत सघ को ईरान, अफगानिस्तान, भारत और चीन से जोडती है, मध्य एशिया और कजाखस्तान से होकर गुजरती है।

लोग

मध्य एशिया सभ्यता के सब से पुराने केद्रो म से एक है। यहा सोवियत पुरातत्वज्ञो न अनेक अवशेषो की खुदाई की है जिनका सबध पुरापाषाण युग स है। कजाखस्तान के तलस और जाम्बूल इलाके से और दक्षिण उज्बेकिस्तान म तशीक ताश से माउस्तेरियाई अवधि और उसस भी पहल के समय की चीजे मिली है। अनेक मध्य एशियाई कबीले उदाहरण के लिए दक्षिण तुर्कमानिस्तान म जेईतुन बस्ती के लोग नवपाषाण युग म ही कृषि और पशुपालन करने लगे थे। दक्षिण तुर्कमानिस्तान म अनाउ सस्कृति के लोगो को ईसा पूर्व चौथी सहस्राब्दी म ही कृषि का ज्ञान था। प्रारम्भिक लौह युग सस्कृति ईसा पूर्व प्रथम सहस्राब्दी म प्राचीन ख्वारज्म म मौजूद थी। यह सस्कृति मुख्यत कृषि तथा पशुपालन पर आधारित थी। ख्वारज्म म सिचाई की नहरो का जाल सा बिछा हुआ था। अन्य समकालीन सस्कृतियो मे, जो कृषि तथा शहरी जीवन के उच्च

स्तर पर पहुंच गई थी बैक्ट्रिया और सोगदियाना का उल्लेख किया जा सकता है। स्तेपी क्षेत्र के लोग ताम्रयुग में ईसाई काल से एक हज़ार वर्ष पूर्व सिंचाई से अवगत थे।

प्राचीन मध्य एशिया तथा स्तेपी क्षेत्र की आदिम आबादी उसी ईरानी वंशमूल की थी जिससे फारस वाले थे। मध्य एशिया के सब से पुराने लोग जिनका हाल हम मालूम है—जरफशान घाटी के सोगदियान और आमू दरिया के निचले किनारों पर बसे हुए ख्वारज़्मी—इसी वंशमूल से थे। उनका इलाका अकेमेनिद राज्य का हिस्सा था। यह पहला विश्व साम्राज्य था जिसका इतिहास को ज्ञान है। राजा दारी ने (५२२-४८६ ई० पू०) अपने शिलालेखों में सोगदियानो और ख्वारज़्मिया की चर्चा करते हुए उन्हें अपनी प्रजा बताया है। उन्होंने यूनान के विरुद्ध उसकी लड़ाई में भाग लिया था।

सिकन्दर महान के आक्रमण के समय तक ख्वारज़्म फारस का प्रांत नहीं रह गया था। मगर सोगदियान उस समय तक फारस के शासन के अधीन थे और वे सिकन्दर के खिलाफ लड़े। अकेमेनिद राज्य को सिकन्दर महान ने नष्ट कर दिया और इसके इलाके यूनानी-मकदूनी साम्राज्य में शामिल कर लिये गये। उसी सदी में इसका पतन होने के बाद मध्य एशिया का काफी बड़ा हिस्सा सेल्युकस राज्य में मिला लिया गया। ईसा पूर्व तीसरी सदी में मध्य एशिया के पश्चिमी भाग में सेल्युकस का तख्ता स्थानीय विद्रोहों के कारण उलट गया। उनके स्थान पर पार्थी आये। लेकिन पार्थिया के हमले के बावजूद स्वतंत्र यूनानी-बैक्ट्रियाई राज्य १४०-१३० ई० पू० तक कायम रहा। कुछ अर्से बाद यूनानी-बैक्ट्रियाइयों के स्थान पर कुषाण राज्य स्थापित हुआ। कुषाण युग मध्य एशिया के लिए सांस्कृतिक तथा आर्थिक विस्तार का ज़माना था। इस क्षेत्र की समृद्धि का कारण यह भी था कि वह चीन को फारस और रोमन जगत से मिलाने वाले "महान रेशमी मार्ग" पर स्थित था।

तीसरी सदी ईसवी के अन्त से कुषाण सत्ता का पतन शुरू हो गया। चौथी सदी ईसवी में ख्यूनाई या श्वेत हूण नामक एक कबीले ने जिसका कुषाणों से संबंध था और जो उनके शासन के अधीन था, बैक्ट्रिया पर

कब्जा कर लिया और मध्य एशिया म कुषान शासन की इट से इट बजा
दी। परन्तु श्वत हूणा का शासन बहुत दिन नही चला। ५६३–५६७ ईसवी
म इफ्थलाइया को जेतीसुव क तुर्कों ने परास्त कर दिया और मचूरिया
से काले सागर तक फल खगान शासन म शामिल कर लिया। छठी सदी
ईसवी के अत तक खगान शासन दो भागा म बट गया और उसक पश्चिमी
भाग पर मुसलमान अरबा न अधिकार कर लिया।
मध्य एशिया म अरबा का दखल आठवी सदी के प्रारम्भ म इब्न
मुस्लिम क नतत्व म हुआ। वह खुरासान का राजपाल था। सारे इलाके
म वे तलवार और आग लेकर बढ और शानदार सास्कृतिक खजाने नष्ट
कर डाल जैसे पजीकन्द के मदिर मग किला और अय यादगारे।
अरबा की इन सत्यानाशी हरकता का वणन अल बरूनी ने बडे आक्रोश के
साथ किया है। उनक कथनानुसार इब्न मुस्लिम न उन सारे विद्वानो को
मार डाला जा ख्वारज्म के इतिहास और भाषा का ज्ञान रखते थे, जिससे
इसलामी युग से पहले क इतिहास के बारे म कुछ जानना असम्भव हो
गया। स्थानीय जनगण ने जिन्ह तुर्की कबीलो का समथन प्राप्त था,
अरबा का बडा विरोध किया। यह जन विरोध कोई पचास वप तक जारी
रहा। इसके विपरीत सामानी ईरान पर कब्जा करने म अरबा को केवल
१५ वप लगे थे। अरब शासन म बडा अत्याचार होता था। किसान करो
के भारी बोझ स त्राहि-त्राहि कर रहे थे जबकि ज़मीदारो का सारी
सुविधाए हासिल थी। अरबा ने मध्य एशिया मे तलवार के बल पर
इसलाम फलाया। इस धम परिवतन से उन्हाने स्थानीय लोगो म समान
दृष्टिकोण के आधार पर एकता स्थापित करने का काम लिया। इसलाम
के साथ अरबी भाषा भी फैली, जो शासन, साहित्य और विज्ञान की
भाषा बन गइ। लेकिन आम लोग स्थानीय ईरानी और तुर्की बोलिया
बोलते रहे। लोगा की नस्ली बनावट पर अरबो का कोई खास असर
नही पडा। मध्य एशिया म आज जो अरब बसे हुए है, वे उन लोगो की
सतान है, जो बहुत बाद म तैमूर के समय आकर आबाद हुए थे।
इसलाम की विजय कज़ाखस्तान के केवल दक्षिणी भाग तक सीमित
थी। स्तेपी इलाके क तुर्की कबीले उस समय तक स्वतत्र थे। तुर्कों ने

पहले आठवीं सदी में जेतीसुव में तियुरगेशियों से और बाद में (८वीं से १०वीं सदी तक) करलूका से एका कर लिया था। पश्चिम की ओर, सिर-दरिया के निचले भागों में तुर्क कबीलों और ओगुजा के शक्तिशाली संघ का प्रभुत्व था। इन कबीलों में अनाज की खेती के साथ पशुपालन भी होता था और शहरों में उनके व्यापार-केन्द्र भी थे। ओगुजा का केन्द्र यगीकन्द शहर था। वे इफथलाइयों की सतान थे, जो छठी और सातवीं सदी ईसवी में तुर्कों के प्रभाव में आ गये थे। इस मुख्य तुर्की इफथलाई नस्ली तत्व के अलावा ८वीं से १०वीं सदी के जमाने में ओगुजा में हिन्द-यूरोपीय कबीले भी काफी संख्या में आ मिले जैसे तुखार और यासोव आलान।

ओगुजा के पड़ोस में, अराल सागर के इलाके में, इस दौर में पचेनेग कबीलों का संघ स्थापित हुआ। उनका नस्ली आधार पुराने शक-मसागात कबीले थे। उनपर भी तुर्कों का असर पड़ा था।

९वीं और १०वीं सदियों के दौरान में सामानियों का राज्य कायम हुआ (८७४-९९९ ईसवी) जिसमें ईरान और मध्य एशिया दोनों शामिल थे। इसका केन्द्र बुखारा था। सामानी राज्य में मावरान्नहर, ख्वारज्म, सिर-दरिया के इलाके, तुर्कमानिस्तान का भाग ईरान और अफगानिस्तान शामिल थे। इसने इस इलाके के नस्ली और सांस्कृतिक इतिहास में बड़ी भूमिका अदा की। सामानी शासनकाल में ताजिक फारसी भाषा दूर दूर तक फैली और यही वह समय था जब महान कवियों रूदकी और फिरदौसी ने अपनी अमर कृतियां लिखीं। परन्तु विज्ञान की भाषा अरबी बनी रही।

८वीं सदी के अंत और ९वीं सदी के प्रारम्भ में मध्य एशिया में महान साहित्यिक पुनरुत्थान हुआ। अरब गणित शास्त्र के संस्थापक मुहम्मद इब्न मूसा अल-ख्वारज्मी की कृतियां इसी दौर की हैं। उन्हीं की कृति "अल-जब्र" के शीर्षक से अलजेब्रा नाम पड़ा। वह केवल गणित शास्त्री ही नहीं खगोलज्ञ, भूगोलविद् तथा इतिहासकार भी थे। उनकी कृतियों में भारतीय बीजगणित और यूनानी ज्यामिति का संश्लेषण था जो आधुनिक गणित विज्ञान का आधार है। अल-ख्वारज्मी ने गणित शास्त्र की सदियों पुरानी ख्वारज्मी परम्पराओं का उपयोग किया जिनपर भारतीय

तथा यूनानी संस्कृतियों का बड़ा असर पड़ा था और जिनकी उत्पत्ति सिंचाई, व्यापार और निर्माण की व्यावहारिक आवश्यकताओं के आधार पर हुई थी। अरबों ने गणित विज्ञान उन्हीं की किताबों से सीखा।

अबू नस्र अल फाराबी (मृत्यु ९५० ईसवी) ने दार्शनिक टीकाएं लिखीं और उन्हें कुछ लोग पूर्व का अरस्तू कहते हैं। उनके दृष्टिकोण में भौतिकवाद का असर था जिस कारण मुल्लाओं ने उनपर बड़ा अत्याचार किया। उनके भौतिकवादी विचारों ने मध्य एशिया के प्रमुख वैज्ञानिक अबू अली इब्न-सीना (९८० १०३७ ईसवी) को प्रेरित किया जिन्होंने चिकित्सा शास्त्र और दर्शन पर अनेक पुस्तकें लिखीं। चिकित्सा शास्त्र पर उनकी किताबों में सबसे प्रसिद्ध 'अल-कानून फितिब्ब' है जिसका अनुवाद १२वीं सदी में लातीनी में हुआ था और जिसे काई छ सौ साल तक पूर्व और पश्चिम के चिकित्सक चिकित्सा विज्ञान की प्रामाणिक पुस्तक मानते रहे।

ख्वारज्म संस्कृति के एक और महान व्यक्ति अल-बेरूनी (९७३ १०४८ ईसवी) थे जो इब्न-सीना के समकालीन थे। इनका जन्म एक गांव में हुआ था, जो आजकल कराकल्पाक स्वायत्त सोवियत समाजवादी जनतंत्र में है। उनकी "किताब उल हिन्द" एक श्रेष्ठ ऐतिहासिक और मानव जाति ज्ञान संबंधी कृति है जिसका जोड़ मध्ययुगीन साहित्य में नहीं है। इसके अलावा एक बहुत ज्ञानवान व्यक्ति, भूगोलविद, खगोलविद, खनिज विज्ञानी, जाति विज्ञानी, इतिहासकार तथा कवि के रूप में भी उन्हें बड़ी मान्यता प्राप्त थी। वह एक महान और निडर देशभक्त थे, जिन्होंने विजेताओं की सत्यानाशी हरकतों की बड़ी आलोचना की। इसके साथ साथ वह अन्य जातियों की संस्कृति की कद्र और आदर करते थे। उनका दृष्टिकोण सहज भौतिकवादी था। वह भौतिक जगत की परिघटनाओं और नियमों का ज्ञान प्राप्त करने में मानव-बुद्धि की भूमिका पर जोर देते थे। परन्तु इब्न-सीना और अल-बेरूनी के वैज्ञानिक तथा भौतिकवादी विचारों को प्रतिक्रियावादी धार्मिक विचारधारा से नुक्सान पहुंचा, जो उस समय मध्य एशिया पर हावी थी। मावरान्नहर में ११वीं और १२वीं सदियों में इराक से सूफी मत के रहस्यवादी विचारों का प्रचार हुआ।

मध्य एशिया मे १० वी और ११ वी सदिया मे सामती सबधा का प्रभुत्व स्थापित हो गया था। इससे इस इलाके के जातीय इतिहास म एक नया दौर शुरू हुआ। अब जातीय समूहो की निर्माण प्रक्रिया आरम्भ हुई। ९ वी और १० वी सदी के बीच के काल म एक जाति-समूह क रूप म ताजिको की उत्पत्ति हुई। मध्य एशिया की जातियो म सबसे पहले इन्ही का निर्माण हुआ। उनकी भाषा पहले ही सामानी राज्यकाल म विकसित हो चुकी थी। सोगदियान और बैक्ट्रियान उनके पुराने पूवज थे।

ताजिको के वतन से मिले हुए इलाके मे उज्बेक जाति की उत्पत्ति हुई। उज्बेको के ऐतिहासिक पूवज स्थानीय मध्य एशियाई जनगण जैसे ख्वारज्मी, सागदियान, मसागात और शक थे। इससे पहले के दौर म स्तेपी के तुर्की कबीले मावरान्नहर के क्षेत्र की जरफशान, फरगाना, चाच, ख्वारज्म आदि की वादिया म आकर बस गय थे। तुर्क इन स्थानीय कृषिक लोगो म घुल मिल गय। उन्होने उनका आर्थिक रहन-सहन और सांस्कृतिक आदत अपना ली। और स्थानीय लोगा न जो ईरानी भाषा बोलते थे, तुर्की की भाषा अपना ली। जातीय मेलजोल की यह प्रक्रिया ११ वी और १२ वी सदिया म जोरो से जारी थी। उसी समय आम और सिर दरिया दरिया के बीच के इलाके म एक तुर्की भाषा बोलनेवाली जाति की बुनियाद पडी, जो आगे चलकर उज्बेक कही जाने लगी।

१० वी सदी के अन्त म सामानी साम्राज्य का पतन हुआ था। सूबाई हाकिमो न केन्द्र का हुक्म मानने से इनकार कर दिया। अलग होने की प्रवृत्ति ने जोर पकडा। भारी करो की वजह से किसानो म असतोष की आग भडकी और पूरे साम्राज्य म गहरा सामाजिक सकट पैदा हो गया। सबुक्तगीन ने गजनी के राजवश की स्थापना की और बोगरा खान ने काशगर और जतीसुन के इलाके म काराखानिया के शक्तिशाली तुर्क राजवश की बुनियाद डाली। मध्य एशिया और ख्जाकस्तान म काराखानी शासनकाल उस दौर के जातीय तथा सांस्कृतिक इतिहास की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण था। उस समय म पूर्वी तुर्किस्तान तथा मध्य एशिया के जातीय समूहो का सम्मिश्रण हुआ जिसमे परस्पर सांस्कृतिक प्रभाव पडा।

उस ज़माने में तुर्क कबीले जेतीसुव में और चाच इलाके के निकट सिर-दरिया के पास पास बसे हुए थे। उनमें सबसे शक्तिशाली करलूक कबीला था, जो तलस नदी की घाटी से पूर्वी तुर्किस्तान में तरीम नदी तक फैला हुआ था। ये बड़े सुसंस्कृत लोग थे, जो शहरों और गांवों में रहते और पशुपालन, खेतीबारी और शिकार करते थे। दूसरा बड़ा तुर्क कबीला चिगिल था, जो मुख्यतः इस्सीक-कूल झील के उत्तर पूर्व ताराज़ में बसा हुआ था। इतिहासज्ञों का कहना है कि इस कबीले के पास घोड़े, भेड़ बकरी और मवेशी बहुत थे और करलुकों की तरह ये लोग भी शहरों और गांवों में रहा करते थे। एक और तुर्की कबीला, याग्मा, जिसका पेशा अधिकतर शिकार और पशुपालन था, पूर्वी तुर्किस्तान में इस्सीक-कूल झील के दक्षिणी क्षेत्र में आबाद था। तियुरगेशी कबीले, जिनमें तुखसी और अरगी शामिल थे और जिनके राज्य की स्थापना ८वीं सदी में हुई, करलूकों से पराजित हो गये थे। इन कबीलों का गहरा सांस्कृतिक संबंध मावरा-नहर के लोगों से था और उनकी तुर्की भाषा में सोगदियान का मिश्रण हो गया था।

इस अवधि में मध्य एशिया के स्थानीय लोगों की राजनीतिक एकबद्धता काराखानी राज्य में तुर्की कबीलों से हुई, जिसके फलस्वरूप गहरा परस्पर प्रभाव पड़ा। सभ्य कृषि प्रधान इलाके के वासियों से खानाबदोश तथा अर्द्ध-खानाबदोश तुर्क आप्रवासियों के सम्मिश्रण का सविस्तार वर्णन "कुदतकु बिलीक" में किया गया है। यह बड़ी अच्छी ऐतिहासिक कृति है जिसे युसूफ खास हाजिब बलसगूनी ने ११वीं सदी के आरम्भ में लिखा था। इस दौर में मध्य एशिया के नखलिस्तानों में तुर्की नस्ल के लोगों की संख्या बढ़ गयी और स्थानीय लोगों ने धीरे धीरे तुर्की भाषा अपना ली। आज उज़्बेक सोवियत समाजवादी जनतंत्र में तुर्की भाषा बोलनेवाले लोगों का बहुमत हो गया। महमूद काशगरी – काराखानी तुर्क भाषाविद – द्वारा लिखित "दीवान-उल-लुगत अत्तुर्क" के अध्ययन से पता चलता है कि ११वीं सदी में उज़्बेक भाषा के निर्माण की प्रक्रिया काफी आगे बढ़ चुकी थी।

इसी दौर मे तुर्कमान, कराकल्पाक और कजाख लोगो के जातीय निर्माण मे स्तेपी कबीलो तथा अराल सागर के निकट रहनेवाले जनगण के बारम्बार स्थानांतरण ने भी निर्णायक भूमिका अदा की। तुर्कमानो का जातीय निर्माण अराली कास्पियन स्तेपी के दाखो और मसागातो का कबायली एकबद्धता से हुआ जिनपर तुर्की प्रभाव पहले ही पड चुका था। इनकी बनावट म मुख्य नस्ली तत्त्व ओगुज कबीले थे जिनका एक भाग ताहिर मियर्वेजी के कथनानुसार १० वी सदी के अत मे ही तुर्कमान कहलाने लगा था। ११वी सदी मे काराखानियो से उनके सघर्ष के दौरान म निचले सिर दरिया के ओगुजो मे सलजूकी राज्य की उत्पत्ति हुई। उन्होंने न केवल काराखानी राज्य पर, बल्कि गजनवी क्षेत्र पर भी कब्जा कर लिया था। सलजूक तुर्क ओगुज सिर दरिया के इलाके मे वर्तमान तुर्कमान सोवियत समाजवादी जनतत्र के क्षेत्र मे दाखिल हुए। ओगुज कबायली नामो का रिवाज तुर्कमानी कबीलो मे २० वी सदी के प्रारम्भ तक था। सलजूकों के आगमन से उज्बेको का भी जातीय निर्माण काफी प्रभावित हुआ। इस से ख्वारज्म और बुखारा के कुछ हिस्सो की आबादी पर तुर्की प्रभाव पडा। आज भी समरकन्द क्षेत्र मे तुर्कमान नाम का एक जातीय समूह बसा हुआ है। ये ओगुज तुर्कमान की सतान है, जो सिर-दरिया से आकर यहा बस और उज्बेको म घुल मिल गये थे।

इसी अवधि म पचेनेगो के पीछे-पीछे ओगुजो के एक अन्य भाग का आगमन जिसकी दिशा दक्षिण रूसी स्तेपी की ओर थी, और अराल सागर क्षेत्र म दक्षिण से किपचाको का प्रवेश कराकल्पाक जातीय समूह की निर्माण प्रक्रिया म बहुत महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुआ। कराकल्पाको के पुराने पूर्वज अराल सागर क्षेत्र के कबीले (यूनानी लेखको के शब्दो म "दाखो और दाखो व मसागाता) और असीयान-पचनागा व पूर्वज थे। पचनागो और ओगुजो क एक भाग क पश्चिम की ओर प्रयाण कर जाने के बाद अराल क्षेत्र के ... ... म मिल आ गय। इस ओगुज-पचनग सम्मिश्रण म कराकल्पाक जाति का विकास हुआ। ११वीं सदी म किपचाको द्वारा अराल क्षेत्र की विजय म कराकल्पाको के सास्कृतिक विकास का एक नया दौर शुरू हुआ। कराकल्पाको के आप्रवासियो का

भाषा स्वीकार कर ली और १२वी सदी तक कराकल्पाक का जातीय नाम प्रचलित हो चुका था।

कज़ाखा का जातीय विकास मुख्यत शक और उसुन नामक स्तेपी कबीला के आधार पर शुरू हुआ जिसमे हूण जातीय तत्वा का भी काफी वडा हाथ था। इसके अलावा तुर्क खगान शासन तथा दक्षिण कज़ाखस्तान के प्रारम्भिक मध्ययुगीन राज्या न भी इस प्रक्रिया म सहायता की। १० वी और ११वी सदियो मे किपचाका ने पश्चिमी और मध्य कज़ाखस्तान मे कई कबायली सघ स्थापित कर लिए थे जिनका प्रभाव १२वी सदी मे इरतिश से दनेपर तक फैल गया था। कज़ाख जातीय समूह की उत्पत्ति स्तेपी के तुर्क कबीला से किपचाक के सम्मिश्रण से हुई। उज्बेक, किर्गिज, कराकल्पाक और बाश्कीर जसी अय तुर्क जातिया की बनावट म भी किपचाक कबीले शामिल थे।

किर्गिजा का निर्माण मध्य एशिया से बाहर के क्षेत्र मे, शायद पूर्वी तियान शान के तुर्क कबीला मे शुरू हुआ। किर्गिज़ा ने ६वी और १०वी सदियो मे ऊपरी येनिसेई मे स्वय अपना राज्य स्थापित कर लिया था जिसन मध्य एशिया के राजनीतिक इतिहास को प्रभावित किया। येनिसेई और तियान शान के किर्गिजो का सबध आज तक विवाद का विषय बना हुआ है। तियान शान के किर्गिज़ कबीला का, जो उस जगह बढ आये थे जहा आज किर्गिज सोवियत समाजवादी जनतत्र है, मध्य एशिया की स्थानीय आबादी से सम्मिश्रण मगोल आक्रमण के समय शुरू हो गया था। मध्य एशिया के किर्गिजो पर अल्ताई, इरतिश, मगोलिया और सिक्याग के लोगो का सास्कृतिक असर स्पष्ट दिखाई देता है, यद्यपि उनकी सस्कृति की अनेक विशेषताए स्थानीय आबादी से उनके सम्मिश्रण के कारण उत्पन्न हुई। १७वी सदी मे येनिसेई किर्गिजा की रूसियो से मुठभेड हुई और उनका वडा हिस्सा उस समय जुगारिया मे बस गया और दूसर साइबेरिया के खाकासियो और तुवानो मे घुल मिल गये।

१२वी सदी मे खानाबदोश करा क्ताई सुदूर पूव से चले आय और उन्हाने जेतीसुब मे एक राज्य स्थापित किया और मावरान्नहर पर अधिकार कर लिया। उनके आने का मध्य एशिया की जातीय बनावट पर स्पष्ट

प्रभाव पडा। ज़ाहिर है कि उनका एक हिस्सा तुर्क कबीलों में बस गया और उनकी भाषा अपना ली। उनका कबायली नाम किताई उज़बेकों, कराकल्पाकों कज़ाखों और किर्गिजों में प्रचलित हो गया।

मध्य एशिया में करा कितादयों का शासन बहुत दिन नहीं रहा और १३वीं सदी के शुरू में उनका स्थान ख्वारज्म शाहों ने लिया, जिन्होंने सलजूकिया की सत्ता को नष्ट कर दिया और एक शानदार सामंती साम्राज्य की स्थापना की जिसमें मध्य एशिया, अफ़गानिस्तान, ईरान और आज़रबैजान शामिल थे। ख्वारज्म शाहों के शासन में सामंतवाद का विकास की चरम सीमा पर पहुंच गया था जिसकी अभिव्यक्ति शहरों, व्यापार, दस्तकारी और संस्कृति के विकास में हुई।

चंगेज खान के नेतृत्व में मंगोल आक्रामकों ने १२१६-१२२१ ईसवी में ख्वारज्म शाहों के राज्य को नष्ट कर दिया। मंगोलों ने बडी तबाही और बर्बादी मचाई। इसके कारण ऐसा आर्थिक और सांस्कृतिक पिछड़ापन छा गया जिससे मध्य एशिया बहुत अर्से तक उबर नहीं पाया। मंगोल लश्करों का बडा भाग, जिसने मध्य एशिया को पराजित किया, किपचाक तथा अन्य तुर्की कबीलों पर आधारित था जिन्होंने मंगोल कबायली नाम जैसे कूनगिरात, नियात, मंगत आदि स्वीकार कर लिए थे। इन नामों के अवशेष उज़बेकों, कज़ाखों और कराकल्पाकों में रह गये हैं, मगर इस से उनका मंगोलों से उत्पन्न होना कोई ज़रूर नहीं। मंगोल विजेता आगामी में स्थानीय लोगों में घुल मिल गये और उन्होंने इसलाम धर्म और तुर्की भाषा दोनों को स्वीकार कर लिया।

१४वीं सदी में बर्लास के मंगोल कबीले में, जिसपर तुर्की प्रभाव पड़ा था, महान विजेता तैमूर का जन्म हुआ जिसने ३८ वर्षों के लगातार अभियानों के बाद एक राज्य स्थापित किया, जो भारत से वोल्गा तक और शाम (सीरिया) से चीन तक फैला हुआ था। तैमूर भारत, ईरान और शाम से कलाकारों और वास्तुशिल्पियों को दास बनाकर साथ ले आया जिन्होंने समरकन्द में बीबी खानम की मसजिद और गुर अमीर के मकबरे का निर्माण किया। उसका पोता उलुग बेग विज्ञान का बडा प्रेमी था और उसी के शासन-काल में समरकन्द के मदरसे में प्रख्यात विद्वानों का

पाठ्यक्रम होने लगा। आगे चलकर हेरात और समरकन्द विज्ञान और विद्या के दो बड़े केन्द्र बन गये। उलुग बेग ने समरकन्द में एक खगोलीय वेधशाला का निर्माण कराया। उसका नाम काजी जादा रूमी गियासुद्दीन जमशेद और अली कुश्ची जैसे प्रसिद्ध खगोलविदों के साथ सम्बद्ध है। उसकी खगोलीय सारणियाँ अपनी सूक्ष्मता के लिए अद्भुत हैं। उलुग बेग की दुखांत मृत्यु धर्मोन्मत्त मुल्लाओं के हाथों से हुई।

१५वीं सदी के उत्तरार्द्ध में हेरात तैमूरी राज्य का केन्द्र बन गया। प्रसिद्ध उज़्बेक कवि अलीशेर नवाई यहीं रहते थे। उनकी कृतियों में पुरानी उज़्बेक भाषा अपनी शुद्धता के चरम बिंदु पर पहुँच गई। उनकी गज़लों के "चार दीवान", 'खमसा" तथा उनकी अन्य कृतियाँ मध्य एशिया तथा विश्व साहित्य की बहुमूल्य देन हैं। उनका संघर्ष अधार्मिक विद्या शिक्षण तथा जीवन को सुखी बनाने के लिए था। उनके समकालीन व्यक्तियों में हफीजी आब्रू, अब्दुर्रज्जाक समरकन्दी, मीरखान्द और खोंदमीर जैसे प्रतिष्ठित इतिहासकार थे जिनकी कृतियों से मध्य एशिया तथा अन्य देशों के राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक इतिहास पर रोशनी पड़ती है।

स्वर्ण ओर्दू का विघटन १४वीं सदी के अंत में शुरू हुआ। इससे मध्य एशिया और कज़ाखस्तान के लोगों के जातीय विकास पर असर पड़ा। १५वीं सदी में देश्ती किपचाक में नये शक्तिशाली कबायली संघ की उत्पत्ति हुई जिनमें से एक सिर-दरिया के निचले क्षेत्र में सफेद ओर्दू के इलाके में स्थित था। इस संघ में एक कबीला था जो १४वीं सदी में उज़्बेक के नाम से प्रसिद्ध हुआ। १५वीं सदी के अंत में इन स्तेपी कबीलों ने शैबानी खान के नेतृत्व में पतनोन्मुख तैमूरी राज्य को पराजित कर लिया। शैबानी खान के साथ जो उज़्बेक कबीले मध्य एशिया गये थे, वहीं बस गये और धीरे-धीरे तुर्क और ताजिक आबादी में घुल मिल गये। अब उज़्बेक शब्द का प्रयोग केवल आप्रवासियों के लिए ही नहीं बल्कि स्थानीय निवासियों के लिए भी किया जाने लगा। देश्ती किपचाक तुर्क कबीलों के मिल जाने के बाद उज़्बेक लोगों का जातीय निर्माण पूरा हो गया।

१५वीं सदी के मध्य में सामंती विघटन के कारण चू नदी के क्षेत्र

म छोटे छोटे प्रदेश स्थापित हुए, जो धीरे धीरे १६ वी सदी मे कजाख खानशाही के रूप मे विकसित हुए। इस से कजाख जातीय समूह का निर्माण पूरा हुआ। प्रारम्भ मे इस के निवासियो को उज्बक कजाख और बाद मे केवल कजाख कहा जाता था।

इस प्रकार १५ वी स १६ वी सदी तक विकसित सामतवाद की स्थितियो मे और दीर्घकालीन ऐतिहासिक विकास के फलस्वरूप मध्य एशिया तथा कजाखस्तान के सभी प्रधान जातीय समूहो का गठन हो चुका था।*

सदियो के दौरान मध्य एशिया के लोगो ने स्वय अपनी शानदार सस्कृति विकसित कर ली थी और कृषि, सिचाई, कला तथा दस्तकारी, यथार्थ विज्ञानो तथा साहित्य म और साथ ही युद्ध की कला मे मुख्य सफलताए प्राप्त कर ली थी, जो अन्य प्राचीन तथा मध्य युगीन सस्कृतिया की उपलब्धिया का मुकाबला कर सकती थी। मध्य एशिया के लोगो न भारत, चीन, मेसोपोटामिया और ईरान की सस्कृतिया स बहुत कुछ लिया और उसे स्वय अपनी सृजनात्मक प्रतिभा से और समृद्ध किया। उन्होने इन पडोसी देशो की सस्कृतियो को प्रभावित भी किया। चीनियो न अगूर की काश्त, रूमन उपजाना, जगी घोडे पालना और शीशे बनाना मध्य एशिया से सीखा। आज की मगोल और मचूरियाई लिपियो पर सोगदियान लिपि का असर आज भी बाकी है, जिसे उन लोगो ने प्राचीन समय म अपनाया था। यूरोप और एशिया ने युद्ध मे घुडसवार रिसाले का उपयोग मध्य एशिया से सीखा। कागज बनाने की कला चीन स यूरोप म इसी क्षेत्र से होकर पहुची। मध्य एशिया के वैज्ञानिको न अरब गणित शास्त्र तथा खगोल विद्या को विकसित किया जिसे आगे चलकर मध्ययुगीन यूरोप न अपनाया। मध्य एशिया के वास्तुशिल्प न भी पडोसी देशो के वास्तुशिल्प के विकास को प्रभावित किया।

मध्य एशिया की जातिया प्राचीन काल के विभिन्न कबीली समूहो का सम्मिश्रण है। उजबेको और ताजिको की रचना म सोगदियानो या हिन्दा

---

*स० 'मध्य एशिया और कजाखस्तान के जनगण', मास्को १९६२ खण्ड १ पृष्ठ ८१-१०३। (रूसी सस्करण)

है। तुर्कमानों, करावल्पाकों, कजाखों, उज्बेकों और किसी हद तक ताजिकों की रचना में शक और समागात अंश शामिल है। मध्य एशिया की अधिकांश जातियों की उत्पत्ति में, चाहे वे ईरानी भाषा बोलनेवाली हों या तुर्की, प्राचीन तुर्क कबीलों की भूमिका रही है। आगे चलकर उज्बेकों, कजाखों और किसी हद तक करावल्पाकों और अन्य लोगों के गठन में किपचाक अंश दाखिल हुआ। अतः मध्य एशिया की जातियां सभी एक दूसरे से संबद्ध हैं, उनमें पुराने नस्ली रिश्ते हैं। इसी कारण उनकी संस्कृति, अर्थतंत्र और जीवन पद्धति में अनेक बातें समान हैं। उनके समान ऐतिहासिक विकास तथा वदेशिक हमलावरों के खिलाफ संयुक्त संघर्ष ने एकता के इन रिश्तों को और सुदृढ़ बनाया है। परन्तु साथ ही यह बात नजरअन्दाज नहीं करनी चाहिए कि हर समूह ने अपनी अलग सांस्कृतिक विशेषताएं कायम रखी हैं जिनके आधार पर मध्य एशिया के विभिन्न जातीय समूहों का गठन हुआ। सर्व-ईरानवाद तथा सर्व-तुर्कवाद के समर्थक लेखक इन प्रभेदक विशेषताओं को कम करके आंकते या नजरअन्दाज करते हैं। सर्व-ईरानवाद की धारणा मध्य एशिया की जातियों के विशिष्ट ऐतिहासिक विकास की स्पष्ट उपेक्षा है तथा उनकी संस्कृति पर ईरानी कला और वास्तुशिल्प के प्रभाव और छाप को अनावश्यक तौर पर बढ़ा-चढ़ा कर पेश करना है। सर्व-तुर्कवाद को भी ऐतिहासिक यथार्थ से कोई लगाव नहीं है। यह विभिन्न तुर्की भाषाएं बोलनेवाली जातियों को मनमाने तौर पर एक इकाई में मिलाने का व्यर्थ प्रयास है, जो उनके स्वतंत्र ऐतिहासिक विकास की वास्तविकता को नजरअन्दाज करता है। ऐसे सिद्धान्त दूरवर्ती राजनीतिक कारणों से पेश किये जाते हैं।

मध्य एशिया की जातियां तीन सदियों के दौरान (१६ वीं सदी से १९ वीं सदी के मध्य तक) उज्बेक वंशों के खान शासन के अधीन रहीं। उसके बाद जारशाही के रूसी साम्राज्य ने उन्हें अपने अंदर मिला लिया। अगरचे कुछ समान बातें जैसे भाषा और संस्कृति पहले से मौजूद थीं और राष्ट्रीय चेतना की कोंपल फूटने लगी थी, खान शासन के अंतर्गत स्थिति ऐसी नहीं थी जिसमें और अधिक जातीय सुगठन हो सकता। ख्वारज्म शाहों के केन्द्रीकृत शासन के अंतर्गत जो प्रगतिशील विकास शुरू हुआ था

उसका मगोल आक्रमण ने अस्त व्यस्त कर दिया और तब स सामती विघटन का युग प्रारम्भ हुआ। सामती खान शासनो मे विभाजित मध्य एशिया सामाजिक आर्थिक तथा राजनीतिक विकास मे बहुत पिछड गया। खान शासित प्रदेशो म लगातार परस्पर युद्धो के कारण इसके अथतंत्र की जड कमजोर हो गइ। उत्पादन शक्तियो के विकास का नीचा स्तर, कृषि और दस्तकारी म गतिरोध न जातीय समूहो के गठन को नुकसान पहुचाया।

बुखारा खीवा और कोकान के उज्बेक खान शासनो की जातीय बनावट म विषमता थी। खीवा मे उज्बेक, तुकमान, कराकल्पाक और कज़ाख रहते थे। उज्बेक और बटे हुए थे, इनमे सात,* जो प्राचीन स्थानीय निवासियो की सतान थ, और देश्ती किपचाक उज्बेक थे जिनम अभी कबील और गिरोह की विशेषताए अब भी मौजूद थी। खीवा के खान तुकमानो और कराकल्पाको का उत्पीडन करते थे। उन्हे अनोपजाऊ जमीन पर बसाने, भारी कर लगाते, उनसे बेगार लेते और अनिवार्य सैनिक सेवा म भर्ती करते थे। उनके विद्रोहो को बडी बेरहमी से कुचल दिया जाता था। बुखारा के खानशाही मे सामती उज्बेक अभिजात वर्ग को विशेषाधिकार प्राप्त थ और वे ताजिको पर अत्याचार करते थे।

कुछ पश्चिमी लेखको का यह दावा कि मध्य एशिया की जातियो क गठन का विषमता की बात सब-तुर्कवाद का विरोध करने क लिए भाग तनकर सोवियत शासन द्वारा गढी गई है, तथ्यो का सवथा मिथ्या वर्णन है। १८४३ म ही न० खानिकोव न, जिन्हाने बुखारा की यात्रा की थी लिखा था कि वहा की खानशाही म सात बिलकुल विभिन्न समूह अपनी अपनी निजी पद्धति म जीवन व्यतीत करते थ और उनके एक म विलयन की कोई आशा नहा थी।† यहा की सामती लडाइयो के कारण जो मध्य

---

* 'सात' का शब्द जो १९१७ की क्रान्ति स पहले इस्तमाल किया जाता था, उज्बेको म कोई सबध नहा रखता। इससे जातीय उत्पत्ति का नहि सामाजिक अवस्था का सकेत होता था। इसका मतलब था 'शहरवासी' नागरिक और कभी-कभी 'व्यापारी' या सौदागर।—स०

† न० खानिकोव, 'बुखारा खानशाही का वर्णन', सेंट पीटर्सबर्ग, १८४३ पृष्ठ ७३ ७४। (रूसी संस्करण)

बहुत घट गई थी। अधार्मिक साहित्य लुप्त हो गया था और धम का बोल वाला था। मध्ययुगीन मध्य एशियाई खगानना गणितशास्त्रियो तथा चिकित्सा विज्ञानियो की शानदार उपलब्धिया भुला दी गई थी और प्राकृतिक विज्ञानो का अध्ययन पाप समझा जाने लगा था। सामाजिक जीवन पर इसलाम की सकीण रूढियो का प्रभुत्व जातीय चेतना के विकास म बाधक बना हुआ था। अनजाने अबाध लोग मुल्लाओ के धार्मिक प्रचार का शिकार थ जिसम तमाम मुसलमानो की मिथ्या एकता पर जोर दिया जाता था। इससे आगे चलकर सब इसलामवाद के समथको ने फायदा उठाना चाहा। इस तमाम असहनीय सामाजिक उत्पीडन और सास्कृतिक गतिरोध के बावजूद जनगण की सजनात्मक प्रतिभा ने कितने ही दीप्तिमान कवियो और प्रगतिशील विचारको को जन्म दिया जिन्होंने सामाजिक अन्याय और उत्पीडन का विरोध किया और कबायली परम्परा और धार्मिक विचारधारा स नाता तोड लिया। उनम उदाहरण के लिए अदभुत उज़बेक कवि तुर्दी (१७वी सदी के अत और १८वी क प्रारम्भ म) थ। उन्होंने केवल लडने का आवाहन ही नहीं किया, बल्कि स्वय बुखारा के सामती ज़ालिम सुबहान कुली खान के दुशासन के विरुद्ध जनगण के सशस्त्र सघष म भाग लिया। इस सघष म तुर्दी अलग अलग उज़बक कबीलो को एकताबद्ध करना चाहत थे। तुर्कमान कबीलो की एकता का ऐसा ही नारा महान तुर्कमान कवि और विचारक मखदुम कुली न दिया था।

उस ज़माने की प्रतिकूल स्थितियो के बावजूद मध्य एशिया की जातियो म से हर एक ने अपनी एक समान भाषा, जीवन पद्धति और सस्कृति विकसित कर ली थी। परन्तु उच्चतर अवस्था म उनका जातीय विकास उनके आर्थिक, राजनीतिक और सास्कृतिक पिछडेपन के कारण रुक गया था। मध्य एशिया और कजाखस्तान क जारशाही के रूसी साम्राज्य म मिल जाने के बाद ही वहा प्रारम्भिक पूजीवादी तत्वो की उत्पत्ति होने लगी। कुल मिलाकर पिछडे हुए खानशाहियो का अधिक विकसित रूस मे विलयन **वस्तुनिष्ठ दृष्टि से** प्रगतिशील कदम था। लगातार परस्पर लडाइयो के अत और पूजीवादी सबधो के प्रवेश न सामती गतिरोध को दूर करन

में सहायता की। रेलवे के निर्माण, व्यापार के विस्तार, और कपास जैसे विक्रेय कृषिक पैदावारों के विकास ने रूसी साम्राज्य के इस दूर स्थित इलाके को विश्व मंडी की मझधार में पहुंचा दिया। इस नये पूंजीवादी विकास के आधार पर मध्य एशिया के ये जातीय समूह पूंजीवादी जातियों में गठित होने लगे।*

परन्तु गठन की यह प्रक्रिया पूरी नहीं हो सकी और ज़ारशाही का सैनिक साम्राज्यवाद तथा औपनिवेशिक उत्पीडन की नीति इसमें बाधक हुई। इसकी पूर्ति पूंजीवाद के आधार पर नहीं बल्कि अक्तूबर समाजवादी क्रांति की विजय के बाद समाजवाद के आधार पर हुई। अक्तूबर क्रांति ने मध्य एशिया और कज़ाखस्तान की जातियों के लिए स्वतंत्र राष्ट्रीय विकास का रास्ता खोल दिया। सोवियत सरकार ने १९२४ में जातीय राज्य सीमाओं का निर्धारण किया जिससे मध्य एशिया के जनगण को अपने जातीय गठन के प्रयास में सहायता मिली। जातीय जनतंत्रों के निर्माण से उनकी सांस्कृतिक और आर्थिक उन्नति तेज़ी से हुई। जैसा कि ऊपर कहा गया, इन लोगों का जातीय गठन वस्तुनिष्ठ ऐतिहासिक प्रक्रियाओं का नतीजा था और सोवियत जातीय जनतंत्रों के कृत्रिम निर्माण के आरोप जान-बूझकर गुमराह करने के लिए लगाये जाते हैं और उनके पीछे राजनीतिक उद्देश्य काम कर रहा है।

सोवियत सत्ता की स्थापना के बाद में मध्य एशिया में छह समाजवादी जातियों का गठन हो चुका था। वे हैं उज़बेक, कज़ाख, ताजिक, किरगिज़, तुर्कमान और कराकल्पाक। उज़बेकों की जन-संख्या ६०,१५,००० है और ये सोवियत संघ की चौथी बड़ी जाति है। इनमें ५६,७३,००० मध्य एशिया और कज़ाखस्तान में रहते हैं (५०,३८,००० उज़बेक सोवियत समाजवादी जनतंत्र में)। सोवियत संघ में कज़ाखों की कुल संख्या ३६,२२,००० है जिनमें २७,९४,००० अपने जातीय जनतंत्र, कज़ाख सो० स० जनतंत्र में रहते हैं। ताजिकों की कुल संख्या १३,९७,००० है जिनमें १०,५१,००० ताजिक सो० स० जनतंत्र में रहते हैं। पूरे सोवियत संघ

* पृष्ठ १२ की टिप्पणी।—सं०

मे तुर्कमानो की सख्या १०,०२,००० है जिनमे ६,२४,००० तुर्कमान सो० स० जनतत्र मे हैं। सोवियत सघ म किरगिजो की कुल सख्या ६,६६,००० है, जिनमे किरगिज़ सो० स० जनतत्र मे ८,३७,००० रहते है। कराकल्पाको की सख्या १,७३,००० है। इनका एक स्वायत्त जनतत्र उज्बेक सो० स० ज० के भीतर है जिसमे १,६८,००० कराकल्पाक है।

इन प्रधान जातियो के अलावा कई और छोटी जातिया भी है। इनमे ९५,००० उईगूर हैं (जो अधिकतर कजाख सो० स० ज० के अलमा अता क्षेत्र म और किरगिज़ सो० स० ज० की फरगाना घाटी मे रहते ह), २२,००० दूगान हैं, जो चीनी मुसलमान है, २,१२,००० कारियाई और ७,८०,००० तातार हैं (४,४५,००० उज्बेक सो० स० ज० मे और १,९२,००० कज़ाख सो० स० ज० मे रहते है)।

मध्य एशिया तथा कज़ाखस्तान की आबादी मे कुछ स्लाव भी ह। इन मे रूसी (६२,१५,०००), उक्रइनी (१०,३५,०००) और बेलोरूसी (१,०७,०००) हैं।

सोवियत मध्य एशिया के बाहर १२,००,००० उज्बेक और २६,००,००० से अधिक ताजिक अफगानिस्तान मे है। ६,५०,००० तुर्कमान ईरान, इराक और अफगानिस्तान मे हैं, और चीनी लोक जनतत्र मे सिक्याग मे ५,०९,००० कजाख, ७१,००० किरगिज, १४,००० उज्बेक और उतने ही ताजिक हैं।*

---

*ये सब आकडे १९५९ की जनगणना पर आधारित है। दे० "मध्य एशिया और कजाखस्तान के जनगण", मास्को, १९६२, खण्ड १, पष्ठ ११-१२। (रूसी सस्करण)

१९७० की जनगणना के अनुसार सोवियत सघ मे ९१ ९५,००० उज्बेक, ५२,९९,००० कज़ाख, २१,३६,००० ताजिक, १५,२५,००० तुकमान तथा १४,५२,००० किरगिज़ हैं। अत सोवियत सघ मे रूसियो तथा उक्रइनियो के बाद तीसरी सबसे बडी सख्या उज्बेको की है। दे० 'सोवियत सघ का अथतत्र, १९२२-१९७२', मास्को, १९७२, पृष्ठ ३१। (रूसी सस्करण)

दूसरा अध्याय

रूसी अधिकार से पहले

मध्य एशिया के खान शासन

रूस का अधिकार होने से पहले मध्य एशिया की भूमि पर तीन खान शासन थे। जरफशान नदी के क्षेत्र में बुखारा और निचली अमू दरिया पर खीवा कोकान से अधिक पुराने थे जिसकी स्थापना १८वीं सदी के अन्त में हुई थी। १९वीं सदी के शुरू में कोकान ने ताशकन्द पर कब्जा कर लिया जो महत्वपूर्ण राजनीतिक और व्यापार-केन्द्र था और जिसका अस्तित्व स्वतंत्र नगर-राज्य के रूप में था। उत्तर किरगिज और कजाख खानाबदोशों की लहर को रोकने के लिए कोकान खान शासन ने सिर दरिया, चू और ईली नदियों पर अनेक किलों का निर्माण किया।

कोकान खान शासन का संस्थापक मिन वंश का आलिम खान था। यह १७९८–१७९९ में अपने पिता नरबुता बि के बाद गद्दी पर बैठा, जो १७७४ से कोकान का बेग था। बुखारा खान शासन की स्थापना १७५३ में मंगित राजवंश ने की। पहले शासक स्वयं अपने को खान कहते न थे। उनमें हैदर (१८००–१८२६) पहला व्यक्ति था, जिसने अपने को अमीर कहलवाया। उसका उत्तराधिकारी नसरुल्ला एक अत्याचारी था, जिसकी नीति पड़ोसी खान शासनों पर कब्जा करने की थी। खीवा का खान शासन ख्वारज्म के पुराने राज का उत्तराधिकारी था।

१८वी सदी मे इसपर उज्बेक इनाकों या शक्तिशाली जागीरदारो का शासन था, जो चगेज़ खान की सतान खानो के अधीन शासन करते आ रह थे। इनाक इलतुजेर ने १९वी सदी के प्रारम्भ मे अपने को खीवा का खान घोषित किया और अपने वश की स्थापना की, जिसका शासन १९२० तक जारी रहा। १९वी सदी के उत्तरार्द्ध मे रूसी प्रभाव इस पूरे क्षेत्र मे फैल गया और जारशाही रूस सर्वोपरि सत्ता बन गया। कोकान के खान शासित क्षेत्र पर उसन कब्ज़ा कर लिया और बुखारा और खीवा का अपना अधीन राज्य बना लिया।

१९वी सदी के प्रारम्भ मे तीनो मध्य एशियाई खान शासित क्षेत्रा की जन सख्या ४० लाख थी, जो सदी के मध्य तक बढकर ५० लाख हो गयी थी। खान-शासित क्षेत्रा म बुखारा की आबादी सबसे अधिक, कोई ३० लाख थी, कोकान की १५ लाख, और खीवा की सबसे कम—केवल ५ लाख थी।* आबादी का बडा हिस्सा नखलिस्तानो और नदी घाटिया, खासकर सिर-दरिया, आमू दरिया, जरफशान, कशका दरिया और सुर्खान-दरिया की घाटिया मे और ताशकन्द, बुखारा, कोकान और समरकन्द जैसे बडे शहरो म बसा हुआ था। अर्द्ध रगिस्ताना, रेगिस्ताना और पहाडो म, जो मध्य एशिया के विशाल क्षेत्र मे फैले हुए थे, खानाबदोश कबीले आवारा घूमा करते थे।

तीना खान शासन आर्थिक दृष्टि स पिछडे सामती राज्य थे, जिनमे दास प्रथा के अवशेष चले आ रहे थे।

रूस, पारस तथा अन्य पडोसी देशो से पकड कर लाये हुए गुलामो का व्यापार वहा हुआ करता था। तुर्कमान, कज़ाख और किरगिज़ खाना-बदाशा मे कबीला जिरगा व्यवस्था के प्रबल अवशेष थे। लोगो का मुख्य पेशा पशुपालन और बागबानी था। कपास की उपज बहुत कम थी और जा थी भी, वह बहुत घटिया किस्म की थी। शहर दस्तकारी और व्यापार

---

*न० अ० खालफिन, "मध्य एशिया म रूस की नीति", मास्को, १९६०, पृष्ठ १९ तथा उसी लेखक द्वारा "रूस द्वारा मध्य एशिया का समामेलन", मास्को, १९६५, पृष्ठ ५२। (रूसी सस्करण)

का केंद्र थे। बुखारा, कोकान, ताशकन्द और समरकन्द के दस्तकारों का बनाया हुआ सूती और रेशमी कपड़ा पूर्व के विभिन्न देशों तथा रूसी साम्राज्य में भी बिका करता था। प्राकृतिक साधनों की बहुतायत थी, मगर बहुमूल्य खनिज पदार्थ छोटे पैमाने पर निकाले जाते थे और इसी कारण उनकी लागत रूस से आयात किये हुए खनिज पदार्थों से अधिक होती थी।

करों का बोझ भारी था और अधिकतर जिन्स के रूप में वसूल किये जाते थे जिसका मुद्रा-माल सबंधों के विकास पर बुरा असर पड़ता था। सामंती उत्पीड़न और साहूकारों की लूट-खसोट के कारण दस्तकारी और कृषि की उन्नति रुकी हुई थी। सामंती विखंडन, लगातार परस्पर युद्ध तथा विभिन्न जातीय समूहों के आपसी संघर्ष से खान-शासित क्षेत्रों का आर्थिक विकास अवरुद्ध हो चुका था।

अमीरों और खानों, बेकों, बाइयों और बीओं* द्वारा भारी शोषण के विरुद्ध सभी जातीय समूहों के देहकानों का वर्ग-संघर्ष सामंतविरोधी जन विद्रोहों के रूप में उभर पड़ा, जो १९वीं सदी के पूर्वार्द्ध की आम विशेषता थी। ऐसे सामंतविरोधी आन्दोलनों में १८२१ १८२५ में किताई किपचाकों (बुखारा के एक उज़बेक कबीले) १८२६ में समरकन्द के दरवेशों, १८२७ और १८५५ १८५६ में खीवा के गरीब शहरियों और किसानों, १८१४ में ताशकन्द के विद्रोह तथा १८४६ १८५८ में दक्षिणी कज़ाखस्तान में इसी प्रकार के विद्रोह विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।** प्रजा पर वसूली और कोकान के अधिकारियों, खासकर ताशकन्द बेकों के अत्याचार के कारण कज़ाख कबीलों ने विद्रोह किया और १८५८ में तुर्किस्तान शहर पर चढ़ दौड़े। रूसी यात्री न० अ० सेवेर्त्सोव ने, जिस

---

*बेक—सूबे के सामंती गवर्नर। बाई—धनी ज़मींदार या मवेशियों के स्वामी। बी—कबीले या जिरगे का सरदार।—स०

**प० प० इवानोव, मध्य एशिया के इतिहास पर लेख (१६वीं सदी से १९वीं सदी के मध्य तक)", मास्को, १९५८, पृष्ठ १३५-१३६ १६७ २००, २१२। (रूसी संस्करण)

कोकान सिपाहियो ने पकड लिया था, इस उपद्रव को अपनी आखो देखा और ब्योरेवार इसके कारणो का वणन किया है।* सभी रूसी यात्री इस बात पर सहमत थे कि खान-शासित क्षेत्रो के लोगो मे बडा असतोष था, जिसका कारण सामती उत्पीडन की असहनीय स्थिति थी।** उनकी शहादत से ब्रिटिश लेखक जे० ह्वीलर का दावा कि खान शासनो मे व्यापारिक जीवन मे "बडी सरगर्मी" थी, झूठा साबित हो जाता है। उसका उद्देश्य ज़ारशाही रूस द्वारा मध्य एशिया पर कब्ज़े के वस्तुनिष्ठ प्रगतिशील पहलू से इनकार करना है।*** प० इ० नेबोलसिन ने १४ नवम्बर, १८५० को ओरेनबुग से लिखा था कि खान शासित क्षेत्रो के लोग अत्यत गरीब और उत्पीडित हैं, और धनी व्यापारी अधिकारियो की लूट-खसोट से बचने के लिए अपना धन छिपा कर रखते है।****

---

*न० अ० सेवेर्त्सोव, "एक महीने तक कोकान का कैदी"—'रूस्स्कोये स्लोवो', अक १०, पष्ठ २६०–२६२। (रूसी सस्करण)

**दे० न० मुराव्योव, "१८१६–१८२० मे तुर्कमानिस्तान और खीवा की यात्रा", मास्को, १८२२, पष्ठ १०१, अ० चेरन्यायेवा, "मध्य एशिया की चेरयायेव की यात्रा, १८५७–१८५६"—'इस्तोरीचेस्की वेस्तनिक', जून १६१५, पष्ठ ८४४, व० व० वेत्यामीनोव-ज़ेर्नोव, "कोकान खानशाही के बारे मे कुछ तथ्य"—'वेस्तनिक रूस्स्कोगो गेओग्राफीचेस्कोगो ओब्श्चेस्त्वा', १८५६, भाग १, पष्ठ ११३–११५, न० ग० ज़लसोव, "१८५८ मे खीवा तथा बुखारा मे कनल इग्नात्येव का मिशन"—'रूस्की वेस्तनिक', अक २–३, १८७१, पृष्ठ ५६ म० इ० इवानिन, "खीवा तथा आमू-दरिया"—'मोस्कोंई स्वोनिक', अक ८–६, १८६४, पृष्ठ १६६। (रूसी सस्करण)

***दे० G Wheeler, *The Modern History of Soviet Central Asia* London, 1964 pp 44 47

****प० इ० नेवोलसिन, "मध्य एशिया से रूस के व्यापार के बारे मे लेख"—'ज़पीस्की रूस्स्कोगो गेओग्राफीचेस्कोगो ओब्श्चेस्त्वा', पुस्तक १०, मास्को, १८६५, पृष्ठ १५। (रूसी सस्करण)

रूस और मध्य एशिया

खान शासित क्षेत्रों और रूस के बीच व्यापार और राजनयिक संबंध कमोबेश नियमित रूप से थे। १६वीं सदी के उत्तरार्द्ध में रूस से आठ प्रतिनिधि दल मध्य एशिया आये, १७वीं सदी में खीवा से बारह और बुखारा से तेरह प्रतिनिधि दल रूस आये। रूसी दल इस इलाके के बारे में बहुमूल्य सूचनाएं ले गये। रूस और मध्य एशिया के संबंध केवल प्रतिनिधियों के आदान प्रदान और तिजारती काफिलों तक ही सीमित नहीं थे। १७वीं सदी में बुखारा और ताशकन्द के उज्बेक बड़ी संख्या में साइबेरिया में बस गये। इनमें व्यापारी किसान और कारीगर थे। रूसी सरकार ने उन्हें आरनबुग, आस्त्राखां और बाश्कीर इलाकों में कई सुविधाएं दीं।*

ये संबंध १८वीं सदी में और सबल हुए, जब लघु और मध्य कज़ाख ओर्द की अपील पर कज़ाखस्तान का बड़ा भाग रूस में शामिल कर लिया गया। १९वीं सदी में रूस और मध्य एशिया के आर्थिक संबंधों में नया विस्तार पैदा हुआ। अगर १९वीं सदी के प्रारम्भ में रूस से सालाना निर्यात १० लाख रूबल का होता था, तो १८२८ में वह बढ़कर ४० लाख रूबल तक और सदी के मध्य में डेढ़ करोड़ रूबल तक पहुंच गया। मध्य एशिया से सामानों का आयात भी इसी के अनुकूल बढ़ा। उनका मूल्य इस अवधि में २० लाख से बढ़कर एक करोड़ रूबल तक पहुंच गया।** केवल एक दशक (१८४०-१८५०) में व्यापार में ६० प्रतिशत वृद्धि हुई।

१९वीं सदी का पूर्वार्द्ध रूस के आर्थिक जीवन में बड़े महत्व का ज़माना था। पुरानी सामन्ती भूदास प्रथा पर आधारित अर्थतंत्र का विघटन हो रहा था और उसका स्थान नये पूंजीवादी संबंध ले रहे थे। पुराना किसान-कारीगर अर्थतंत्र तेज़ी से माल उत्पादन स्वरूप धारण कर रहा था और कारखानों की संख्या बराबर बढ़ रही थी। १८०४-१८२५

---

* 'मध्य एशिया और कज़ाखस्तान के जनगण' खण्ड १, पृष्ठ ६८।

** स० रजाकोव 'रूस द्वारा मध्य एशिया का समामेलन'—'रूस में मध्य एशिया के समामेलन के प्रगतिशील महत्व के विषय पर वैज्ञानिक अधिवेशन के लेख', ताशकन्द १९५९ पृष्ठ १२। (रूसी संस्करण)

के वीच रूस मे औद्योगिक उद्यमो की सख्या २४०२ से बढकर ५२६१ हुई और १८६० म १५,३८८ तक पहुच गई। १८०४ म केवल ९५२ हजार मजदूर औद्योगिक उद्यमो म काम करते थे, १८२५ म उनकी सख्या २१० ६ हजार और १८६० म ६५६ १ हजार तक पहुच गई थी।*

रूस म पूजीवाद के तीव्र विकास के इस दौर म मडी की समस्या बहुत महत्वपूर्ण हो गई। अदरूनी मडी छोटी थी और १९वी सदी के चौथे दशक स रूस के सूती कपडे का निर्यात तेजी से कम होने लगा। छठे दशक तक मशीन निर्मित सस्ते ब्रिटिश और जर्मन सूती कपडे ने रूसी कपडे को सयुक्त राज्य अमरीका की मडिया स बाहर निकाल कर दिया। और इसके अलावा सयुक्त राज्य अमरीका स्वय अपनी फैक्टरिया खडी कर रहा था। ब्रिटेन और स्वीडन की कडी प्रतियोगिता के कारण धातु निर्यात भी कम हो गया था। ऐसी स्थिति म रूसी औद्योगिक हल्के इस बात पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने लगे कि वाहरी मडी के रूप म मध्य एशिया पर कब्जा करे। अत हम अ० सेम्योनोव को मध्य एशिया मे रूसी सूती कपडे, रेशम और लाहे के सामान के लिए व्यापक मडी प्राप्त करने की सिफारिश करते हुए पाते हैं।**

जार निकोलाई प्रथम ने १८३६ मे ही एशिया से रूस के व्यापार सबधो के बारे म विभिन्न सुझावो पर विचार करने के लिए एक विशेष समिति नियुक्त की थी। इसके सदस्या मे वैदेशिक मामला, युद्ध और वित्त-मत्रि तथा विभिन्न सरकारी विभागो के प्रधान थे। उसी साल अ० इ० वेरीगिन ने खान शासनो स गहरे आर्थिक सबध कायम करने की माग की जहा रूस को अन्य यूरोपीय शक्तियो द्वारा प्रतियोगिता का सामना नही करना था।*** मध्य एशिया से रूस के व्यापार के महत्व पर व्यापार

---

*प० इ० ल्याश्चेको, "सोवियत सघ के अर्थतत्र का इतिहास", मास्को, १९४७ खण्ड १ पृष्ठ ५३५। (रूसी सस्करण)

**अ० सेम्योनोव, '१७वी शताब्दी के मध्य से १८५८ तक रूस के विदेश व्यापार तथा उद्योग के बारे मे ऐतिहासिक सूचनाओ का अध्ययन', सट पीटर्सबर्ग, १८५९, भाग ३, पृष्ठ ७२। (रूसी सस्करण)

***न० अ० खालफिन, "रूस द्वारा मध्य एशिया का समामेलन', पृष्ठ ६६।

सम्बधी पत्रिकाओं और औद्योगिक हल्कों मे जोर दिया जाने लगा। ग० ई० दानिलेम्स्की ने भी, जिन्होंने १८८२ मे खीवा की यात्रा की, मध्य एशिया के साथ रूस के व्यापार को विकसित करने के सुझाव का समर्थन किया। १८४६ म चिखाचोव नामी प्रमुख भूगोलविद और यात्री ने रूसी साम्राज्य के लिए मध्य एशिया के साथ व्यापार के महत्त्व की ओर ध्यान आकृष्ट किया। उनके ख्याल म इस इलाके के साथ रूसी व्यापार वढाने के पक्ष मे आग्ल अमरीकी प्रतियोगिता की अनुपस्थिति थी। उनका समर्थन उनके समकालीन य० व० खानिकोव ने किया। मध्य एशिया के साथ रूसी साम्राज्य के आर्थिक सबधो के विकास का एक कार्यक्रम प० इ० नेवालस्कि न तयार किया था। वह रूसी भौगोलिक समाज की ओर से व्यापार सबधी सूचना जमा करने १८५० म ओरेनबुर्ग और कास्पियन क्षेत्र म गये। उक्त समाज के एक नेता मुराव्योव के नाम अपने एक पत्र म उन्होंने मध्य एशिया म सक्रिय नीति अपनाने का समर्थन किया। इसी के साथ उन्होंने यह सुझाव भी रखा कि आमू और सिर दरियाओ का रुख कास्पियन सागर की तरफ मोड दिया जाये, ताकि मध्य एशिया से व्यापार की सम्भावना बढाई जा सके। यद्यपि यह सुझाव उस समय के लिए अव्यावहारिक था, परन्तु इससे यह तो अन्दाजा होता है कि मध्य एशिया के साथ व्यापार के विकास को उन दिनों कितना महत्त्व दिया जा रहा था।

यद्यपि १९वी सदी के छठे दशक तक रूस के पूरे वैदेशिक व्यापार म मध्य एशिया के व्यापार का अनुपात बहुत कम था (२ ५ प्रतिशत से शायद ही कुछ ज्यादा हो) *मगर इसम वृद्धि की सम्भावनाए उज्ज्वल थी।

मध्य एशिया मे
अग्रेजों के मनसूबे

मध्य एशिया का ब्रिटिश साम्राज्य के आर्थिक विस्तार का ही रहा, बल्कि उसे शक्ति तथा राजनीतिक युद्धपीठ का भी निशाना बनाया गया।

---

* न० अ० खाल्फिन, उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ ७०।

ब्रिटिश औपनिवेशिक हल्के अपने निर्मित सामानों के लिए बड़ी मंडियों की खातिर और आसानी से कच्चा माल प्राप्त करने के लिए अपने औपनिवेशिक इलाकों में विस्तार करने के इच्छुक थे। पूर्वी देशों के पिछड़ेपन के कारण उन्हें इस काम में आसानी हुई। इस उद्देश्य से अंग्रेजों ने एशियाई राज्यों के विरुद्ध अनेक औपनिवेशिक लड़ाइयां लड़ीं।

मध्य एशिया में ब्रिटेन के विस्तारवादी उद्देश्य १८१२ में ही प्रकट हो चुके थे, जब ईस्ट इंडिया कम्पनी के एक वरिष्ठ अधिकारी विलियम मूरक्राफ्ट ने विशिष्ट रूप से प्रशिक्षित एजेंटों का एक दल मध्य एशिया भेजा। मीर इज्ज़त-उल्ला ने इस क्षेत्र की विस्तारपूर्वक यात्रा की और जासूसी का काम किया। उसने अटक से कश्मीर, तिब्बत, यारकन्द, काशगर, कोकान, समरकन्द, बुखारा, बल्ख, खुल्मा, बामियां और काबुल तक लम्बा फासला तय किया। उसने बुखारा अमीर शासन का ब्योरेवार वर्णन किया जिसमें अधिकारियों की संख्या तक लिखी थी और दक्षिणी तुर्किस्तान में खुल्मा के शासक किलिच अली बेग से बातचीत में अंग्रेजों के समर्थन में प्रचार किया।* इस तरह बड़ी होशियारी के साथ मध्य एशिया में अंग्रेजों के औपनिवेशिक विस्तार के लिए ज़मीन तैयार की जा रही थी। बाद में १८१९-१८२५ में मूरक्राफ्ट और जार्ज ट्रेबेक ने कम्पनी की सेना के लिए घोड़े खरीदने के बहाने बुखारा की स्थिति की एक और जांच पड़ताल की।

चौथे दशक के प्रारम्भ में अलेक्सांद्र बर्न्स नामक एक अंग्रेज गुप्तचर अधिकारी एक अभियान दल लेकर बुखारा पहुंचा। उसने सैनिक तथा सामाजिक राजनीतिक सूचना जमा की जिसकी ज़रूरत अंग्रेजों को मध्य एशिया में अपनी अपहारक योजना के लिए थी। उसके साथ इस यात्रा में एक कश्मीरी पंडित मोहन लाल भी थे। बर्न्स दल का मुख्य उद्देश्य राजनीतिक तथा सैनिक सूचना प्राप्त करना था। यह बात मोहन लाल के अपने "सफरनामे" के बयान से स्पष्ट है। मोहन लाल का विचार

---

* *Travels in Central Asia by Meer Izzut Oollah in the Years 1812 13*, Calcutta, 1872 pp 58—75 93

या कि बुखारा के साथ अंग्रेजों के "व्यापारिक या राजनीतिक" संबंध स्थापित करने के लिए वातावरण बहुत अनुकूल था। उन्होंने सुझाव दिया कि इसमें "देर नहीं करनी चाहिए", क्योंकि "कोई शक्ति हमारे (अंग्रेजों के) इरादों का इस समय पहले से अंदाजा नहीं कर सकेगी"।* मोहन लाल ने बुखारा की सैनिक शक्ति के बारे में काफी ब्योरेवार सूचना इकट्ठा की। बुखारा में मूरक्राफ्ट के मिशन के गैर-सरकारी स्वरूप पर अक्सर जोर दिया जाता है। कहा जाता है कि उसकी बुखारा यात्रा की सम्मति भारत सरकार ने अनिच्छापूर्वक दी थी और गवर्नर-जनरल ने उसे कोई राजनीतिक सत्ता देने से इनकार कर दिया था। परन्तु मूरक्राफ्ट जितने दिनों इस यात्रा में रहे उन्हें इसकी तनखाह दी गई और कागजात को सरकार की सम्पत्ति माना गया।** जब कुन्दुज सरदार ने कहा कि "अंग्रेजी सरकार ने भारत से तुर्किस्तान तक हर बड़े शहर में अपने जासूसों का जाल बिछा रखा है" और कई आदमियों का नाम लिया, जो यह काम करते थे, तो मूरक्राफ्ट ने इससे इनकार नहीं किया बल्कि उसकी कैफियत यह कहकर पेश की कि "इसकी जरूरत खास के बादशाह के इरादों का भंग करने के लिए पड़ी है जिन्होंने यह घोषणा की है कि वह ब्रिटिश भारत पर आक्रमण करने का इरादा रखता है। इसी कारण उसकी गतिविधि की खबर रखना उस देश की सरकार के लिए जरूरी हो गया।"*** घोड़े खरीदने की बात जासूसी के लिए बहाना मात्र थी। यह इससे भी स्पष्ट होता है कि आगे चलकर अफगान सीमा कमीशन

---

* Mohan Lal *Travels in the Punjab Afghanistan and Turkestan to Balkh Bokhara and Herat and a Visit to Great Britain and Germany* London 1846 pp 150—151

** Horace Hayman Wilson *Travels in the Himalayan Provinces of Hindustan and the Punjab by Mr William Moorcroft and Mr George Trebeck from 1819 to 1825* prepared for the press from original journals and correspondence Vol I London p XXVI

*** वही, भाग २, पृष्ठ ६३२–६३३।

के अंग्रेज़ सदस्यों ने बहुत कम घोड़े खरीदे और कर्नल रिजवे ने जिन्हें भारत सरकार द्वारा 'प्रथम श्रेणी के तुर्कमान घोड़े नस्ल बढ़ाने के उद्देश्य से खरीदने पर ३०० पाउंड खर्च करने का अधिकार दिया गया था, एक पेनी भी खर्च नहीं किया"।* घोड़े किसी काम के नहीं पाये गये।

१८३८ में हेरात अंग्रेज़ी जासूसी और विध्वंसी कार्रवाइयों का केंद्र बन गया जिनका निर्देशन मेजर ट'आरसी टाड कर रहा था। कर्नल स्टाडडार्ट को तेहरान की ब्रिटिश कौंसलेट से बुखारा भेजा गया। दूसरे जासूस हेरात से खीवा और कोकन्द भेजे गये। १८३९ में मेजर टाड ने एक व्यक्ति मुल्ला हुसैन को खीवा भेजा जिसने खान को एक राइफल भेंट की। शीघ्र ही कप्तान जेम्स ऐबट भी उसके पीछे पीछे वहां पहुंचा।

१ मई १८४० को जब वह नोवो अलेक्सान्द्रोव्स्क के निकट सड़कों और किलों की छान-बीन कर रहा था रूसियों ने उसे पकड़ लिया। गिरफ्तार होने पर उसने यह ज़ाहिर किया कि वह खान का आदमी है और इसके सबूत में एक जाली दस्तावेज़ भी पेश की। उसे ओरेनबुर्ग और वहां से सेंट पीटर्सबर्ग ले जाया गया। वहां से उसे लन्दन भेज दिया गया। जब ऐबट के मिशन को अपना उद्देश्य पूरा करने, यानी रूस और खीवा को लड़ाने में सफलता नहीं मिली, तो रिचमंड शेक्सपियर को वहां विध्वंसक कार्रवाई के लिए भेजा गया। सोवियत इतिहासकार खालफिन के अनुसार सोवियत केंद्रीय राज्य अभिलेखागार में शेक्सपियर के जो कागज सुरक्षित रखे गये हैं, उनसे स्पष्ट है कि "भारत की सुरक्षा" करने के बहाने कुछ नयी "प्रतिरक्षात्मक" कार्रवाइयों की योजना बनायी जा रही थी। अपने साम्राज्य के विस्तार के लिए अंग्रेज़ों को यह बहाना बहुत पसंद था। वास्तव में इसका उद्देश्य दक्षिण तुर्किस्तान के अर्द्ध स्वतंत्र राज्यों पर आसानी से कब्ज़ा करना था। खीवा से रूस जाने के लिए शेक्सपियर ने यह बहाना किया कि वह रूसी गुलामों के साथ जाना चाहता है।

---

* G N Curzon *Russia in Central Asia* London 1889 pp 130—131 see Lt A C Yate *Travels with the Afghan Boundary Commission*, 1887 p 457

था कि बुखारा के साथ अंग्रेजों के "व्यापारिक या राजनीतिक" संबंध स्थापित करने के लिए वातावरण बहुत अनुकूल था। उन्होंने सुझाव दिया कि इसमें "देर नहीं करनी चाहिए", क्योंकि "रूस शक्ति हमारे (अंग्रेजों के) इरादों को उस समय पहले से भांप कर नहीं कर सकेगा"।* मोहन लाल ने बुखारा की सैनिक शक्ति के बारे में काफी व्याख्यात्मक सूचना इकट्ठी की। बुखारा में मूरक्राफ्ट के मिशन के गैर-सरकारी स्वरूप पर अधिक जोर दिया जाता है। कहा जाता है कि उनकी बुखारा यात्रा को सम्मति भारत सरकार ने अनिच्छापूर्वक दी थी और गवर्नर-जनरल ने उसे बाद राजनीतिक सत्ता देने से इनकार कर दिया था। परन्तु मूरक्राफ्ट जितने दिनों इस यात्रा में रहे उन्हें इसकी तनख्वाह दी गई और कागजात को बंगाल सरकार की सम्पत्ति माना गया। "जब कुन्दुज सरदार ने कहा कि अंग्रेजी सरकार ने भारत से बुद्धिमान तथा हर बड़े शहर में अपने जासूसों का जाल बिछा रखा है" और कई आदमियों का नाम लिया, जो यह काम करते थे, तो मूरक्राफ्ट ने इससे इनकार नहीं किया बल्कि उसकी कैफियत यह कहकर पेश की कि 'इसकी जरूरत फारस के बादशाह के इरादों को भंग करने के लिए पड़ी है जिन्होंने यह घोषणा की है कि वह ब्रिटिश भारत पर आक्रमण करने का इरादा रखता है। इसी कारण उसकी गतिविधि की खबर रखना उस देश की सरकार के लिए जरूरी हो गया"।*** घोड़े खरीदने की बात जासूसी के लिए बहाना मात्र थी। यह इस से स्पष्ट होता है कि आगे चलकर अफगान सीमा कमीशन

---

* Mohan Lal *Travels in the Punjab Afghanistan and Turkestan to Balkh Bokhara and Herat and a Visit to Great Britain and Germany* London 1846 pp 150—151

** Horace Hayman Wilson *Travels in the Himalayan Provinces of Hindustan and the Punjab by Mr William Moorcraft and Mr George Trebeck from 1819 to 1825* prepared for the press from original journals and correspondence, Vol I London p XXVI

***वही खण्ड २, पृष्ठ ४७२–४७३।

के अग्रेज सदस्या ने वहुत कम घाडे खरीदे और कनल रिजवे ने, जिसे भारत सरकार द्वारा "प्रथम श्रेणी के तुर्कमान घोडे नस्ल बढान के उद्देश्य स खरीदने पर ३०० पाउड खच करन का अधिकार दिया गया था, एक पेनी भी खच नही किया '।* घोडे किसी काम क नही पाये गये।

१८३८ म हेरात अग्रेजी जासूसी और विध्वसी कारवाइया का केन्द्र बन गया, जिनका निदेशन मजर ड आरसी टाड कर रहा था। कनल स्टाडडाट को तेहरान की ब्रिटिश कासलेट स बुखारा भेजा गया। दूसरे जासूस हेरात स खीवा और कोकान भेजे गये। १८३६ म मजर टाड ने एक व्यक्ति मुल्ला हुसैन को खीवा भेजा जिसने खान का एक राइफल भेट की। शीघ्र ही कप्तान जम्स एवट भी उसक पीछे पीछे वहा पहुचा। मई १८४० का, जब वह नोवो अलक्सान्द्रोव्स्क के निकट सडका और किला की छान-बीन कर रहा था रूसिया न उस पकड लिया। गिरफ्तार होने पर उसने यह जाहिर किया कि वह खान का आदमी है और इसक सबूत म एक जाली दस्तावेज भी पेश की। उस ओरेनबुग और वहा स सेट पीटसबग ले जाया गया। वहा से उस लन्दन भेज दिया गया। जब ऐबट के मिशन को अपना उद्देश्य पूरा करने यानी रूस और खीवा का लडान मे सफलता नही मिली, तो रिचमड शेक्सपियर को वहा विध्वसक कारवाई के लिए भेजा गया। सोवियत इतिहासकार खालफिन क अनुसार सावियत केन्द्रीय राज्य अभिलखागार म शेक्सपियर के जो कागज सुरक्षित रखे गये है, उनसे स्पष्ट है कि "भारत की सुरक्षा" करन के बहाने कुछ नयी "प्रतिरक्षात्मक कारवाइया की याजना बनायी जा रही थी। अपन साम्राज्य क विस्तार के लिए अग्रेजो को यह बहाना बहुत पसद था। वास्तव म इसका उद्देश्य दक्षिण तुर्किस्तान के अर्द्ध स्वतत्र राज्या पर आसानी से कब्जा करना था। खीवा स रूस जान के लिए शेक्सपियर ने यह बहाना किया कि वह रूसी गुलामा के साथ जाना चाहता है।

---

* G N Curzon *Russia in Central Asia* London 1889 pp 130—131 see Lt A C Yate *Travels with the Afghan Boundary Commission* 1887 p 457

सितम्बर १८४० म वह ग्रारेनबुग पहुचा, मगर उसे निगरानी म रखा गया और लन्दन भेज दिया गया।*

रालिनसन का कहना है कि जेम्स ऐवट को हरात म अग्रजा दूत मेजर टाड न खीवा रवाना किया था। ऐवट ने मैंनम और एलफिन्स्टन के समय के रिवाज के अनुसार गुलाम रखा कि रुसियो को इन इलाका से हमेशा के लिए निकाल बाहर करना चाहिए "और समान दुश्मन स नाता ताडने के लिए पुरस्कार के रूप म इगलैंड व साथ प्रतिरक्षात्मक आक्रामक सधि का प्रस्ताव रखा गया'। लेकिन रालिनसन का कहना है कि ऐसा करन का ऐवट का आदश नहीं दिया गया था। आदश म कवल रुसी गुलामो को मुक्त करन की बात थी।** वैम्बरी का कहना है कि अग्रेजा न तीन खानशामा के साथ रूस के खिलाफ "आक्रामक प्रतिरक्षात्मक सधि' करन की याजना बनाई थी।*** लेकिन उसकी राय मे दोष स्टाडडार्ट और कानाल्ली का था, जो इस उद्देश्य का प्राप्त करन के योग्य नही थे।

रालिनसन ने लिखा है कि चौथे दशक क अतिम वर्षों म अग्रेज "हिंदूकुश की उत्तरी ढलान पर सिगान पर कब्जा करने और आगे बुखारा तक बढन की तैयारी" कर रहे थे।**** लेकिन बहादुर अफगाना के कडे प्रतिरोध के कारण इस पर अमल नही किया जा सका। क्रीमियाई युद्ध के दौरान म इगलैंड ने जाजिया के रास्ते मध्य एशिया म एक बडी सेना भेजने की योजना बनायी थी। लेकिन चूकि वे "फ्रासीसी सहयोग पर भरोसा नही कर सकते थे', इसलिए इस योजना को त्यागना पडा।*****

*दे० न० ग्र० खालफिन का लेख '१९वी सदी के चौथे तथा पाचवे दशको मे मध्य एशिया मे अग्रेजो का विस्तार तथा रिचमड शेक्सपियर का मिशन"–'इस्तोरिया एस० एम० एस० एर०' १९५८, अक २। (रूसी सस्करण)

** H Rawlinson *England and Russia in the East* London 1875 pp 153—154

*** A Vambery *History of Bokhara* London, 1873 pp 384—388

****ह० रालिनसन, उपरोक्त पुस्तक, पष्ठ १५२।

*****वही, पष्ठ १८२–१८३।

की सहायता के लिए विशेष रूप से प्रशिक्षित भारतीय एजेंटो का एक दल बनाया गया था जिसमें प्रमुख थे पंडित मनफूल, फज़ मोहम्मद, भाई दावान सिंह और गुलाम रब्बानी। गुलाम रब्बानी की डायरी का अनुवाद पटियाला में पंजाब राजकीय अभिलेखागार में सुरक्षित है। यह बहुत दिलचस्प दस्तावेज़ है। गुलाम रब्बानी १० सितम्बर, १८६८ को पेशावर से रवाना हुआ और १८६७ के प्रारम्भ में लौटा। इस मुद्दत में उसने बुखारा, कोकान, खोजन्द, समरकन्द और ताशकन्द की यात्रा की। वह बुखारा में दो महीने आठ दिन रहा और वहां से फरवरी १८६६ में कोकान गया। वहां वह एक महीना रहा। बुखारा में उसने "बुखारा दरबार के सदस्यों से परिचय किया" और उसकी विस्तारपूर्ण रिपोर्ट लिखी।* अपनी रिपोर्ट में उसने आस-पास के इलाकों, शहर के परिवेश, इसके बारह दरवाज़ोंवाली दीवारों की चौड़ाई का ब्योरेवार वर्णन किया है। उसकी राय में ये 'सुरक्षा करने के योग्य नहीं थीं'। उसने यह भी लिखा कि "सेना में कोई अनुशासन नहीं और उसके पास २०० तोपें थीं, जो बिल्कुल बेकार थीं। उसने चिरागची और शहरिसब्ज़ (बुखारा में) के सैनिक उपकरण और प्रतिरक्षा-क्षमता तथा जिज़्ज़ाक के निकट रूसी किलाबन्दी के बारे में भी रिपोर्ट भेजी।** मुल्ला इवज़ मुहम्मद, मिर्ज़ा बाबा कितावगार और खबरनवीस मुहम्मद नियाज़ की सहायता से उसने खान खुदायार खान से भेंट की। कोकान से गुलाम रब्बानी ने ताशकन्द की तीन यात्राएं की जिनके दौरान उसने किलाबन्दी, जलागार आदि का ठीक-ठीक अध्ययन किया। उन्होंने नदियों के पानी के रंग तथा पत्थरों और खनिज पदार्थों की प्रकृति तक का उल्लेख किया। ताशकन्द पर रूसी कब्ज़े से व्यापारियों में आतंक फैला हुआ था। इससे फायदा उठाकर गुलाम रब्बानी ने उनकी जान और माल की सुरक्षा की गारंटी दिलाने के लिए रूसी जनरल चेरन्यायेव के पास जाकर कहने सुनने की तत्परता व्यक्त की। कोकान के व्यापारियों के

---

* *Travels in Central Asia* Punjab State Archives Patiala M/357/4386 p 23

**वही पृष्ठ २४।

लिए इस "मानवीय" सेवा का यह स्वेच्छापूर्ण प्रस्ताव भी दरअसल एक वहाना था, जसाकि पहल क अवसरा पर "घाडा की खरीदारी" और "रूसी गुलामा की मुक्ति" थी। इसका राजनीतिक उद्देश्य कुछ और था। गुलाम रब्बानी न अपनी डायरी म लिखा है 'इस (ताशकन्द) की यात्रा करके कोई अपनी जान का जाखिम म नहीं डालेगा, परन्तु लेखक के सामने एक उद्देश्य था (वल जाडा गया है) इसलिए उसने खुद इसकी इच्छा प्रकट की।'* उद्देश्य स्पष्ट हा जाता है, जब हम देखते हैं कि वह जनरल चेरन्यायव क साथ साथ ताशकन्द क पास चिरचिक ादी तक गया और उनकी गतिविधि पर नजर रखता रहा।

जब वह भारत लौटा, ता बुखारा दरबार का एक वकील उसक ाथ था। बल्ख म वह इस वकील का साथ लकर फैज माहद (एक दूसर अंग्रेज एजेंट) से मिला। और भाई दीवान सिंह क जल्दी बुलान पर बदखशान चला गया। वकील स्वय काबुल रवाना हुआ जहा रब्बानी वाद म आकर उसस मिला।

मध्य एशिया म अंग्रेजा क आक्रामक मनसूबा स रूसी शासक हल्का म काफी परशानी हुई। विकासमान पूजीवाद की जरूरता क हतु रूसिया ने शीघ्रतापूर्वक मध्य एशिया पर कब्जा कर लिया और इस तरह व अंग्रेजा पर बाजी ले गये।

*वही, पृष्ठ ३६–३७।

रूस द्वारा देशजय और आंग्ल-रूसी प्रतिद्वंद्विता

रूसी विस्तार

एशिया म रूस का विस्तार १६वी सदी म शुरू हुआ। मास्को महान राज्य ने मगोलो का जुआ उतार फेंकने के बाद तुरत ही एशिया पर धावा बोल दिया। १५५२ मे इवान भयानक ने कजान पर और १५५६ म वोल्गा के दहान म आस्त्राखा पर अधिकार कर लिया। सत्रहवी सदी के अत म रूसी प्रशात महासागर तक जा पहुचे। इस विस्तार का बीडा कज्जाको ने उठाया था। उन्ह आदिम कबीलो के प्रतिरोध का कम ही सामना करना पडा और थोडे ही दिनो म रूसी अधिवासियो की सख्या उनसे बढ गयी। साइबेरिया से दक्षिण की ओर बढाव अठारहवी सदी म शुरू हुआ, पहले स्तपी क्षेत्र मे और फिर तुर्किस्तान मे। यह कहा जा सकता है कि स्तेपी इलाके मे रूस का विस्तार १७३० म शुरू हुआ, जब लघु ओर्दु के खान, अबुल खैर ने रूसी नियत्रण स्वीकार कर लिया। खान प्रदेशो की ओर रूसियो का बढाव उन्नीसवी सदी के पूर्वार्द्ध म शुरू हुआ।

१८२४ म कास्पियन और अराल सागरो के वायुमडलीय दाब का अध्ययन करने के लिए एक "वैज्ञानिक' दल भेजा गया जिसके समर्थन के लिए कज्जाक पैदल सेना का आधा बटालियन और छह तोपें थी। १८३४ म कास्पियन सागर के उत्तरपूर्वी तट पर नावो अलेक्सान्द्रोव्स्क के किले मे एक सैनिक छावनी स्थापित की गई जिसका उद्देश्य खीवा से

व्यापार को बढ़ाना था। १८३९ म जनरल व० पेरोव्स्की के नेतृत्व म खीवा अभियान शुरू हुआ जिसम ५,००० सैनिक, २२ तोपें, १० ००० ऊट और २,००० किर्गिज़ कुली और ऊटवान थे। यह अभियान भी बेकाविच और मुराव्योव के अभियानो की तरह असफल रहा। केवल एक हज़ार सनिक किसी प्रकार लौट सके और बाकी असाधारण रूप स बडे जाड म मर गये। तुरत ही एक और अभियान की तैयारी शुरू हुई और खीवा के खान न इसकी सूचना पाकर शाति का आग्रह किया। उसने खीवा म सभी रूसी बन्दियो को रिहा कर दिया और अपनी प्रजा म उन लोगो को, जो रूसी व्यापारियो पर हमला करगे, मृत्यु-दड की धमकी दी। खीवा के साथ एक औपचारिक सधि पर हस्ताक्षर भी हुए, जिसके अनुसार खीवा ने वादा किया कि वह रूसियो पर हमला नही करेगा और उन्ह गुलाम बनाना बन्द कर देगा। मगर रूस के प्रति खीवा की शत्रुता जारी रही। खान न खुल्लम-खुल्ला कजाख विद्रोहियो का साथ दिया और उन्ह रूस के खिलाफ भडकाया।

रूसी सरकार ने अब मध्य एशियाई खान शासनो से अपने व्यवहार का तरीका बदल दिया। इसने रेगिस्तान के रास्ते सैनिक अभियान भेजने के बजाय, जिसम बार-बार असफल होना पडता था, धीरे धीरे, मगर नियमित रूप से बढने का निश्चय किया। १८४६ म ओरेनबुर्ग के गवरनर ने अराल सागर के निकट सिर-दरिया पर एक किले का निर्माण किया, जहा बढनेवाले रूसी दस्तो की सहायता के लिए एक जहाजी बेडा खडा था। उस समय तक केनिसारी के नेतत्व म कज़ाख विद्रोह कुचल दिया गया था। १८५३ मे जनरल पेरोव्स्की ने आक मस्जिद पर अधिकार कर लिया, जो कोकानवालो का एक किला था। यहा क्रीमियाई युद्ध के कारण रूसियो का आगे बढना कुछ अर्से के लिए रुक गया।

क्रीमियाई युद्ध मे ज़ारशाही रूस की हार के कारण बाल्कन और निकट पूर्व से रूस की दिलचस्पी का रुख सुदूर पूर्व और मध्य एशिया की ओर मुड गया। यूरोप म रूसी साम्राज्य का रास्ता, जैसा कार्ल मार्क्स न लिखा था, अब बन्द हो गया था। रूसी साम्राज्य के विदेश मत्री अ० गोर्चाकोव ने १८५८ म लदन स्थित रूसी राजदूत ब्रुन्नोव को आदेश

भेजे जिनसे यह नीति-परिवर्तन दिखायी देता है। विदेश मंत्री ने पूर्व में रूस के लिए कदम बढ़ाने की पूरी स्वतंत्रता प्राप्त करने की इच्छा पर बल दिया। ब्रिटेन से दृढ़तापूर्वक यह कह देना था कि अगर वह रूस के साथ शांतिपूर्वक रहना चाहता है, तो उसे पूर्व में रूस के हितों को उचित मान्यता देनी होगी। लंदन स्थित रूसी राजदूत के नाम आदेशों में यह निर्धारित कर दिया गया कि रूसी नीति का मुख्य उद्देश्य "एशिया में रूसी उद्योग, व्यापार और संस्कृति के प्रभाव को सबल बनाना था"।* जनवरी १८५६ में जनरल ब्लारम्बर्ग ने घोषणा की कि रूस का भविष्य यूरोप से संबंधित नहीं है और इसलिए उसे अपनी दिलचस्पी का रुख एशिया की ओर मोड़ना चाहिये। १८५७ में यू० अ० गागेमाइस्तर ने लिखा कि यूरोप की तुलना में एशिया के साथ रूस के व्यापार की वृद्धि की दर कहीं अधिक है और जहां निर्मित सामान यूरोप में उसके निर्यात का बहुत छोटा भाग था, वहां एशिया में वह उसके निर्यात का आधा था। उसने सिफारिश की कि आर्थिक कारणों से मध्य एशिया पर कब्जा कर लेना चाहिये। वह इलाका कपास की खेती के लिए बहुत अनुकूल है और सिर दरिया में ताशकन्द के निकट तक जहाजरानी हो सकती है।** मध्य एशिया पर रूस के कब्जे के आर्थिक परिणामों का विषय रूस के राजनीतिज्ञों, उद्योगपतियों, जनरलों और पत्रकारों में सर्वप्रिय था। रूसी साम्राज्य के वैदेशिक व्यापार और उद्योग के बारे में अ० सेम्योनोव की कृतियों और साथ ही वित्त मंत्री के सलाहकारों, यू० गागेमाइस्तर और फ० तेनर, प्रसिद्ध उद्योगपति और व्यापारी अ० शिपोव, प्राच्यवेत्ता ई० बेरेज़िन और व० ग्रिगोर्येव, यात्री-लेखक म० इवानिन की कृतियों ने रूस में मध्य एशिया के प्रति बड़ी दिलचस्पी पैदा की। "रूस्स्की वेस्तनिक", मोस्कोई स्वोनिक और "एकोनोमिचेस्की उकाज़ातेल" जैसी पत्रिकाओं

---

*व० नोल्दे, "बिस्मार्क का पीटर्सबर्ग मिशन, १८५९-१८६२", प्राग, १९२५, पृष्ठ ६४-६५ (रूसी संस्करण), न० अ० खालफिन, रूस द्वारा मध्य एशिया का सम्मेलन पृष्ठ ८३।

**य० अ० गागेमाइस्तर, 'रूस के उद्योग तथा व्यापार पर विचार", -'रूस्स्की वेस्तनिक', १८५७ अंक १ पृष्ठ ३८-३९।

न अनव पृष्ठ मध्य एशिया की गतिविधिया के बारे म दिये। अ० शिपोव ने रूस का कच्चे सामान, खासकर कपास के भावी प्रदाता के रूप मे मध्य एशिया की भूमिका पर जोर दिया।*

पूजीपति वग से गहरे सबध रखनेवाले शासक हल्का ने मध्य एशिया का रूसी साम्राज्य म मिला लेन के इस व्यापक आन्दोलन का समथन किया। १८५६ म काकेशियाई कमाडर अ० ई० वर्यातिन्स्की ने जार अलक्सान्द्र द्वितीय के सामन यह सुझाव पश किया कि कास्पियन से अराल सागर तक पुरान कारवान-पथ के बजाय रेलव का निर्माण किया जाये। वर्यातिन्स्की का ईरान म अग्रेजो की कारवाइया स चिन्ता हो गई थी और उनक सुझाव का उद्देश्य उनके प्रभाव का दूर करना था। इस सुझाव पर असाधारण समिति म विचार किया गया जिसने विदश मत्री गोर्चाकोव और जनरल परोव्स्की के विरोध के बावजूद उसे स्वीकार कर लिया। समिति न कास्पियन से अराल सागर तक और फिर उसको बढा कर आमू और सिर-दरिया तक सीधा सबध स्थापित करने की याजना स्वीकार कर ली, मगर उसका कार्यावयन अधिक अनुकूल समय तक के लिए स्थगित कर दिया।

क्रीमियाई युद्ध के पहले ही मध्य एशिया से व्यापार करनवाले औद्योगिक फम, व्यापारी कम्पनिया और परिवहन सगठन कायम होने लगे थे। सरकार ने मरकरी स्टीमर कम्पनी (१८४९ मे स्थापित) तथा वरानोव और येनिजारोव के व्यापार-गहा को प्रोत्साहन और समथन प्रदान किया। एक प्रमुख रूसी उद्योगपति कोकोरेव और सेवास्तोपोल के वीर ख्रुलोव ने कास्पियन मार्गो पर एक स्मरण-पत्र पेश किया और मध्य एशिया के खान शासित प्रदेशा से व्यापार के लिए उनके विशेष महत्त्व पर जोर दिया। ट्रासकास्पियन व्यापार सस्था २० लाख रूबल की पूजी स सगठित की गई। इसे वर्यातिन्स्की और ग्राड प्रिस कोसतातीन निकोलायविच का समथन प्राप्त था। १८५८ म बेनरदाकी ने क्रास्नोवोदस्क मे मछली पकडने का एक केद्र कायम करने का सुझाव पेश किया।

*अ० शिपोव, "सूती कपडे का उद्योग तथा रूस के लिए इसका महत्त्व", मास्का, १८५७–१८५८, पृष्ठ ४२। (रूसी सस्करण)

उन्होंने तुर्कमान कबीला से व्यापार करने का भी सुझाव रखा जिसे ओरेनबुर्ग के गवर्नर-जनरल ने स्वीकार कर लिया। लेकिन उस समय उसपर अमल नहीं किया जा सका।

गोचाकोव ने कोवालेव्स्की को वैदेशिक मामलों के मन्त्रालय में एशियाई विभाग का निदेशक नियुक्त किया। उनकी देखरेख में पड़ोसी देशों का सर्वव्यापी अध्ययन किया गया और मध्य एशिया में जारशाही रूस के विस्तार के लिए रास्ता साफ किया गया। १८५८ में व्यापारिक, राजनीतिक और गुप्तचर मंडल ईरान, मध्य एशिया के खान शासित प्रदेशों और काशगर में भेजे गये। तीनों रूसी मंडलों (जिनके प्रमुख नि० खानिकोव, न० इग्नात्येव और च० वलीखानोव थे) का रूप यद्यपि भिन्न था (खानिकोव "वैज्ञानिक" खोजयात्रा तथा इग्नात्येव सरकारी राजनयिक मंडल के नेता थे और वलीखानोव मुसलमान व्यापारी के रूप में गया था) मगर उनका उद्देश्य एक ही था—पड़ोसी देशों की राजनीतिक और आर्थिक स्थितियों का गहरा अध्ययन करना। इन मंडलों ने खुरासान, पूर्वी ईरान, मध्य एशिया के खान शासित प्रदेशों और पश्चिमी चीन के लोगों और साथ ही इन इलाकों में अंग्रेजों की घुसपैठ के बारे में बहुमूल्य सूचना जमा की। इसी के साथ उन्होंने वहां रूस का असर फैलाने का भी प्रयास किया। खीवा और बुखारा से इग्नात्येव के मिशन के लौट आने पर जारशाही सरकार ने मध्य एशिया में प्रत्यक्ष विस्तार की सक्रिय तैयारियां शुरू कीं। दोनों इग्नात्येव तथा ओरेनबुर्ग के गवर्नर जनरल कातेनिन पश्चिमी साइबेरिया लाइन को ओरेनबुर्ग की लाइन से मिला देने के समर्थक थे। १८६० में जारशाही सरकार ने इस्सीक-कूल और पिश्पक इलाके में गुप्तचर मंडल भेजे।* १८६१ में मेजर जनरल त्सिमेरमन ने कोकान खान शासित प्रदेश की स्थिति के बारे में रिपोर्ट भेजी। उन्होंने मध्य एशिया की मंडी में अधिक रूसी सामान के परिचलन के लिए खान प्रशासन पर अधिक दबाव डालने की सिफारिश की।

---

*न० अ० खालफिन, उपरोक्त पुस्तक पृष्ठ ११७–११८।

कोकान के खिलाफ जोरदार कारवाई के एक और प्रभावशाली समर्थक युद्ध मंत्री द० अ० मिल्यूतिन थे। वह ओरेनबुर्ग के गवरनर जनरल बेज़ाक की सलाह पर काम करते थे। बेज़ाक ने १८६१ में सिर-दरिया की लाइन की यात्रा की और यह राय बनायी कि ताशकन्द पर जितनी जल्दी हो सके कब्जा कर लेना चाहिए। उन्होंने सोचा कि इससे कोकान के साथ रूस की सीमा सुविधाजनक हो जायेगी और ताशकन्द पर कब्ज़ा होने से व्यापार को बढ़ाने में आसानी होगी। बुखारा, चीन और रूस के व्यापारी रास्ते ताशकन्द से होकर गुज़रते थे। इसलिए इस शहर पर रूस का कब्जा होने से इन देशों से, खासकर चीनी तुर्किस्तान से व्यापार में वृद्धि हो सकती थी और बुखारा पर उसका असर भी बढ़ सकता था।

वैदेशिक मामलों के मंत्रालय को भय था कि मध्य एशिया में अति सक्रिय नीति से ब्रिटेन की शत्रुता बढ़ जायेगी। लेकिन बेज़ाक का विचार था कि सिर-दरिया तक रूस का विस्तार होने से ब्रिटेन कोई असाधारण प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं करेगा, जो वह आमू-दरिया तक बढ़ने की सूरत में व्यक्त कर सकता है। यद्यपि ज़ार ने बेज़ाक के विचारों को स्वीकार किया, फिर भी केवल चार साल गुज़रने के बाद ही ताशकन्द को रूसी के नियंत्रण में लाया गया। अंत में ताशकन्द पर कब्ज़ा स्थानीय कमांडर जनरल चेरन्यायेव की फौरी कारवाई द्वारा हुआ, जो बड़ी हद तक अनाधिकृत थी।

अक्तूबर १८६४ में, ठीक उन्ही दिनों में, जब जनरल चेरन्यायेव ने ताशकन्द पर अपना पहला असफल हमला किया, इस कारवाई के औचित्य को इस बुनियाद पर स्पष्ट रूप में अस्वीकार कर दिया गया कि इससे अनिवार्यतः रूसी साम्राज्य सभी मध्य एशियाई झगड़ों में फंस जायेगा। लेकिन वैदेशिक कार्यालय के सरकारी स्मृति पत्र में, जहां "हमला करके रूसी प्रभाव की सीमाओं को फैलाने" की इच्छा से इनकार किया गया था, बहुत सी गोलमोल बातें भी कही गई थीं। अंत जहां १८६४ में ज़ार द्वारा स्वीकृत मध्य एशिया में कारवाइयों की योजना में इस बात पर ज़ोर दिया गया था कि मध्य एशिया में और अधिक आगे बढ़ने की प्रवृत्ति को रोकना ज़रूरी है, वहीं यह वक्तव्य भी दिया गया था कि पूरे

वाकान खान शासित प्रदेश पर अधिकार करना "अनिवाय" है। इसम "साम्राज्य के और अधिक विस्तार" के अनौचित्य की सारी बात बमानी होकर रह गई।

जब जून १८६५ मे चेरयायेव ने ताशकन्द पर कब्जा कर लिया, तो खालफिन के कथनानुसार वह ऐसा काम कर रहा था, "जो वास्तव म रूसी साम्राज्य की सरकार और सैनिक-सामती अभिजात वग तथा व्यापारी और औद्योगिक हल्का के विचारो के तदनुरूप था"। वह भलाभाति समझता था कि राजनयिक विभाग की यह अपील कि मध्य एशिया म विस्तार रोक दिया जाये, एक विशेष प्रकार की चाल थी, धोखे की टट्टी जो ब्रिटेन के विरोध के डर से खडी की जा रही थी। विस्तारवादी तत्वो को राजधानी म और स्वय उसके निकटतम साथियो म जो समथन प्राप्त था, उससे चेरयायेव ने लाभ उठाया। वह जानता था कि "उसको इस 'स्वतत्र' कारवाई के लिए उससे कोई पूछताछ नही की जायेगी, बल्कि उलटे उसे पदक और तरक्की मिलने का विश्वास था"।*

जब चेरयायेव ने ताशकन्द पर कब्जा किया, तो कुल २५ रूसी मारे गये और ८६ घायल हुए। विरोध बहुत सीमित था। पहले वदेशिक मामलो के मत्रालय ने इस बात से इनकार किया कि ताशकन्द को रूसी साम्राज्य मे मिला लेने की उसकी कोई इच्छा है। उसका विचार था कि ताशकन्द और उसके आस-पास के इलाके को एक अलहदा खान प्रशासन मे परिणत कर दिया जाये जिसपर जारशाही का पूरा नियत्रण हो और जो रूसी साम्राज्य और बुखारा के बीच मध्यवर्ती राज का काम करे। चेरन्यायेव ने इस राय का विरोध किया, मगर ओरेनबुग के नवनियुक्त गवरनर जनरल क्रिजानोव्स्की ने इसका समथन किया। ताशकन्द के लोगो से जब अपना खान चुनने को कहा गया तो उन्होने चेरयायेव के नाम वक्तव्य मे इस बात को ज्यादा पसन्द किया कि ताशकन्द की नागरिक सरकार चेरयायेव के हाथो मे रहे और धार्मिक और अदालती प्रशासन काजी

---

*न० अ० खालफिन, "मध्य एशिया मे रूस की नीति", पृष्ठ १७८-१७९।

कला, या धार्मिक कानून के सर्वोच्च न्यायाधीश के सुपुर्द कर दिया जाये जिसके लिए चेरन्यायेव की मजूरी जरूरी हो। अगस्त १८६६ मे ताशकन्द का रूस का अग घोषित कर दिया गया।

१८६७ म तुर्किस्तान के गवरनर जनरल का क्षेत्र स्थापित किया गया, जिसका प्रधान केन्द्र ताशकन्द था। जनरल क० प० काउफमन को पहला गवरनर-जनरल नियुक्त किया गया। मार्च १८६८ मे बुखारा के अमीर मुजफ्फरुद्दीन ने रूसियो के खिलाफ जेहाद का एलान कर दिया। जनरल काउफमन ने अप्रैल १८६८ म समरकन्द पर धावा बोल दिया और बुखारा की सेनाओ को पराजित करके २ मई को शहर मे प्रवेश किया। समरकन्द की पराजय से बुखारा की शान मिट्टी मे मिल गई और उसे एक सधि स्वीकार करनी पडी जिससे खान प्रशासन पराधीन हो गया।

१८६४ १८६८ के दौरान मे मध्य एशिया के दो सबसे बडी खान-शासित क्षेत्रो कोकान्द और बुखारा की बिल्कुल शिकस्त हो गई। राजनयिक कारणो से उनको मिला लेने का निश्चय उस समय नही किया गया। १८६८ मे कोकान्द के खान खुदायार खान और बुखारा के अमीर मुजफ्फरुद्दीन के साथ शाति-सधिया की गइ जिनके अनुसार उन्होने रूस द्वारा वास्तव मे जीती हुई भूमि छोड दी, अपनी पराधीन स्थिति स्वीकार की और रूसियों को अत्यत लाभदायक शर्तो पर व्यापार का अधिकार दिया।

कोकान्द की सधि से रूसी व्यापारियो को खान शासित प्रदेश के सभी शहरो म जाने, कारवान-सराये स्थापित करने और व्यापारिक प्रतिनिधि नियुक्त करने का अधिकार मिल गया। आयात कर के मामले म रूसी और मुसलमान व्यापारियो मे अतर मिटा देने का निश्चय किया गया और पडोसी राज्यो का जानेवाले रूसी कारवाना को बिना रोक-टोक आने जाने का अधिकार मिल गया। रूसियो को केवल २५ प्रतिशत महसूल देना था। उतना ही मुसलमान व्यापारी दिया करते थे। और इसके अलावा अन्य विदेशियो के मुकाबले म रूसियो को अधिक सुविधाए प्राप्त हुई। खान शासित प्रदेश का आधा इलाका हाथ से निकल गया और बाकी आधा रूस का सरक्षित क्षेत्र हो गया। बुखारा के साथ सधि पर अमीर न जून

१८६८ में हस्ताक्षर किये। इसके अनुसार समरकन्द, कत्ता-कुरगान और जरफशान का पूरा जिला रूसी साम्राज्य में मिला लिया गया और इसके अलावा पांच लाख रूबल का हरजाना देना पड़ा। इसमें व्यापार की सुविधाओं के संबंध में कई धाराएं भी थीं। कोकन्द की तरह बुखारा भी रूस के अधीन हो गया।

खीवा की बारी पांच वर्ष बाद आयी। १८७३ के वसंत में रूस ने उसको परास्त कर लिया और उसे अपनी शर्तें मानने पर मजबूर कर दिया। अगस्त १८७३ में जनरल काउफमन और खीवा के शासक सैयद मोहम्मद रहीम खान ने शांति-संधि पर हस्ताक्षर किये थे। इस संधि ने खान को यह स्वीकार करने पर विवश कर दिया कि वह "तमाम रूस के सम्राट का अदना चाकर" है और "पड़ोस के शासकों और खानों से सभी प्रत्यक्ष और दोस्ताना संबंधों" का परित्याग करता है। आमू-दरिया का पूरा दाहिना तट और उससे मिला हुआ खीवा का इलाका रूस को दे दिया गया और उसे आमू दरिया में बिना रोक-टोक जहाजरानी का अधिकार भी मिल गया। रूसियों को आमू-दरिया के बायें तट पर गोदाम और घाट बनाने और फैक्टरियां कायम करने का अधिकार मिल गया। रूसी व्यापारियों और कारवानों को पूरे खान शासित प्रदेश में यात्रा की आजादी मिल गई और खान ने उनकी विशेष सुरक्षा का प्रबंध करने का उत्तरदायित्व स्वीकार किया। इसके अलावा उन्हें चुंगी-कर अदा करने से भी मुक्ति मिल गई। संधि में ऐसी धारा भी निहित थी जिसके अनुसार खीवा में रूसियों को अतिरिक्त देशीय अधिकार प्राप्त था। खीवा में दास प्रथा मिटाने और १८९३ तक कुल मिलाकर २२ लाख रूबल युद्ध का हरजाना अदा करने के संबंध में भी धाराएं थीं। खीवा के साथ यह संधि बिल्कुल औपनिवेशिक संधि थी जैसी पश्चिमी शक्तियों ने चीन पर थोपी थी। इस संधि से और इसके पहले कोकन्द और बुखारा के साथ संधियों से इन तीनों खान शासित प्रदेशों पर रूस का आर्थिक अधिकार निश्चित हो गया।

जारशाही रूस द्वारा खान शासित प्रदेश के मिला लिये जाने पर खीवा के लोगों की क्या प्रतिक्रिया थी, इसपर दिलचस्प रोशनी एक समकालीन

अग्रेज ने डाली है, जो मध्य एशिया की घटनाओ का साक्षी था। मकगाहन ने लिखा था कि उसे इसम कोई सन्देह नही कि हरजाने की रकम अदा होने से पहले ही खान की मत्यु या किसी और घटना के कारण शायद स्वय लोगो के अनुरोध पर, रूसिया को अपने हाथो मे सत्ता लेने का मौका मिल जायेगा।*

इसके बाद तेक्के तुक्मानो की, जो अतरेक घाटी मे बसे हुए थे और मव नखलिस्तान मे रहनेवाले सराखा की बारी आयी। खीवा को अधीन कर लेने के बाद रूस के विस्तार के इतिहास मे एक नया युग शुरू हुआ। रूसी हमले के प्रति सगठित विरोध का अतिम आभास भी गायब हो जाता रहा और ज़ार महान खान शासित प्रदेशो का निर्विरोध अधिपति बन गया। पश्चिम की ओर रूस का प्रभाव क्रास्नोवोदस्क की कास्पियन बदरगाह मे, जिस जनरल स्तोलेतोव ने १८६९ मे कायम किया था, मजबूती के साथ जम चुका था। आमू-दरिया पश्चिम की नयी सीमा थी। परन्तु आमू दरिया और कास्पियन के बीच का इलाका अपराजित रह गया था। यहा कोई सगठित राज्य नही था और इस इलाके मे तुकमान बसे हुए थे, जिनकी पराजय की कहानी मध्य एशिया पर रूसी कब्जे के इतिहास का अतिम अध्याय है।

लेकिन इसस पहले कि रूस तुकमाना पर चढाई करता, कोकान मे विरोधी आन्दोलन फैल गया। खान खुदायार खान के बेटे नसीरुद्दीन खान के नेतत्व मे हुए विद्रोह को कुचल दिया गया और कोकान के खान-शासित प्रदेश को २ माच, १८७६ को रूसी साम्राज्य म मिला लिया गया। इसका नया नाम रखा गया—सूबा फरगाना।

ट्रासकास्पियन सैनिक ज़िले का निर्माण १८७४ मे मेजर-जनरल लोमाकिन की मातहती मे किया गया था। १८७७ मे लोमाकिन ने क्रास्नोवोदस्क से २०० मील पूव किज़िल अरवात के तेक्के किले पर चढाई की, मगर कडे प्रतिरोध के कारण उसे पीछे हटना पडा। उसने अखाल नखलिस्तान

---

* T A MacGahan *Campaigning on the Oxus and the Fall of Khiva* London, 1874, p 295

मे गेओक-तपे ज़िले म दागिल-तप पर चढाई करन की चेष्टा की, मगर तुर्कमान योद्धाओ न उसे विफल कर दिया। प्रतिष्ठा पुन स्थापित करने के लिए जनरल म० स्कोबेलेव को तुर्कमानो को पराजित करन के लिए भेजा गया (वह खीवा और कोकान के विरुद्ध अभियानो म भाग ले चुका था और रूसी-तुर्की युद्ध के दौरान एद्रियानोपल और प्लेवना पर कब्जा किया था)।

लोमाकिन ने ऊटो का प्रयोग किया था, जो उस लम्बी कठिन राह म हज़ारो की सख्या में मर गय। इसलिए स्कोबेलेव ने वाष्प का सहारा लिया। एक विशेष रेलवे बटालियन की स्थापना की गई जिसन अभियान की प्रगति के साथ-साथ ट्रासकास्पियन रेलवे का निर्माण किया। क्रास्नोवोदस्क मे एक जल शोधक यत्र स्थापित किया गया ताकि पीने के पानी की कमी नही हो। सारी तयारिया हो जाने के बाद तुर्कमानो के खिलाफ हमला बोल दिया गया। घिरे हुए तुर्कमानो ने वीरतापूर्वक लडाई की और गेओक तेप भारी लडाई के बाद पराजित हुआ। इसके पतन के बाद अखाल नखलिस्तान पर रूसियो का कब्ज़ा हो गया।

अब केवल मर्व पर कब्जा करना रह गया था। उसको रूसी साम्राज्य म बडी चतुर कूटनीति से एक होशियार काकेशियाई मुसलमान अलीखानोव की कोशिशो से मिलाया गया। उस गुल जमाल का सहयोग मिल गया जो अतिम महान तुर्कमान सरदार नूर वर्दी खान की विधवा थी। ३१ जनवरी, १८८४ को तुर्कमान कबायली सरदार अशकाबाद मे इकट्ठा हुए और उन्होन जार की वफादारी की प्रतिज्ञा की। उसके कुछ ही दिनो बाद मर्व के दक्षिण म सरीक कबीले न हथियार डाल दिये और इस प्रकार पूरा इलाका पराजित हो गया।

रूसी विजय और मध्य एशिया पर कब्जे के ऐतिहासिक महत्त्व पर सोवियत और पश्चिमी इतिहासज्ञ बहुत भिन्न विचार प्रकट करते हैं। ज़ारशाही रूस द्वारा मध्य एशिया पर कब्जे से जारशाही का औपनिवेशिक उत्पीडन बढ गया। लेकिन रूसी साम्राज्य मे इन लोगो के मिला लेने का एक दूसरा पहलू भी था। इससे उनकी नियति रूस की प्रगतिशील शक्तियो से, रूसी क्रातिकारी आन्दोलन से सबद्ध हो गयी। इसलिए रूस म मध्य

एशिया के मिला लिये जाने का वस्तुनिष्ठ दृष्टि से प्रगतिशील स्वरूप था। रूसी कब्जे के इस प्रगतिशील ऐतिहासिक स्वरूप को कभी कभी कुछ सोवियत लेखक अतिशयोक्ति के साथ पेश करते है, जिनमे से कुछ यहा तक कह जाते है कि रूस मे विलयन मध्य एशिया के जनगण का "सदियो पुराना स्वप्न" था। लेकिन बहुतेरे सोवियत इतिहासज्ञो ने इस सवाल पर वस्तुगत दृष्टिकोण अपनाया है। उदाहरण के लिए, एक सोवियत उज़्बेक विद्वान अ० म० अमीनोव ने रूस के साथ मध्य एशिया के विलयन के "प्रगतिशील महत्त्व को बढा चढा कर पेश करने की प्रवृत्ति" की निंदा की।* वह लिखते है

"इसका यह नतीजा नही होना चाहिये कि साम्राज्यवाद के प्रतिक्रियावादी सार पर, जारशाही की औपनिवेशिक नीति के स्वरूप और उद्देश्यो पर परदा डाल दिया जाये, जो मध्य एशिया के धन को लूटकर अधिक से अधिक मुनाफा कमाने का प्रयत्न कर रही थी।"**

ज़ारशाही ने मध्य एशिया में कठोर औपनिवेशिक शासन स्थापित कर रखा था जिसका हित स्थानीय जनता और रूसी मज़दूर वर्ग दोनो के हितो के विरुद्ध था। हाल ही मे मध्य एशिया के विलयन के प्रगतिशील स्वरूप पर ज़रूरत से ज्यादा ज़ोर देने की प्रवृत्ति को सोवियत सघ की विज्ञान अकादमी के सह सदस्य म० प० किम ने आलोचना का विषय बनाया है। किम ने सोवियत लेखको पर इस मामले मे दृष्टिकोण के "कुछ आधुनिकीकरण" का आरोप लगाया है। उन्होंने इस तर्क की आलोचना की है, जो सोवियत साहित्य मे अक्सर पेश किया जाता है, कि अगर मध्य एशिया की जातियो का विलयन रूस मे नही हुआ होता, तो वे अक्तूबर क्रांति के बाद सोवियत जातियो के बिरादराना सघ मे एकताबद्ध नही होती। उन्होने कहा

"हर एक सत्य की तरह, ऐतिहासिक सत्य भी ठोस होता है। जब हम रूस के साथ जातियो के विलयन के प्रगतिशील परिणामो की बात

---

*अ० म० अमीनोव, "मध्य एशिया का आर्थिक विकास", ताशकन्द, १६५६, पृष्ठ १६१। (रूसी सस्करण)

**वही, पृष्ठ १७५–१७६।

करते हैं, तो हमारे मन मे वे प्रगतिशील परिवतन होते हैं, जो इन जातियों के सामाजिक आर्थिक और सास्कृतिक जीवन मे पुराने सामती या पूजीवाद जमीदार रूस की ठोस ऐतिहासिक स्थितियो मे हुए। हम जब प्रगतिशील परिणामो की बात करते हैं, तो साथ ही हम यह स्वीकार करते हैं कि जातीय स्वतत्रता के छिन जाने से उनका कितना नुक्सान हुआ।"*

मध्य एशिया मे आग्ल रूसी प्रतिद्वद्विता

१९ वी सदी के पूर्वार्द्ध मे भी जबकि मध्य एशिया म रूस का मुख्य प्रघात अभी शुरू नही हुआ था, ब्रिटिश सरकार ने आग्ल रूसी सबधो की अपनी अनूठी व्याख्या प्रस्तुत कर दी थी। अग्रेजो के अनुसार रूस बराबर एक के बाद एक इलाके पर कब्जा करते हुए भारत की सीमाओ की ओर बढता जा रहा था। कहा जाता था कि रूस के बढने का लक्ष्य भारत था और इसलिए ब्रिटेन जो कुछ कर रहा था, वह भारत की सुरक्षा और तुर्की साम्राज्य की अखडता के लिए, जो यूरोप और भारत के बीच मे एक पुल के समान था, कर रहा था। ड० उर्कहाट और बाद मे हु० रालिनसन जसे लेखको ने इस विचार को बराबर फैलाने का प्रयास किया।

लेकिन यह दष्टिकोण सरासर पूर्वाग्रह पर आधारित था। बात एसी नही थी कि रूस बस बराबर बढता जा रहा था और ब्रिटेन केवल प्रतिरक्षा कर रहा था। वास्तव मे मध्य एशिया मे दो आक्रामक लहरें आकर मिली।** मध्य एशिया के प्रति ब्रिटेन और रूस दोनो की नीति आक्रामक थी, और हर एक दूसर पर आरोप लगाता था।

---

*"इतिहास और समाजशास्त्र', मास्को, १९६४, पृष्ठ १२७–१२८। (रूसी सस्करण)

**"कूटनीति का इतिहास", मास्को, १९६३, खण्ड २, पृष्ठ ६०। (रूसी सस्करण)

दोनो शक्तियो मे प्रतिद्वद्विता का असली कारण सामरिक विचार और व्यापारिक हित थे और साथ ही अपने अधीन देशो पर नियत्रण और दृढ करने की इच्छा भी थी। भारत मे ब्रिटिश उपनिवेशवादियो को डर था कि किसी विदेशी सेना के सीमा के निकट आने से अनिवार्यत उनके शासन के विरुद्ध जन का क्रोध उठ जायेगा। इसलिए वे आस-पास के देशो—फारस, अफ़्गानिस्तान, सिक्याग और बर्मा मे अपना प्रभाव फैलाना और अगर सम्भव हो तो अपना प्रभुत्व स्थापित करना चाहते थे। इन दोना शक्तियो द्वारा कब्जा करने का कारण आम तौर पर कच्चे सामान के स्रोत और उनके पूजीवादी उद्योगो के तैयार माल के लिए मडी हासिल करने की ज़रूरत होती थी। इस दृष्टि से मध्य एशिया की कपास रूसी उद्योग के लिए बहुत महत्वपूर्ण हो गयी।

मध्य एशिया के लिए आम नीति लन्दन म ब्रिटिश केबिनेट द्वारा निर्धारित होती थी, मगर उसको ठोस रूप मे अमल म लाने का काम भारत म वाइसराय के लिए छोड दिया जाता था। ब्रिटिश एजेंट, जो साधारणत गुप्तचर अफसर होते थे, अफगानिस्तान, तुर्कमानिस्तान और पश्चिमी चीन जाते और वहा अकसर स्थानीय एजेंटो को भरती करते थे। तुर्की के सुलतान के एजेंट भी अग्रेजो की सक्रिय सहायता किया करते थे। मध्य एशिया म जासूसी और विध्वसक कारवाइयो की ब्रिटिश नीति सरकारी कूटनीति से कम महत्वपूर्ण नही थी। रूसी पक्ष मे भी तुर्किस्तान का गवर्नर-जनरल सेट पीटसबर्ग के नियत्रण से काफी हद तक स्वतत्र था और स्थानीय सामती शासको और कबायली सरदारो मे उसने अपने जासूसो का जाल बिछा रखा था।

मध्य एशिया म ब्रिटिश विस्तार का मुख्य विषय अफगानिस्तान था। वहा से अग्रेज तुर्कमानिस्तान म घुसने की तैयारी कर रहे थे। अग्रेजो ने पहला अफगान युद्ध १९वी सदी के चौथे दशक मे चलाया, जब रूस का फैलता हुआ साम्राज्य अभी भारत की सीमाओ से दूर था। यह आक्रामक युद्ध अफगानिस्तान पर, जो दुश्मन नही था, ऐसे समय थोपा गया, जबकि फारस ने हेरात की घेराबन्दी उठा ली थी और रूसी एजेंट वितकेविच को वापस बुलाकर अनाधिकृत घोषित कर दिया गया था।

१८६६ म सामती सघर्षों का दौर समाप्त हो गया था, जो विगत छह वर्षो से अफगानिस्तान म जारी थे। अमीर शेर अली ने अपने विरोधियो को परास्त कर दिया और अफगानिस्तान म अपने नियत्रण म केन्द्रीयकृत राज्य स्थापित कर लिया था। लाड मेयो न अमीर का अपना तावेदार और अफगानिस्तान म ब्रिटिश प्रभाव का यत्र बनान का निश्चय किया। लाड मेयो ने शेर अली को भारत आने का निमत्रण दिया और मार्च १८६६ म अम्बाला मे वे मिले। अमीर ने यह माग की कि मत्री-सधि कर ली जाये और अग्रेज उसके छोटे बेटे अब्दुल्लाह खान को अफगान राजगद्दी पर उसका उत्तराधिकारी मान ले। परन्तु लाड मेयो इस पर राजी नही हुआ। अग्रेज राजगद्दी के विभिन्न दावेदारो को एक दूसरे से लडाने का खेल छोडना नही चाहते थे। लेकिन उसने अमीर को अपनी दोस्ती का विश्वास दिलाया।

१८६६ के शुरू म ब्रिटेन मे ग्लैडस्टन के नेतत्व म लिबरल पार्टी की सरकार ने जारशाही सरकार के सामने प्रस्ताव रखा कि मध्य एशिया म ब्रिटेन और रूस के अधीन इलाको के बीच तटस्थ क्षेत्र का निर्माण किया जाये। दोनो शक्तिया इस तटस्थ क्षेत्र का सम्मान करें। इसका उद्देश्य यह था कि दोनो के इलाको की समान सीमा नही होने पाये। रूसी सरकार ऐसे तटस्थ क्षेत्र के निर्माण पर राजी हो गयी और उसने सुझाव दिया कि इसमे अफगानिस्तान को शामिल करना चाहिये। मकसद यह था कि ब्रिटेन उसको हडप न कर सके। ब्रिटिश सरकार ने उत्तर की ओर उस क्षेत्र का विस्तार करने का सुझाव दिया। इसपर दोनो सरकारो मे पत्र-व्यवहार का लम्बा सिलसिला चला, जिसके फलस्वरूप एक समझौता हुआ जिसे "क्लैरेंडन गोर्चाकोव समझौता' कहा जाता है। ब्रिटिश सरकार की राय थी कि अफगानिस्तान तटस्थ क्षेत्र की शर्त पूरी नहीं करेगा, क्योकि उसकी सीमाए ठीक से निर्धारित नही हैं।

ड्युक आफ आर्गिल और भारत म उसके सहकारियो ने तजवीज पेश की कि ऊपरी आक्सस को वह सीमा होनी चाहिए जिसे किसी शक्ति की सेनाए नही पार कर सकें। तटस्थ क्षेत्र के सबध मे बातचीत फिर शुरू हुई, जब भारतीय प्रशासन का एक अधिकारी टी० डी० फोरसाइथ

नवम्बर १८६६ मे सेंट पीटसबग गया। उसके साथ एक समझौता हुआ जिसकी पुष्टि बाद मे जार और ब्रिटिश सरकार ने की। इस बात पर सहमति हुई कि जो सूबे दरअसल शेर अली के कब्जे मे थे, उन्हे अफगानिस्तान का इलाका मान लिया जाये। यह भी तय हुआ कि ब्रिटेन अफगान अमीर पर अपना प्रभाव डाले और उसे बुखारा और अन्य मध्य एशियाई राज्यो के विरुद्ध लडाई छेडने से रोके। इसी प्रकार रूस की जिम्मेदारी बुखारा को रोके रखना और अपना सारा प्रभाव शाति के हित मे इस्तेमाल करना था।

लेकिन शेर अली के अधिकार म वास्तव मे कितना इलाका था, यह एक विवादस्पद सवाल था और किसी को भी, स्वय अमीर को भी उसकी लम्बाई चौडाई का ज्ञान नही था। इसलिए यह तय हुआ था कि दोना पक्ष इसके बारे मे सूचना प्राप्त करेंगे। इस प्रस्ताव से दोनो पक्षा को समय मिल गया और व्यापक पैमाने पर झगडे और समझौते की गुजाइश पैदा हो गई। शीघ्र ही दोना शक्तियो मे १८६६ के समझौते के बारे म झगडा शुरु हो गया। ब्रिटिश सरकार का कहना था कि वह सारा इलाका, जो कभी शेर अली के पूववर्त्ती अमीर दोस्त मोहम्मद के अधिकार म था, *ipso facto* अफगान गद्दी के वतमान पदग्राही के कब्जे मे माना जायेगा। भारत के वाइसराय लाड मेयो का यह मत, जैसे भारत के लिए राज्यमत्नी ड्युक आफ आगिल के नाम पत्न मे व्यक्त किया गया था, रूसी सरकार के पास उसके लदन स्थित राजदूत के जरिये पहुचा दिया गया। लेकिन वस्तुस्थिति यह थी कि कुछ खान शासित प्रदेश, जिनपर दोस्त मोहम्मद प्रशासन करता था शेर अली के अधिकार मे नही थे।

रूसी सरकार उन्हे नये अमीर शेर अली के कब्जे मे मानना नही चाहती थी, जिसे वह अग्रेजो का एजट समझती थी। १७ अक्तूबर, १८७२ को अर्ल ग्रनविल के लाड लाफ्टस के नाम एक लम्बे नोट मे, जिसे उसने साम्राजी रूसी सरकार के लिए लिख कर दिया, शेर अली के अधिकार म अफगान इलाको की सीमाए निर्धारित की गई थी। इसम ऐसा सुझाव पश किया गया कि बदखशान और वखान सूबे अफगानिस्तान का अग हो जायें। रूसी सरकार ने ७ दिसम्बर, १८७२ के इस नोट के अपने जवाब

में अफगानिस्तान की सीमा आमू-दरिया पर बदखशान और वखान के नीचे ख्वाजा सालेह तक स्वीकार की। परन्तु उसने इन दो सूबों को अफगानिस्तान का अंग मानने से इनकार कर दिया। मगर आगे चलकर जारशाही सरकार ने अपना मत बदल दिया और ३१ जनवरी, १८७३ को ब्रिटेन द्वारा प्रस्तावित रेखा को अफगानिस्तान की उत्तरी सीमा मान लिया।

इस प्रकार अफगानिस्तान के संबंध में आंग्ल रूसी वार्ता और पत्र व्यवहार, जो १८६९ में शुरू हुआ था, सम्पन्न हुआ। इसे १८७३ का समझौता कहा जाता है और इसमें अफगानिस्तान की उत्तरी सीमा निर्धारित कर दी गयी थी। ब्रिटेन ने इस समझौते के ज़रिये रूस से एकतरफा रियायत हासिल कर ली और वह यह कि रूस ने अफगानिस्तान को अपने प्रभाव क्षेत्र से बाहर मानने का बार बार और पक्का विश्वास दिलाया। परंतु जहां तक दोनों शक्तियों के अधिकृत इलाकों के बीच "तटस्थ" या "मध्यस्थ" क्षेत्र स्थापित करने के प्रश्न का संबंध है, इस विचार को १८७३ में निश्चित रूप से त्याग दिया गया। ब्रिटिश, जो अफगानिस्तान पर अधिकार करने के लिए नज़र गडाये बैठे थे, दरअसल उस सुझाव के लिए तैयार नहीं थे। लार्ड मेयो की सरकार शुरू ही से उसको स्वीकार करने से हिचकिचा रही थी। लार्ड मेयो ने लन्दन को लिखा था

'सबसे अच्छा यह हो कि रूस और इंगलैंड दोनों एक दूसरे के हितों में परस्पर हस्तक्षेप नहीं करने का आश्वासन दें, जिसकी पुष्टि किसी निश्चित संधि द्वारा नहीं की जाये।'*

जारशाही सरकार ने बदखशान और वखान को अफगानिस्तान का अंग मानकर ब्रिटेन को रियायत दी, तो इसमें उसका अपना उद्देश्य था। वह चाहती थी कि खीवा पर उसके अधिकार करने के प्रति ब्रिटेन का विरोध कमजोर पड जाय। जार अलेक्सान्द्र द्वितीय की अध्यक्षता में असाधारण समिति की एक बैठक ने ४ दिसम्बर, १८७२ को खीवा पर चढ़ाई करने का निर्णय किया था।**

---

* Quoted by D K Ghosh *England and Afghanistan* Calcutta 1960 p 165

** 'कूटनीति का इतिहास", खण्ड २, पृष्ठ ६६।

जब रूस ने खीवा पर अधिकार कर लिया, तो कोई खास अंतर्राष्ट्रीय उलझनें नही पैदा हुई। फिर भी ब्रिटिश अखबारो मे इसका कुछ विरोध अवश्य हुआ। छह महीने से अधिक समय हो जाने पर ब्रिटिश विदेश मंत्री लार्ड ग्रेनविल ने सेंट पीटर्सबर्ग मे ब्रिटिश राजदूत के नाम एक पत्र भेजा और आदेश दिया कि वह उसकी नकल जारशाही सरकार को भी दे दे। इस चिट्ठी मे बताया गया था कि अगर रूस मर्व की तरफ आगे बढे, तो हो सकता है कि तुर्कमान कबीले अफगानिस्तान मे शरण ले और इससे रूसी और अफगान सैनिको मे झडपें हो सकती है। ब्रिटिश सरकार ने आशा प्रकट की कि रूसी सरकार ब्रिटिश इंडिया की सुरक्षा और एशिया मे शांति की एक महत्वपूर्ण शर्त के रूप मे अफगानिस्तान की "स्वतंत्रता" का सम्मान करेगी। परन्तु ब्रिटिश सरकार ने खीवा पर रूस के कब्जे के खिलाफ कुछ नही कहा। गोर्चाकोव ने अपने उत्तर मे ब्रिटेन को विश्वास दिलाया कि रूस अफगानिस्तान को अपने प्रभाव-क्षेत्र से बाहर मानता है। उसने सुझाव दिया कि अगर अफगान अमीर वास्तव मे रूस से झगडा नही करना चाहता, तो उसे तुर्कमान सरदारो के लिए यह बात स्पष्ट कर देनी चाहिए कि वे उसके समर्थन की आशा नही करें।

ब्रिटेन से आगे वार्तालाप के दौरान गोर्चाकोव ने २६ अप्रैल, १८७५ के अपने स्मरण पत्र मे लिखा था कि दोनो शक्तियो मे प्रतिद्वंद्विता उनके परस्पर हितो के लिए हानिकारक है। उसकी राय मे यह वांछनीय था कि इस प्रतिद्वंद्विता से बचने के लिए दोनो के अधिकृत इलाको के बीच मे "मध्यवर्ती क्षेत्र" कायम किया जाये। अफगानिस्तान एक आदर्शमूलक मध्यवर्ती राज्य हो सकता है और इसके लिए दोनो पक्षो द्वारा उसकी स्वतंत्रता की मान्यता मात्र जरूरी है।

डिज्रेली की कंजर्वेटिव सरकार ने १८७४ मे ग्लैडस्टन की लिबरल सरकार को हटाकर उसका स्थान ग्रहण कर लिया था। उसने सत्ता इस नारे के साथ संभाली थी कि वह ब्रिटेन के औपनिवेशिक साम्राज्य का विस्तार करेगी। आठवें दशक मे औपनिवेशिक विस्तार मे ब्रिटिश पूंजीपति वर्ग की दिलचस्पी बहुत बढ गई थी। उपनिवेशो की ओर यह ध्यान विश्व मंडियों के लिए प्रतियोगिता तीव्र होने के साथ, खासकर जर्मनी की ओर

से, बढने लगा था। इस नयी परिघटना का संबंध पूँजीवाद के साम्राज्यवादी अवस्था मे संक्रमण के प्रारम्भ से था। डिजरेली की सरकार ने विश्व के भिन्न भिन्न इलाको मे—दक्षिण अफ्रीका, मिस्र, तुर्की और मध्य एव म- विस्तार और औपनिवेशिक कब्जे का मार्ग अपनाया। ब्रिटिश सरकार ने फारस और तुर्कमानिस्तान मे अपने एजेंटो की कारवाइया तेज कर दी और वहा सैनिक तथा राजनीतिक जासूसी कराने लगी। उसने इस क्षेत्र के मुसलमान शासको का संयुक्त मोरचा रूस के विरुद्ध खडा करने का प्रयास किया। डिजरेली की सरकार अफगानिस्तान का भी अपने अधीन करने की तैयारी कर रही थी।

दोनो शक्तिया इस अवधि मे मध्य एशिया के विभाजन के बारे में आपस मे कोई समझौता कर सकती थी। मई १८७५ मे जर्मनी के विरुद्ध दोना मिल गई और कुछ समय तक दोनो शक्तियो के संबंध सुधरते मालूम पड रहे थे। लार्ड डरबी ने लन्दन स्थित रूसी राजदूत के सामने घोषणा की कि रूस और इगलैंड को एशिया मे समझौता करने से कोई चीज रोक नही सकती क्योकि दोना के लिए काफी जगह है।* परन्तु ब्रिटिश सरकार ने रूस से वार्ता के आधार के रूप मे मध्यवर्ती राज्य के विचार को अस्वीकार कर दिया। वह अफगानिस्तान की स्वतंत्रता की संयुक्त पुष्टि के लिए रूसी सुझाव से सहमत नही हुई। अक्तूबर १८७५ मे ब्रिटिश केबिनेट ने घोषणा की कि अफगानिस्तान के संबंध मे कारवाई करने का उसे पूरा अधिकार है। इसका उत्तर गोर्चाकोव ने फरवरी १८७६ मे दिया और रूस के इस पुराने मत की पुनःपुष्टि की कि अफगानिस्तान को वह अपने प्रभाव क्षेत्र से बाहर मानता है। उसने यह भी घोषणा कर दी कि रूसी सरकार के मतानुसार मध्यस्थ क्षेत्र के संबंध मे वार्तालाप समाप्त हो चुका है। दोना शक्तियो को इस इलाके के देशो के प्रति अपनी कारवाई की स्वतंत्रता पूरी तरह कायम रखते हुए भी एक दूसरे के हितो का उचित ध्यान रखना चाहिए और एक दूसरे के इलाको मे सीधा सम्पर्क नही होने देना चाहिए।

---

*"कूटनीति का इतिहास", खण्ड २, पृष्ठ ६८।

रूस ने तुरत इस "कारवाई की स्वतत्रता" का प्रयोग किया, जिसकी घोषणा पहले ब्रिटेन ने की थी। १७ फरवरी, १८७६ को जारशाही सरकार ने एक आज्ञप्ति जारी की, जिसके अनुसार कोकान खान-शासित प्रदेश को रूसी साम्राज्य मे मिला लिया गया। भारत का वाइसराय लार्ड मेयो और उसका उत्तराधिकारी नाथब्रुक अफगानिस्तान पर तुरत कब्जा करने के विरोधी थे। वे "धैर्य" और "प्रतीक्षा" की नीति के समर्थक थे। इस नीति पर "अग्रिम नीति" के समर्थको ने आक्षेप किया, जिनमे रालिनसन था। डिजरेली ने सत्ता सभालने पर इसी नीति पर अमल किया। भारत सरकार को आदेश दिया गया था कि वह अफगान अमीर से हेरात और कन्दहार म ब्रिटिश रेजिडेंट रखने की आज्ञा की माग करे। लार्ड नाथब्रुक को, जो इस नयी नीति का विरोधी था, त्यागपत्र देने पर मजबूर किया गया। अप्रैल १८७६ मे उसके स्थान पर लार्ड लिटन वाइसराय बनकर आया। मई १८७६ मे लिटन ने माग की कि शेर अली काबुल म ब्रिटिश मिशन से मिले। इस प्रश्न पर वाइसराय के पत्रो का अध्ययन करने स मन की व्यग्रता और हठधर्मी की झलक मिलती है। चौथे दशक की कहानी दूसरे अफगान युद्ध मे पुन दोहराई गई, और फिर यह सब रूस के आक्रामक इरादा के मुकाबले मे भारतीय साम्राज्य की सुरक्षा के नाम पर किया गया। इस सिलसिले मे यह बात उल्लेखनीय है कि वाइसराय को भारत की सुरक्षा की तो बडी चिन्ता थी, मगर उस महान अकाल के प्रति वह बिल्कुल उदासीन रहा जिसमे ५० लाख व्यक्ति मौत के घाट उतर गये। ब्रिटिश राजमुकुट की महिमा प्रदर्शित करने के लिए उसने दिल्ली म शानदार दरबार ऐसे समय रचाया, जब करोडो भारतवासी देश के हर शहर और हर गाव मे प्लेग और भूख से मर रहे थे।

तुर्कमानिस्तान म ब्रिटिश एजेंटो ने रूस के विरुद्ध स्थानीय सरदारो को उभारा। जारशाही रूस को ईरान और अफगानिस्तान से, जहा ब्रिटिश प्रभाव बढ रहा था, तुर्कमानिस्तान के लिए ब्रिटिश खतरे का इहसास था। १९वी सदी के आठवे दशक मे खुरासान मध्य एशिया म ब्रिटिश सैनिक विस्तार का अड्डा बन गया। १८७३ मे कर्नल बेकर, कैप्टन क्लैटन और लेफ्टिनेंट गिल अतरेक नदी क्षेत्र का अध्ययन करने भेजे गये। बेकर

ने ब्रिटिश सरकार के समक्ष एक रिपोर्ट पश की जिसमे तुर्कमानो के लड़ाकू गुणो की प्रशसा की गई थी। उसकी राय म १२० हजार ग्लिर तुर्कमान घुड़सवार यूरोपीय अफसरो की कमान म एक बड़े इलाके की रक्षा कर सकते है।* बेकर ने इस इलाके के सैनिक भूगोल के सबध म लम्न म लेख भी प्रकाशित किये। १८७४ मे नेपियर को वहा यह अध्ययन करने के लिए भेजा गया था कि रूस के विरुद्ध ब्रिटेन के सघप म "युद्धबलि" के रूप मे तुर्कमान कबीलेवालो का प्रयोग करने की क्या सम्भावनाए हैं। वह ब्रिटेन के अनुयायी खानो से मिला, उनमे हथियार बाटे, सड़कों का नक्शा तैयार किया और कास्पियन सागर म जहाजरानी के सबध म सूचना इकट्ठा की। वापस आने पर उसने सरकार से आग्रह किया कि वह ईरान तुर्कमानिस्तान की सीमा पर होनेवाली घटनाओ मे अधिक सक्रिय हस्तक्षेप करे।

१८७५ मे कर्नल मकग्रेगर मशहद से मर्व रवाना हुआ। उसने तुर्कमान सरदारो को रिश्वत दी ताकि मर्व पहुचने मे वे उसकी सहायता करें। वह मर्व तक नही जा सका क्योकि ब्रिटिश सरकार ने उसे आगे बढ़ने से मना कर दिया। उसे रूसी सरकार के प्रतिरोध का डर था। लेकिन वह तेजेन नदी पार करके मर्व की ओर २० मील तक गया। बाद मे कप्तान बर्नाबी को खीवा से मर्व जाने का काम सौपा गया। परन्तु वह भी इसे पूरा नही कर सका। रूसी अधिकारियो ने उसे मर्व जाने नही दिया और मध्य एशिया से चले जाने पर मजबूर किया। १८७६ के अत म नेपियर एक बार फिर तुर्कमानो मे अपना विध्वसक काम करने मशहद पहुचा।

१८७७ म कैप्टन बटलर ने जिसने चीन मे ताईपिग विद्रोह को कुचलने मे भाग लिया था, अतरेक नदी क्षेत्र का सर्वेक्षण किया। उसे अखाल और मर्व के नखलिस्तान के तुर्कमानो को रूसियो के विरुद्ध सगठित करने का व्यक्तिगत आदेश भारत के वाइसराय लार्ड लिटन से मिला।

---

* V Baker, *Clouds in the East Travels and Adventures on the Perso Turkmen Frontier* London, 1876 pp 341—342

परन्तु रूसी अधिकारियो को उसके मिशन की सूचना मिल गई और उनके प्रतिरोध के कारण उसे वापस बुलाना पडा। बाद म जब लाड लिटन न तुर्कमानिस्तान मे हुआ उसका खच अदा करने से इनकार किया, तो उसने अपने मिशन का कच्चा चिट्ठा अखबारो मे छपवा दिया और लाड लिटन को विध्वसक कारवाइया के सगठनकर्त्ता के रूप म बेनकाब किया। २५ जनवरी, १८८१ को "ग्लोब" म प्रकाशित अपने लेख मे उसने बताया कि कस उसन आधुनिकतम यूरोपीय तकनीक के अनुसार गेग्रोक-तेपे की किलाबन्दिया के पुनर्निर्माण म भाग लिया। अग्रेजी पत्रकार चाल्स माविन ने प्रत्यक्ष रूप स स्वीकार किया है कि यदि बेकर, मकग्रेगर, नेपियर और बटलर फारस के उत्तर-पूर्वी सीमा पर न पहुच गय होते, तो रूस को अनेक लडाइया लडने की जरूरत नही पडती।* १८७३ से लेकर १८८१ तक शायद ही कोई साल ऐसा गुजरता होगा जब तुर्कमानो म उपद्रव फलाने के लिए ब्रिटिश एजेंट न भेजे जाते हो। लाड लिटन ने मर्व पर अधिकार करने की एक योजना बनाई थी। १८७८ म ही, जब अग्रेज अफगानिस्तान म प्रवेश करने की तैयारी कर रहे थे, लाड लिटन ने भारत के लिए राज्य मत्री को अपना सुझाव लिख भेजा कि एक अलग पश्चिमी अफगान राजतत्र स्थापित किया जाये जिसम मर्व, मैमेना, बल्ख, कन्धार और हेरात शामिल हो, उसका शासक अग्रेजो की पसद का आदमी हो और कि यह राजतत्र अपने अस्तित्व के लिए ब्रिटेन के समथन पर निभर हो।** यह था उस "मर्व पीडा" का असल कारण, जिसने मर्व पर रूसी कब्जे के समय भारत सरकार को दबोच लिया था। जारशाही सरकार ने तुर्कमानिस्तान पर कब्जा करने म जल्दी की ताकि अग्रज अफगानिस्तान से आगे उत्तर म न जायें। ब्रिटिश सरकार

* C Marvin *Reconnoitring Central Asia* London 1886, pp 246—249, न० अ० खालफिन, उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ ३३८—३३९।

** B Balfour, *The History of Lord Lytton s Indian Administration* London, 1899, p 247

ने रूस से १८८० की संधि के आधार पर अफगानिस्तान के सीमा निर्धारण का सवाल उठाया। सीमा निर्धारण के लिए एक संयुक्त आयोग नियुक्त किया गया। इस आयोग के अंग्रेज़ सदस्यों ने रूस के विरुद्ध अमीर अब्दुरहमान को भडकाया। ब्रिटिश सरकार अवश्य ही यह नहीं चाहती थी कि रूस और अफगानिस्तान में अच्छे पडोसी के संबंध कायम हों। १८८४ में अंग्रेजों के उकसावे पर अफगानों ने अपनी सेना पंजदेह व नखलिस्तान में भेज दी जिसमें सराख कबीले के तुर्कमान बसे हुए थे। इसके फलस्वरूप रूसियों से जबरदस्त झडप हो गई जिसमें अफगानियों को हार खाकर पीछे हटना पडा। इस झगडे के पीछे अंग्रेज़ों का हाथ था, यह बात अफगानों के नाइब सालार के वक्तव्य से जाहिर है

"मुझे खुशी है कि पंजदेह में हम रूसियों से लडे, क्योंकि अब हमें मालूम हो गया कि कौन हमारा मित्र है और कौन शत्रु। कम से कम वे, जिन्होंने हमें लडने पर आमादा किया और मरने के लिए छोड दिया हमारे सच्चे दोस्त नहीं है।"*

इस लडाई का दोष रूस पर नहीं लगाया जा सकता। वह सीमा निर्धारण सीमावर्ती इलाके की भौगोलिक और जातीय स्थितियों के अनुसार करना चाहता था। ब्रिटेन ने रूस के पेश किये हुए जातीय आधार को सीधे अस्वीकार कर दिया।

परन्तु ब्रिटिश उकसावों के बावजूद अफगानी अमीर ने सीमा के झगडे में संतुलन से काम लिया। वह रूस से लडाई में नहीं फंसना चाहता था। अंग्रेजों ने पंजदेह नखलिस्तान को रूस का अधिकृत इलाका मान लिया। इसके बदले में रूस अफगानिस्तान को जुलफिकार क्षेत्र देने पर राजी हो गया। लन्दन में १० सितम्बर, १८८५ को एक राजीनामे पर हस्ताक्षर करके यह समझौता कर लिया गया। १८८६–१८८८ में इस इलाके में सीमा रेखा रूसी अफगान आयोग ने नहीं, बल्कि आंग्ल रूसी आयोग ने खींची।

---

* Quoted by D K Ghosh *India and Afghanistan* pp 196—197

१९ वी सदी म आग्ल रूसी सबधो की अतिम जटिल समस्या पामीर का प्रश्न था। नव दशक के अत और दसव दशक के प्रारम्भ म आग्ल-रूसी प्रतिद्वद्विता का केंद्र "ससार के शिखर" पर पहुच गया। जारशाही सरकार कोकान खान प्रशासन के उत्तराधिकारी की हैसियत से पूर्वी पामीर पर अपने अधिकारो का दावा करती थी। जहा तक पश्चिमी पामीर के देश शासनो का सबध था, ब्रिटेन के साथ १८७३ के समझौते के अनुसार उन्हे रूस के प्रभाव-क्षेत्र म छोड दिया गया था, क्योकि वे आमू-दरिया के उत्तर म थे। यह क्षेत्र अग्रेजो के उकसावा का केंद्र बन गया क्योकि जारशाही रूस तुर्कमान कारवाइया म उलझा रहा था। रूस कोकान को पराजित करने के बाद पामीर पर भी अधिकार कर ले सकता था लेकिन यह दरिद्रता भरा वीरान इलाका उस समय उसे किसी आर्थिक महत्व का नही जान पडा। परतु उसने पामीर पर अपने अधिकारो को कभी त्यागा नही। १८७६ के आलाई अभियान म पामीर पर अधिकार जमाने की उसकी इच्छा पहली बार व्यक्त हुई।

रूसी भौगोलिक सस्था पामीर के वैज्ञानिक अध्ययन म दिलचस्पी लेने लगी थी। अत १८८२ मे उसने अ० रेगेल को वहा भेजा। शुगनान के शासक युसूफ अली ने सम्मानपूर्वक उसका स्वागत किया। रेगेल न बदख्शान भी जाना चाहा, मगर अफगानी अधिकारियो ने उसकी आज्ञा नही दी। १८८३ म अफगानिस्तान के अमीर अब्दुरहमान ने शुगनान और रूशान पर कब्जा करने के लिए सेना भेजी। शुरू म रूसी अधिकारियो ने इसपर कोई जोरदार प्रतिक्रिया प्रकट नही की। परन्तु जब रूसी अखबारो ने सवाल उठाया, तो दिसम्बर १८८३ मे ब्रिटिश सरकार के पास एक नोट भेजा गया था। कहा गया था कि अफगान कब्जा १८७३ के समझौते की प्रत्यक्ष अवहेलना है। पाच महीनो तक अग्रेज खामोश रहे और जब फिर स्मरणपत्र भेजा गया, तो उन्होने उत्तर दिया कि अफगानिस्तान शुगनान और रूशान को बदख्शान का भाग मानता है जो उसे १८७३ के समझौते के अनुसार दे दिया गया था। रूसी सरकार उस समय तुर्कमानिस्तान म पूरी तरह व्यस्त थी इसलिए वह इस मामले पर और अधिक ध्यान नही दे सकी। इस बीच शुगनान के लोगो म असतोष बढता

निधिमंडल भेजे। मगर ज़ारशाही सरकार ने ब्रिटिश इंडिया के मामला में दखल देने से बराबर इनकार किया।*

... इलाके पर १८९१ में अंग्रेज़ों के कब्ज़े से सेंट पीटर्सबर्ग में खतरे का इहसास पैदा हुआ। १२ जनवरी, १८९२ को साम्राजी परिषद की एक बैठक में एक गुप्तचर अभियान पामीर भेजने का निश्चय किया गया। इसमें यह भी सिफारिश की गई कि पामीर इलाके के सीमा निर्धारण के लिए ब्रिटेन और चीन से बातचीत की जाये। पामीर समस्या पर विचार करने के लिए अप्रैल १८९२ में बुलायी गयी एक और बैठक में युद्ध मंत्री ने प्रतिवादी दृष्टिकोण अपनाया, मगर वैदेशिक मामलों के मंत्रालय के अधिकारियों ने सावधानी की नीति पर ज़ोर दिया। निर्णय किया गया था कि हिंदूकुश के दर्रों की ओर न बढ़ा जाये और १८७३ के समझौते के आधार पर सीमा निर्धारण के लिए वार्तालाप किया जाये।**

अप्रैल १८९४ में रूस और चीन पामीर इलाके में वर्तमान अवस्था को कायम रखने और एक दूसरे की स्थिति का परस्पर सम्मान करने पर राज़ी हो गये। तब रूसी सरकार ने अंग्रेज़ों से बातचीत करने का आग्रह किया। ११ मार्च १८९५ को ब्रिटिश विदेश मंत्री अर्ल आफ किम्बरले और लंदन स्थित रूसी राजदूत म० दे स्ताल के बीच पत्रों के आदान प्रदान के फलस्वरूप एक समझौता हुआ। अफगानिस्तान ने शुगनान और रूशान क्षेत्रों को रूस के हवाले कर दिया। बाद में रूस ने उन्हें बुखारा को दे दिया। बुखारा ने आमू-दरिया के बायें तट पर स्थित दरवाज़ का एक भाग अफगानिस्तान को दे दिया। विक्टोरिया झील के पूर्व ब्रिटेन और रूस के प्रभाव-क्षेत्रों को एक रेखा से विभाजित करना था, जो उस झील के पूर्वी सिरे पर एक बिंदु से शुरू होकर एक पहाड़ी रास्ते से होती हुई चीन की सीमा तक चली जायेगी। इस रेखा का निर्धारण एक संयुक्त तकनीकी आयोग द्वारा करना था। ब्रिटेन और रूस दोनों ने यह वादा किया कि पहला इस सीमा रेखा के उत्तर और दूसरा इस के दक्षिण कोई

---

*वही, पृष्ठ ३९३।
**वही, पृष्ठ ३९६।

गया। १८८८ मे अफगानिस्तान की अदरूनी गडबड से फायदा उठाकर शुगनान के लोगो न अपने भूतपूव शासक की सतान को बुखारा से वापस आन का निमत्रण दिया। उन्होने जारशाही रूम से भी महायता मागी। परन्तु अदुरहमान ने शीघ्र ही शुगनान के विद्रोह को कडाई से कुचल दिया।

अग्रेजो न पामीर के इलाके मे अपनी कारवाइया तेज कर दी। १८८६ मे कनल लाकाट ने हिदूकुश से पामीर जानेवाले दर्रो का अध्ययन किया। गिलगित से अ० दूराट १८८८ और १८८९ मे यह गुप्तचर काम करता रहा। मेजर कम्बरलैंड और लेफ्टिनेंट बावर ने १८८९ मे तगदुम्बश पामीर की यात्रा की। शिकार के बहाने लिटलडेल भी उनके पीछे पीछे गया। १८९० म कैप्टन फ्रासिस यगहस्बड के नतत्व म एक विशेष अभियान मडली पामीर भेजी गई। काशगर म रूसी कौनसल न० पेत्रोव्स्की ने वैदेशिक मामला के मत्रालय का खबर दी कि अग्रेज आधा पामीर अफगानिस्तान को दे देना चाहते हैं और गुप्त रूप मे चीन से भी समझौता करने का प्रयास कर रहे हैं।* यगहस्बड मडल के कारण जारशाही सरकार, जो कुछ समय से पामीर के मामले मे "ठहरो और देखो' की नीति पर चल रही थी, सक्रिय हो गई। इसका परिणाम यह हुआ कि तुर्किस्तान के गवरनर जनरल अ० व्रेव्स्की ने आलाई घाटी की यात्रा की। म० इयानोव को एक कज्जाक बटालियन के साथ पामीर भेजा गया। कनल ऱ्योनोव ने कप्टन यगहस्बैंड को बोजाई गुम्बज घाटी से बाहर निकाल दिया। इसका मतलब यह था कि जारशाही रूस राजनयिक पत्र व्यवहार के बदले अब निणायक कारवाई पर उतर आया था। परन्तु यह बात ध्यान म रखनी चाहिए कि पामीर मे इस नयी जारशाही नीति के बावजूद हिदूकुश की दक्षिणी ढलान पर स्थित छाटे राज्यो हुजा और नगर पर अधिकार करने का जारशाही रूस का कोई इरादा नही था। इन राज्या के शासका न अग्रेजा के खिलाफ रूस की महायता प्राप्त करने के लिए कइ प्रति

---

*न० अ० खालफिन, उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ ३९०।

निधिमंडल भेजे। मगर ज़ारशाही सरकार ने ब्रिटिश इंडिया के मामलों में दखल देने से बराबर इनकार किया।*

बजूत इलाके पर १८९१ में अंग्रेज़ों के कब्ज़े से सेंट पीटर्सबर्ग में खतरे का इहसास पैदा हुआ। १२ जनवरी, १८९२ को साम्राजी परिषद की एक बैठक में एक गुप्तचर अभियान पामीर भेजने का निश्चय किया गया। इसमें यह भी सिफारिश की गई कि पामीर इलाके के सीमा निर्धारण के लिए ब्रिटेन और चीन से बातचीत की जाये। पामीर समस्या पर विचार करने के लिए अप्रैल १८९२ में बुलायी गयी एक और बैठक में युद्ध मंत्री ने अतिवादी दृष्टिकोण अपनाया, मगर वैदेशिक मामलों के मंत्रालय के अधिकारियों ने सावधानी की नीति पर ज़ोर दिया। निर्णय किया गया था कि हिंदुकुश के दर्रों की ओर न बढ़ा जाये और १८७३ के समझौते के आधार पर सीमा निर्धारण के लिए वार्तालाप किया जाये।**

अप्रैल १८९४ में रूस और चीन पामीर इलाके में वर्तमान अवस्था को कायम रखने और एक दूसरे की स्थिति का परस्पर सम्मान करने पर राज़ी हो गये। तब रूसी सरकार ने अंग्रेज़ों से बातचीत करने का आग्रह किया। ११ मार्च १८९५ को ब्रिटिश विदेश मंत्री अर्ल आफ किम्बरले और लन्दन स्थित रूसी राजदूत म० दे स्ताल के बीच पत्रों के आदान प्रदान के फलस्वरूप एक समझौता हुआ। अफगानिस्तान ने शुगनान और रूशान क्षेत्रों को रूस के हवाले कर दिया। बाद में रूस ने उन्हें बुखारा को दे दिया। बुखारा ने आमू-दरिया के बायें तट पर स्थित दरवाज़ का एक भाग अफगानिस्तान को दे दिया। विक्टोरिया झील के पूर्व ब्रिटेन और रूस के प्रभाव-क्षेत्रों को एक रेखा से विभाजित करना था, जो उस झील के पूर्वी सिरे पर एक बिंदु से शुरू होकर एक पहाड़ी रास्ते से होती हुई चीन की सीमा तक चली जायेगी। इस रेखा का निर्धारण एक संयुक्त तकनीकी आयोग द्वारा करना था। ब्रिटेन और रूस दोनों ने यह वादा किया कि पहला इस सीमा रेखा के उत्तर और दूसरा इस के दक्षिण कोई

*वही, पृष्ठ ३९३।
**वही, पृष्ठ ३९६।

राजनीतिक प्रभाव या नियत्रण करने का प्रयत्न नही करेगा। ब्रिटिश सरकार ने जाहिर किया कि ब्रिटिश प्रभाव-क्षेत्र और हिंदूकुश तथा विक्टोरिया झील के पूर्वी सिरे से चीनी सीमा तक की रेखा के बीच का इलाका अफगानिस्तान के अमीर के इलाके का हिस्सा होगा और ब्रिटेन उस पर कब्जा नही करेगा। ब्रिटिश सरकार ने यह भी प्रतिज्ञा की कि वह इस इलाके मे किसी सैनिक चौकी या किले का निर्माण नही करेगी।

पामीर क्षेत्र मे सयुक्त आयोग ने वास्तविक सीमा निर्धारण का काम आसानी से पूरा कर लिया। इस ने भारत और रूस के मध्यवर्ती क्षेत्र के रूप मे आठ मील चौडी "अफगानिस्तान की लम्बी पतली बाहु, जो अपनी उगलिया की नोक से चीन को छ रही थी", निर्मित की। १८९५ का पामीर समझौता "घटनाओं की महत्वपूर्ण शृखला की एक कडी था"। उस दशक मे व्यापक अविश्वास के बावजूद एक और दोस्ताना समझौता हो गया था। मध्य एशिया की घटनाए आखिरकार उस मैत्री-सधि के लिए रास्ता साफ कर रही थी, जो १९०७ मे सम्पन्न हुई।

पामीर समझौते के बाद के वर्षो मे आग्ल रूसी तनाव धीरे धीरे कम होता गया। १८८५ से १८९५ तक के समझौतो के बाद अफगान सीमाओ के बारे मे और किसी झगडे की गुजाइश कम ही रह गई थी। शताब्दी के मोड पर दोना शक्तियो के सबध फिर से बिगडे हुए थे। लाड कजन ने फिर "अग्रिम नीति" को अपनाया। रूस से प्रतिद्वद्विता मचूरिया से फारस तक फैल गई और यहा तक कि तिब्बती पठार भी उसमे शामिल हो गया। रूसी-जापानी युद्ध से आग्ल रूसी सबधो मे दबाव और तनाव का नया दौर शुरू हो गया। जब रूसी समुद्री बेडे न लाल सागर मे ब्रिटिश जहाज "मलाक्का" पकड लिया और मछेरा की नौकाआ के सबध मे डागर तट झगडा हुआ, तो पुरानी शत्रुता पुन जाग उठी।

परन्तु रूसी-जापानी युद्ध आग्ल रूसी सबधो मे एक मोड बिदु साबित हुआ, क्योकि इससे रूसी साम्राज्य का खोखलापन ब्रिटेन के लिए स्पष्ट हो गया। ब्रिटेन का ध्यान अब एक नये और ज्यादा बडे खतर की ओर आकृष्ट हुआ। यह खतरा धीर धीरे उभरते हुए अधिक शक्तिशाली और जोरदार साम्राज्यवादी जमनी की ओर से था, जो अपनी *Flottenpolitik*

Weltpolitik और *Drang nach Osten* नीति के कारण ब्रिटेन के लिए एक दबंग प्रतिद्वंद्वी हुआ जा रहा था। बोअर युद्ध के दिनों में उसका खतरनाक रुख हो गया था और बर्लिन–बगदाद रेलवे बनाने की उसकी योजना पूर्व में ब्रिटेन के प्रभुत्व को जोखिम में डाल रही थी। इसलिए एडवर्ड ग्रे का विश्वास था कि रूस से समझौता बिल्कुल जरूरी है। इसको मोरक्को संकट से, जिसके फलस्वरूप अलजेसिरास सम्मेलन आयोजित हुआ, प्रोत्साहन मिला। रूस फ्रांस का मित्र था, जिससे ब्रिटेन अपने सारे औपनिवेशिक झगड़े निपटा चुका था। फरवरी १९०७ में ब्रिटिश राजनयिक निकलसन ने रूस के विदेश मंत्री इज्वोल्स्की के सामने ब्रिटिश सरकार के विचार की रूपरेखा पेश की। अनेक मसविदों के आदान प्रदान के बाद दोनों शक्तियों ने ३१ अगस्त, १९०७ को सेंट पीटर्सबर्ग में एक इकरारनामे (कनवेनशन) पर हस्ताक्षर किये। यह "फारस, अफ़ग़ानिस्तान और तिब्बत के संबंध में इकरारनामे" के नाम से प्रसिद्ध है। १९०७ की संधि ने "दो ऐतिहासिक प्रतिद्वंद्वियों के बीच झगड़े के कारणों को" दूर किया था।

१९०७ के इकरारनामे में तीन समझौते थे। इनमें पहला फारस के बारे में था। भूमिका में दोनों शक्तियों के बीच "फारस की अखंडता और स्वतंत्रता का सम्मान करने", "सुव्यवस्था बनाये रखने" तथा "अन्य सभी राष्ट्रों के लिए व्यापार के समान अवसर प्रदान करने" की बाबत समझौते की बात की गई थी। इन आडम्बरपूर्ण सिद्धांतों के बावजूद ब्रिटेन और रूस फ़ारस को तीन भागों में बाटने पर सहमत हो गये थे। उत्तरी और दक्षिणी भाग क्रमशः रूस और ब्रिटेन के खास प्रभाव-क्षेत्र मान लिए गये थे और बीच का क्षेत्र तटस्थ छोड़ दिया गया था। दूसरा समझौता अफगानिस्तान के बारे में था। रूसी सरकार ने घोषणा की कि अफगानिस्तान रूसी प्रभाव-क्षेत्र के बाहर है और इस बात पर सहमत हो गई कि उस देश से सारा राजनीतिक सम्पर्क ब्रिटिश सरकार की मध्यस्थता के जरिये रखेगी। ब्रिटिश सरकार ने अपनी ओर से घोषणा की कि अफगानिस्तान की राजनीतिक हैसियत को बदलने या उसके अंदरूनी प्रशासन में हस्तक्षेप करने का उसका कोई इरादा नहीं है। ब्रिटिश और रूसी सरकारों

ने इस बात की पुष्टि की कि अफगानिस्तान मे वे व्यापार के समान अवसर के सिद्धात का पालन करती है। तीसरा समझौता तिब्बत के बारे मे था। ब्रिटेन और रूस दोनो ने तिब्बत मे चीन के अधिराजकीय अधिकारा का माना और उसकी क्षेत्रीय अखडता का सम्मान करने का वादा किया। वे इस बात पर भी सहमत हुए कि इसके अदरूनी प्रशासन मे कोई दखल नही देगे और चीनी सरकार की मध्यस्थता के बिना तिब्बत से वार्तालाप नही करेगे।

१६०७ के इकरारनामे से दोना साम्राज्यवादी शक्तियो के सद्भावनापूण सबधा के युग का श्रीगणेष हुआ,* मगर फारस और अफगानिस्तान के लागा मे इससे नाराज़ी फैली, क्योकि इस पूरी व्यवस्था से उनकी प्रभुसत्ता प्रतिबधित और सीमित होती थी। तिब्बत मे लामा शासन ने लोगा को अधविश्वास और अज्ञान की कालकोठरी मे बद कर रखा था। उनमे इतनी चेतना नही थी कि प्रतिराध करते। और लामा, जो पहले अग्रेजा की चोट सहते रहत थे, इससे प्रसन्न ही हुए कि दो महान यूरोपीय शक्तियो ने तिब्बत पर चीन के अधिराज की पुष्टि कर दी। लेकिन अब जबकि चीनियो ने उनपर अपनी पकड और कडी कर दी है, उन्हाने भारतीय हिमालय मे अपन प्रवास से उस समझौते की निदा की है और कहा है कि वह साम्राज्यवादी था। अफगानिस्तान म अमीर हबीबुल्लाह ने १६०७ के इकरारनामे को कभी स्वीकार नही किया। उन्होने प्रथम विश्व युद्ध के बाद हुए शाति-सम्मेलन से अपने देश की स्वतत्रता की मान्यता की माग की। उनके उत्तराधिकारी अमानुल्लाह ने अग्रेजा के खिलाफ सिर उठाया। इगलैंड के साथ वास्तविक समानता के आधार पर नय सधि सबधा के लिए अपने सघप म उस रूस की नयी सोवियत सरकार की नीति स प्रोत्साहन मिला। २७ माच, १६१६ को सोवियत सरकार ने

---

*सच कहा जाये ता १६०७ के इकरारनामे से आग्ल रूसी प्रतिद्वद्विता केवल कुछ समय के लिए दूर हो सकी थी। दोनो साम्राज्यवादी शक्तिया के बीच पूव म अपना प्रभाव स्थापित करने का सघप खत्म नही हुआ, खासकर, ब्रिटेन इस सघप मे सक्रिय रहा।—स०

है"।* १८६५ मे काग्रेस के ग्यारहवे अधिवेशन मे सुरेद्रनाथ बनर्जी ने अपने अध्यक्षीय भाषण मे चित्राल पर कब्जा करने की कडी आलोचना की। उन्हे विश्वास नही था कि रूस भारत पर हमला करेगा। इसी प्रकार १८६७ मे काग्रेस के वार्षिक अधिवेशन ने अपना गहरा और गम्भीर विश्वास प्रकट किया कि सरकार की सीमा-नीति से देश के मूल हितो को हानि पहुचती है और इसको त्यागने का आग्रह किया।** काग्रेस के १८६८, १६०३ और १६०४ के अधिवेशनो मे भी "अग्रिम नीति" का विरोध किया गया।

अग्रेज १६०७ के आग्ल रूसी इकरारनामे के बाद भी भारत मे रूसी हौए की रट लगाते रहे। पडित नहरु ने १६२८ मे लिखा था

'हम रूस के प्रति शत्रुता की परम्परा मे बडे हुए हैं जिसे अग्रेजो ने बहुत ध्यानपूवक सीचा। कितने ही बरसा से हमारे सामने रूस के आक्रमण का हौआ खडा किया जाता रहा है और इसे हमार शस्त्रास्त्र पर विशाल खच का बहाना बनाया गया है। जारो के जमाने म हम से कहा जाता था कि रूस का साम्राज्य सदा दक्षिण की ओर वढता आ रहा है, समुद्र के रास्ते या स्वय भारत की लालसा से अधीर हो रहा है। जार जा चुका, मगर इगलड और रूस की प्रतिद्वद्विता जारी है और अब हम से कहा जाता है कि भारत को सोवियत सरकार से खतरा है।"***

स्वतत्र भारत ने इस "परम्परा" से नाता ताड लिया है।

---

* *Report of the Seventh Indian National Congress* pp 28—36

* विमल प्रसाद, उपर्युक्त पुस्तक पष्ठ ४३-४४।

** J Nehru *Soviet Russia* Allahabad 1928 p 191

ज़ारशाही का औपनिवेशिक शासन

सामाजिक आर्थिक ढांचा

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में ज़ारशाही रूस ने कोकान्द के खान-शासित प्रदेश को पराजित और उसपर कब्ज़ा कर लिया तथा दो और खान-शासित प्रदेशों—बुखारा और खीवा—के क्षेत्रफल को कम कर दिया, जो अधीन राज्यों के रूप में साम्राज्य के दायरे में शामिल कर लिये गये थे। मध्य एशिया और दक्षिण कज़ाखस्तान में अधिकृत इलाके को गवर्नर-जनरल द्वारा प्रशासित तुर्किस्तान नामक क्षेत्र के रूप में संगठित किया गया। १९१६ में रूसी तुर्किस्तान की जनसंख्या ७४,६८,१००, बुखारा की [illegible] और खीवा की ६,४०,००० थी।*

तुर्किस्तान भी बुखारा और खीवा के खान-शासित प्रदेशों की तरह बहुजातीय था। उनमें उज़बेक, ताजिक, तुर्कमान, कज़ाख, किरगिज़, कराकल्पाक तथा अन्य जातियां थीं। खीवा और बुखारा को अपने अधीन बनाने के बाद ज़ारशाही रूसी सरकार ने इन्हें खान और अमीर की गद्दी की रक्षा अपनी सेना द्वारा की और इन [illegible] राज्यों के निरंकुश शासक हल्कों की मेहनतकश जनता का दमन और शोषण करने में सहायता की।

---

*अ० अ० गार्दियेंको, "[illegible] में सोवियत [illegible] की स्थापना", मास्को, [illegible], पृष्ठ १३। (रूसी [illegible]

औपनिवेशिक काल म तुर्किस्तान, बुखारा और खीवा कृषिप्रधान क्षेत्र थे। १९१३ म कुल १९ फी सदी आबादी शहरो और शहरी बस्तिया म रहा करती थी।* १९१७ की अखिल रूसी कृषि जनगणना के अनुसार तुर्किस्तान म कृषिक धधा म काम करनेवाला की सख्या ५३,७५,५३८ थी, जिनम ३५,८१,८७३ खेती करते थे और बाकी खानाबदोश पशुपालक थे। तुर्किस्तान मे और उससे कही अधिक खीवा और बुखारा म सामती सामाजिक सबधा का प्रभुत्व था। कुछ इलाका म, जसे तुर्किस्तान क कज़ाख किर्गिज़ इलाको और खीवा और बुखारा के तुर्कमान इलाका म अभी भी खानाबदोश लोगा मे पितसत्तात्मक कबायली जीवन पद्धति के अनेक अवशेष दिखाई देते थे।

तुर्किस्तान, लेनिन के शब्दो मे, सीधा उपनिवश था।** बुखारा और खीवा के खान शासित प्रदेशा का अस्तित्व यद्यपि "स्वतत्र" रूप म था, वास्तव म वे तुर्किस्तान से बहुत कम भिन्न थे और "उपनिवेशो की ही तरह क थ'।*** मध्य एशिया मे पूजीवादी विकास की प्रक्रिया बहुत धीरे और असमान रूप से चल रही थी, क्योकि ज़ारशाही तथा बुखारा और खीवा के सामती शासन जान-बूझकर सामती और पितृसत्तात्मक सबधा को बनाये रखने के प्रयत्न कर रहे थे। इसीलिए यह इलाका अक्तूबर क्राति तक जारशाही रूस का अत्यत पिछडा हुआ कृषिक उपनिवेश था। यह उन पिछडे हुए देशो मे से था, जहा "पूजीवाद-पूव सबध'**** अभी भी प्रधान थे।

यह सही है कि ज़ारशाही सरकार न तुर्किस्तान मे कुछ भूमि-सुधार किये थे, जिनस मध्य एशिया के गावा म पूजीवादी सबधो क विकास का रास्ता खुल गया था। परन्तु इन सुधारा ने श्रमजीवी किसाना को उनकी सामती अधीनता और गुलामी से मुक्ति नही दिलाई। बडे ज़मीन्दार

* १९६३ म मध्य एशिया का अथतत्र, साख्यिकीय सर्वेक्षण" ताशकन्द, १९६४, पृष्ठ ८। (रूसी सस्करण)

** V I Lenin *Collected Works*, vol 22, p 338

*** वही, खण्ड २५, पृष्ठ २७।

**** वही, खण्ड ३१, पृष्ठ २४२।

बटाईदारों का शोषण करते रहे। सबसे प्रचलित रूप चैरीकारी था, जिसका मतलब यह था कि किसान को पैदावार के चार भागों में से सिर्फ एक भाग मिलता था। चूंकि अधिकांश किसानों के पास खेती के लिए अपने जानवर, कृषि के औजार और बीज आदि नहीं होते थे, वे जमींदारों और महाजनों के शिकंजे में पड़ जाया करते थे।

सिंचाई के क्षेत्र में औपनिवेशिक काल में बहुत कम प्रगति हुई थी। १९१० में पूरे मध्य एशिया में केवल ४७ ५८ ००० देसियातीना (१ देसियातीना = १०९ हैक्टर) जमीन पर सिंचाई होती थी जो पूरे इलाके का केवल २ ६ प्रतिशत था। तुर्किस्तान के पांच ओब्लास्तों (प्रदेशों) में सिंचित भूमि का पूरा क्षेत्रफल २८ ०८ ००० और बुखारा में १६ ००,००० देसियातीना था।* ट्रांसकास्पियन ओब्लास्त में और ताशकन्द के दक्षिण-पश्चिम बजर स्तेपी में कुछ सिंचाई का काम शुरू किया गया था। रिचर्ड अ० पियर्स सिंचाई के क्षेत्र में औपनिवेशिक शासन की उपलब्धियों का उल्लेख करते हुए लिखता है

'अर्द्ध शताब्दी के दौरान में केवल दो बड़ी सिंचाई प्रयोजनाएं रूसी मध्य एशिया में सम्पन्न की जा सकीं—एक बजर स्तेपी में और दूसरी मर्गाब में। इनमें से किसी ने भी उनके डिजाइन बनानेवालों की प्रारम्भिक उम्मीद या उन लोगों की महान आशाएं पूरी नहीं कीं, जिन्होंने इस पूरे इलाके में कहीं विशाल उपलब्धियों की कल्पना की थी।'**

बजर स्तेपी में व्यापक नहर निर्माण की योजना १८७४ में गवरनर जनरल फान काउफमन के आदेशानुसार शुरू की गई, मगर अंत में १८७९ में उसे त्याग देना पड़ा। स्थानीय लोग इसे तंगुज आरीक या 'सूअर की नहर' कहा करते थे। १९१२ में अ० व० क्रिवोशेईन ने एक भारी भरकम योजना रखी जिसमें नयी सिंचित भूमि पर १५ ०० ००० रूसी किसानों को बसाने की योजना भी शामिल थी। इसपर कभी अमल नहीं हुआ।

*प० इ० ल्याश्चेंको "सोवियत संघ के अर्थतंत्र का इतिहास", मास्को १९४८, खण्ड २ पृष्ठ ५४३।

** R A Pierce *Russian Central Asia 1867—1917* Berkeley and Los Angeles 1960 p 181

तुर्किस्तान मे और उससे ज्यादा खीवा और बुखारा मे कृषि और पशुपालन दोनो ही पुराने जमाने के थे। कृषि मे प्रयुक्त औजार आदिकालीन थे जिससे श्रम उत्पादकता और भूमि की पैदावार बहुत कम थी। किसानो को कृषि-तकनीक का कोई ज्ञान नही था और उन्होने पशु-चिकित्सा विज्ञान का नाम भी नही सुना था। भूमि जल और पशु जमीदारो और कुलकों के हाथो मे सकेन्द्रित थे। तुर्किस्तान के कुल किसान परिवारो मे ६५ प्रतिशत भूमिहीन किसान थे।* खीवा और बुखारा मे सामती प्रभुत्व की प्रधानता थी। खीवा मे खानो तथा अन्य सामती जमीदारो की निजी जमीन कुल सिंचित और उपजाऊ जमीन का दो तिहाई थी, सातवा भाग राज्य की तथा वक्फ जमीन थी और किसानो के स्वामित्व मे केवल दसवा भाग जमीन थी।** बुखारा मे कुल खेती योग्य जमीन का ६५ प्रतिशत जमीदारो की और २४ प्रतिशत वक्फ जमीन थी।*** करो का बडा बोझ किसानो के ऊपर था। खीवा मे किसानो को २५ किस्म के और बुखारा मे ५५ किस्म के कर देने पडते थे। किसानो को नहरो के निर्माण और मरम्मत का काम करना पडता था और इस प्रकार के श्रम का प्रयोग सामती वर्ग अक्सर अपने निजी फायदे के लिए करते थे। खीवा मे दास प्रथा भी थी। जे० ह्वीलर ने जर्मन अन्वेषक रिक्मेर-रिक्मेस के कुछ असंगत वाक्यो तथा बरतोल्द के अप्रासंगिक उद्धरणो के आधार पर यह सिद्ध करने का जो प्रयास किया है कि बुखारा मे जीवन "समृद्ध" था, बिल्कुल विश्वासप्रद नही है।**** यह कह देना जरूरी है कि बरतोल्द ने भी शूलर की राय का उल्लेख किया है कि बुखारा के अमीर मुजफ्फर

---

*अ० अ० गादियेंको उपरोक्त पुस्तक पृष्ठ २३।

**म० य० यूल्दाशेव, "प्राच्यविदो के पहले अखिल सघीय वैज्ञानिक सम्मेलन की लेख-सामग्री", ताशकन्द, १९५३, पृष्ठ २०५। (रूसी सस्करण)

***म० हिक्मातोव, 'जरफशान प्रदेश मे भूमि सुधार तथा सिंचाई व्यवस्था', ताशकन्द, १९५३ पृष्ठ ३–४। (रूसी सस्करण)

**** G Wheeler *The Modern History of Soviet Central Asia* London 1964 p 85

से लोग "घणा करते थे क्योंकि वह अयायी और अत्याचारी था"।
बरतोल्द लिखते है कि उसके शासन काल मे 'जबरदस्ती वसूली की
व्यवस्था थी जिससे लोग तबाह हो जाते थे"।* वह बताता है कि रूसी
अखबारो मे अमीर की लम्बी चौडी प्रशसा का जो विरोध किया गया है,
वह न्यायपूर्ण है।**

मध्य एशिया पर कब्जा होन के बाद उसको प्रधान देश के उद्योगो
के लिए कच्चा सामान सप्लाई करने का स्रोत बना दिया गया। ज़ारशाही
प्रशासन कपास की खेती पर बहुत ध्यान देता था और गेहू तथा कृषि
की अय पैदावार के बदले उसके उत्पादन को प्रोत्साहित करता था। तुर्किस्तान
मे भूमि प्रशासन के निदेशक ने १९१३ म लिखा था तुर्किस्तान के हर पूद
(१ पूद = १६ ३८ किलोग्राम) गेहू का मतलब है रूसी और साइबेरियाई
गेहू स प्रतियोगिता, हर पूद कपास का मतलब है अमरीकी कपास से
प्रतियोगिता। इसलिए यह कही अच्छा है कि इस इलाक मे खाद्यान का
आयात किया जाय और वहा की सिंचित जमीन को कपास की खेती के
लिए छोड दिया जाये।'*** बाहर से मगवाये हुए कपास पर अधिक
चुगी लगी होने के कारण अदरूनी मडी मे प्रशासन ऊचा दाम वसूल
करता था, तथा कपास की खेती तथा अय कम लाभदायक खाद्यान्न के
लिए प्रयुक्त भूमि पर समान कर लगाने की नीति से कपास की खेती को
बढावा मिला जिससे वह कृषि की मुख्य नक्दी फसल हो गई। इसके
अलावा प्रशासन ने अनेक कृषि-सबधी कदम उठाये जिनसे कपास की खेती
के विकास मे सहायता मिली। १८९२ म ३० लाख पूड अमरीकी किस्म
का कपास तुर्किस्तान से रूस मे निर्यात किया गया। कपास का निर्यात
१८८० मे ८ ७३ ००० पूड से बढकर १९०० म ४९ ६० ००० पूड और
१९१३ म १,३६ ९७,००० पूड हो गया। उज्वेको की धरती मध्य एशिया

*व० व० बरतोल्द रचनाए, खण्ड २, भाग १, मास्को, १९६३,
पृष्ठ ४२०-४२१। (रूसी सस्करण)

**वही पृष्ठ ४२४।

***'उज्बकिस्तान के जनगण का इतिहास", ताशकन्द, १९५०, खण्ड २,
पष्ठ २९१। (रूसी सस्करण)

के कपास-क्षेत्र का केंद्र बन गयी, यद्यपि कपास की खेती दक्षिणी किगिजस्तान तथा आधुनिक तुर्कमानिस्तान और ताजिकिस्तान के इलाकों मे भी होती थी।

परन्तु कपास की खेती के विकास से **देहकानो** (किसानो) की भौतिक स्थिति मे कोई सुधार नही हुआ। जब प्रधान दशीय पूजी स्थानीय फर्मों के जरिये कपास की खेती के लिए वित्त प्रदान करने लगी तो एक नया शोषक सामने आ गया। कपास का खरीदार, जो उद्योगपति और कपास उत्पादक के बीच एक प्रकार के मध्य जन का काम करता, उनका शोषण करता था। **देहकानो** को जो ऋण दिया जाता था, उसके सूद की दर इन मध्य जनो के नाते बहुत ऊची होती थी। मध्य जन निजी बैंको और कपास फर्मो से ८–६ प्रतिशत दर पर ऋण लेते और उसे कपास उत्पादकों को ४०–६० प्रतिशत सूद पर दिया करते थे।* अधिकाश छोटे किसानो पर कर्ज का इतना बोझ हो गया था कि यह जीवन भर अदा नही किया जा सकता था। अपना कर्ज चुकाने के लिए उन्हें अक्सर **बाई** के हाथ अपनी जमीन बेचनी पडती थी।

१९१४ मे सरकारी आकडो के अनुसार फरगाना क्षेत्र मे कुल किसान परिवारो मे २५ प्रतिशत अपनी जमीनो की बिक्री या बधक रखने के कारण भूमिहीन हो गये थे।** समरकन्द प्रदेश मे कुल किसान परिवारो मे ३५७ प्रतिशत और फरगाना मे ५४५ प्रतिशत के पास अक्तूबर क्रांति से पहले केवल एक **देसियातीना** जमीन थी। कपास की खेती के विकास के साथ कृषिक अर्थतत्र की विक्रेयता बढी, जिससे गावो मे प्रारम्भिक पूजीवादी सबधो का दखल हुआ परतु उजरती श्रम का प्रयोग करनेवाले कपास के बडे पूजीवादी बागानो की उत्पत्ति नही हुई। मध्य एशिया मे बटाई की व्यवस्था ही प्रधान व्यवस्था बनी रही।

---

*अ० व० शिवोशेर्दैन '१९१२ मे तुर्किस्तान क्षेत्र की यात्रा का विवरण', पृष्ठ १८। (रूसी सस्करण)

**त० नर्पोमनिन, "उज्बेकिस्तान मे समाजवाद के निर्माण का ऐतिहासिक अनुभव", ताशकन्द १९६०, पृष्ठ ४०। (रूसी सस्करण)

तुर्कमान, किर्गिज़ और कज़ाख खानाबदोशों तथा कराकल्पाकों और भीतरी इलाके की पहाड़ियों में रहनेवाले ताजिकों की सामाजिक संरचना की ध्यानपूर्वक छानबीन करने की आवश्यकता है। इन खानाबदोश लोगों में पितृसत्तात्मक कबायली सामाजिक संस्थाओं के अवशेष काफी प्रबल थे। उनमें जटिल कबीला-कुल व्यवस्था के अस्तित्व से कुछ लेखकों को यह कहने का आधार मिल गया कि कबायली व्यवस्था २० वीं सदी के प्रारम्भ तक कायम थी। परन्तु वास्तव में इन लोगों में कबायली व्यवस्था कई सदी पहले नष्ट हो चुकी थी और १८ वीं और १९ वीं सदियों में उसकी सामाजिक संरचना में केवल उसकी परम्पराएं रह गई थी। उनके खानाबदोश तथा अर्द्ध-खानाबदोश पशुपालन अर्थतंत्र के कारण पितृसत्तात्मक परम्पराओं के अवशेष बहुत दिनों तक बने रहे। तुर्कमानों में खान और बेक, किर्गिजों में मानप* और बी और कुलक बाई जैसे शोषक वर्ग की प्रबल इच्छा थी कि पितृसत्तात्मक-कबायली परम्पराओं को कायम रखें ताकि उनके द्वारा गरीबों के शोषण पर परदा पड़ा रहे। ऐसे समाज में जहां आर्थिक असमानता बहुत हो, चरागाहों भूमि और जल के समान स्वामित्व का कोई अर्थ नहीं हो सकता था। गरीब खानाबदोशों के शोषण का रूप यद्यपि पितृसत्तात्मक था मगर उसका सार फिर भी सामंती था।

तुर्कमानों में कृषि योग्य भूमि और पानी का बटवारा ग्रामीण समुदाय द्वारा हर साल होता था। उस रिवाज को सनानशिक कहा जाता था और इसका आधार था भूमि और पानी के समान कबायली स्वामित्व का न्यायिक भ्रम। कबीले के सदस्य नहरों की सफाई और युद्ध में अपने आउल (गांव) की रक्षा करते थे। इसलिए भूमि और पानी का बटवारा बड़ी आयु के लोगों में किया जाता था जो नहरें साफ करने और खोदने के योग्य हों और हथियार उठा सकें। आगे चलकर यह परम्परा बदल गई और भूमि और पानी में हिस्सा केवल कबीले के विवाहित सदस्यों को दिया जाता था। धनी खान बेक और बाई लोग अपने छोटे बच्चों का भी विवाह कर देते थे और इस प्रकार उन्हें भूमि अपने हाथों में सकेन्द्रित करने का अवसर

*मानप—कृषि योग्य भूमि तथा चरागाहों के धनी स्वामी।

मिल गया। इसके विपरीत गरीब लोग वध का ऊचा दाम होने के कारण विवाह नही कर सकते थे, अधिकतर भूमिहीन होते जाते थे। चरागाहो का उपयोग कबायली परम्परा के अनुसार कबीले के सभी सदस्य कर सकते थे परन्तु कुआ और कुड जिनके बिना पशुपालन नही हो सकता था, धनी लोगो के कब्जे मे थे।

इसी प्रकार किगिज शाषक वग भी अपने दरअसल सामती शोषण पर परदा डालने के लिए कबायली पितसत्तात्मक परम्पराओ का प्रयोग करते थे। चरागाह यद्यपि कबीले की सम्पत्ति थी मगर वास्तव मे उनपर बी और मानपो ने अधिकार जमा रखा था, जो लोगो का सामती शोषण किया करते थे। पशुधन बहुत थोडे हाथो मे केद्रित हो गया था। इसकी पुष्टि एक छानबीन के नतीजे से भी होती है, जो पिश्पक उयेज्द (जिला) मे १६१२–१६१३ मे की गई थी। कुल परिवारो मे ५ ५२ प्रतिशत उच्च वग के मानपो, बी और बाई लोगो के परिवार थे जिनके पास ३३ ५१ प्रतिशत पशु थे, जबकि ४६ २२ प्रतिशत परिवारो के पास केवल ११–१२ प्रतिशत पशु थे।* ४७ ७५ प्रतिशत परिवारो के पास खेती के औजार नही थे। इससे जाहिर होता है कि किगिज ग्रामीण समाज मे वग भेद किस हद तक बढ चुका था। चरागाहो के समान प्रयोग तथा भूमि पर समान कबायली स्वामित्व के अनेक परम्परागत अधिकारो के बावजूद ये भेद कम नही थे।

तुर्किस्तान का प्रशासन गृह मत्रालय के नही, बल्कि युद्ध मत्रालय के अधीन था। जार द्वारा नियुक्त गवरनर जनरल को व्यापक अधिकार प्राप्त थे और उस क्षेत्र का सारा सैनिक और नागरिक प्रशासन उसके हाथो मे केद्रित था। बुखारा और खीवा के मामले मे भी उसे बडा अधिकार था। रूसी अभिजात वग तथा सैनिक अफसरो मे से वह ओब्लास्त और उयेज्द के अधिकारियो को नियुक्त किया करता था।

---

*"मध्य एशिया और कजाखस्तान के जनगण" भाग २, मास्को, १६६३, पृष्ठ १७८। (रूसी सस्करण)

ओब्लास्त प्रशासन का प्रधान सैनिक गवरनर था, जिसके हाथो म सभी सैनिक और नागरिक मामले, यहा तक कि न्याय प्रशासन भी केंद्रित था। उयेज्द और नगर प्रशासन के प्रधान साधारणत सैनिक अफसरो मे से नियुक्त किये जाते थे। ओब्लास्त और उयेज्द स्तर पर सैनिक प्रशासन के अलावा ज़ारशाही सरकार ने तथाकथित जननिर्वाचित ग्राम प्रशासन का भी उपयोग किया। वोलोस्त (चन्द गावो की निम्नतम प्रशासकीय इकाई) शासको तथा ग्राम अधिकारियो–स्तारशोना, आकसक्कल और क़ाज़ी की नियुक्ति चुनाव के ज़रिये होती थी। परन्तु इन नियुक्तियो की मजूरी ओब्लास्त के सैनिक प्रशासक से लेनी पडती थी। ये नियुक्त किये गये अधिकारी उयेज्द शासको के नियत्रण मे काम करते थे। चुनाव निरा धोखा था, क्योकि केवल धनी लोग ही चुने जा सकते थे। अपने धन और प्रभाव की बदौलत बाई और सामन्ती ज़मीदार हमेशा इन पदो पर कब्ज़ा किये रहते थे। इन चुनावो मे रिश्वत का भी बडा हाथ था, इसे काउट पलेन ने तुर्किस्तान की अपनी निरीक्षण रिपोर्ट म स्वीकार किया है।* इसके अलावा सैनिक गवरनर को अधिकार था कि चुनाव के नतीजे बदल दे या चाहे तो वोलोस्त प्रशासक ग्राम स्तारशोना (प्रधान) और क़ाज़ी को बिना किसी चुनाव के स्वय नियुक्त कर दे। चूकि इन निर्वाचित अधिकारियो तथा औपनिवेशिक प्रशासन का वग हित एक ही था, यानी गरीबो का शोषण करना इसलिए उन्होने एक दूसरे से अच्छी तरह सहयोग किया। निर्वाचित स्थानीय अधिकारी अपनी मेहनतकश जनता के खिलाफ रूसी उपनिवेशवादियो से मिल जाते थे। उससे तरह-तरह की बलपूवक वसूलिया तथा उसके विरुद्ध अधिकार का दुरुपयोग रोजमर्रे की बात थी। आर० पियस लिखता है कि अधिकाश उयेज्द अधिकारी "स्थानीय लोगो से अतिरिक्त कर वसूल करते थे जिससे न केवल सामान्य खच ही पूरा होता था, बल्कि व आनन्दपूण जीवन व्यतीत कर सकते थे'।**

---

*क० क० पलेन "तुर्किस्तान क्षेत्र की निरीक्षण रिपोर्ट। ग्रामीण शासन', सेट पीटसबग १९१० पृष्ठ ९७–१०३। (रूसी सस्करण)

**आर० पियस, उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ ७०।

रूस का सैनिक प्रशासन अपने सबसे खराब अफसरों से मुक्ति पाने के लिए साधारणत उन्हें तुर्किस्तान भेज दिया करता था।"*

खीवा और बुखारा के खान प्रशासन सामंती निरकुश बादशाही का नमूना थे। खान और अमीर को अपनी प्रजा पर जीवन मरण का पूरा अधिकार था। वे जमींदार अभिजात वर्ग तथा मुल्लाओं की सक्रिय सहायता से उनपर शासन करते थे। खीवा का खान शासित प्रदेश २२ **बेकदारियों** में बटा हुआ था और बुखारा का २६ **हाकिमदारियों** में। **बेकदारी** का प्रधान **बेक** होता था और **हाकिमदारी** का प्रधान **हाकिम**, जिनको खान और अमीर नियुक्त करते थे। यह अधिकारी मनमाने ढंग से अनेक छोटे अधिकारियों की सहायता से शासन करते थे।

अगरचे ज़ारशाही जान-बूझकर मध्य एशिया को अपना कृषिक कच्चे सामान का स्रोत बनाये रखना चाहती थी पर अपने सैनिक और रणनीतिक हितों और रूसी पूंजीपति वर्ग के संकीर्ण हितों से मजबूर होकर उसे ३,३७७ किलोमीटर रेलवे लाइन और १४ रेलवे मरम्मत वर्कशाप और डिपो बनाने पड़े, जिनमें सब मिलाकर लगभग २४,००० मजदूर काम करते थे। मध्य एशिया में रेलवे का निर्माण पिछली सदी के नवें दशक के मध्य में शुरू हुआ। १८८८ में समरकंद को रेल द्वारा क्रास्नोवोदस्क से १८९८ में अन्दीजान से और एक साल बाद ताशकन्द से जोड़ दिया गया था। १९०६ में ताशकन्द को एक शाखा लाइन के जरिये ओरेनबुर्ग से मिला दिया गया था। रेलवे के निर्माण से मध्य एशिया के भीतर विभिन्न इलाकों के आर्थिक अलगाव का और पूरे मध्य एशिया के अलगाव का भी अंत होने लगा। परन्तु विभिन्न क्षेत्रों के अन्दरूनी एकत्रीकरण पर रेलवे का प्रभाव अभी नगण्य था। फिर भी यह एक नयी परिघटना थी जिससे इस क्षेत्र के भविष्य के लिए नयी सम्भावनाएं उत्पन्न हो गई।

रूसी पूंजीपति वर्ग को इस इलाके में कच्चे माल की तैयारी का उद्योग विकसित करना पड़ा। यह उसके अपने हित के अनुसार था और उसे इससे प्रतियोगिता का कोई खतरा नहीं था। कपास ओटाई, तेल, साबुन,

---

*वही पृष्ठ ६८।

वग की उत्पत्ति धनी बाई लोगो, साहूकारो और व्यापारियो से हो रही थी, परन्तु अभी वह कमज़ोर था और अपने बडे उद्योग नही स्थापित कर सकता था। इसलिए उसने रूसी पजीपति वग पर अपनी निभरता का स्वीकार कर लिया। मध्य एशिया की जातियो मे केवल उज्बेक और कजाख मे राष्टीय पूजीपति वग की उत्पत्ति हो चुकी थी, किगिज़, ताजिक और तुकमान मे इसका कोई महत्वपूण विकास नही हुआ था। औद्योगिक सवहारा भी सख्या की दृष्टि स कम था। उज्वेको मे भी जहा इसका सख्या दूसरी जातियो की तुलना म अधिक थी, पूरी आबादी मे यह नगण्य था। क्राति स पहले केवल १२,७०२ उज्बेक औद्योगिक मज़दूर थ।*
जहा तक तुकमानो किगिज़ो और ताजिको का सवाल है, उनके पूजीवादी विकास का स्तर और कम था। किगिज़स्तान मे कोई उल्लेखनीय राष्ट्रीय पूजीपति वग नही था और सभी खनन उद्योग रूसी और तातार पूजीपतियो के हाथ मे थे। किगिज़ मज़दूरो की सख्या १९१३ मे केवल ११४४ था।** तुकमानिस्तान म औद्योगिक विकास केवल ट्रासकास्पियन इलाके तक सीमित था और तुकमान मजदूरो की सख्या कम थी। १९१६ मे केवल २४२ तुकमान औद्योगिक मज़दूर थे जिनमे निपुण केवल सात थे।*** ताजिकिस्तान मे कोई आधुनिक उद्योग नही था और वतमान लेनिनाबाद इलाके के उत्तर मे कपास शोधन और तेल और कायला खनन के जो छह छाटे उद्यम थे, उनमे केवल २०६ ताजिक औद्योगिक मज़दूर काम करते थे।****

अत क्राति से पहले मध्य एशिया की अथ व्यवस्था ऐसी अथ व्यवस्था थी जिसपर सामती उत्पादन-सबधो का प्रभुत्व था। लेनिन ने कहा कि तुकिस्तान उन दशो म था, जो पजीवादी विकास के रास्ते पर उन्नति नही कर सके थे और जहा "औद्योगिक सवहारा ' किसी महत्व का नही

---

*म० वहाबोव उपरोक्त पुस्तक, पष्ठ १४५।

**"सावियत सघ मे समाजवादी जातियो का निर्माण", मास्को, १९६२ पष्ठ ४६६। (रूसी सस्करण)

***वही, पृष्ठ ५६७।

**** अ० अ० गोदिमेंको, उपराक्त पुस्तक पृष्ठ २४।

था।* लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि [illegible] मध्य एशिया में पूंजीवादी संबंधों का जन्म नहीं हुआ था। [illegible] है कि यह इलाका पूंजीवादी विकास की पूरी [illegible] फिर भी वह रेलवे तथा कृषि कच्चे माल के [illegible] उत्पत्ति का बकौल पूंजीवादी विकास के [illegible] था।

जारशाही उपनिवेशवादियों [illegible] और [illegible] लोगों की स्वास्थ्य रक्षा की [illegible] और [illegible] विकास की। तुर्किस्तान में केवल [illegible] सब शहरों में काम करते थे। [illegible] सुविधा नहीं था। [illegible] और [illegible] सेवा का कोई प्रबंध ही [illegible] और [illegible] नीमहकीमों और पादरियों [illegible] था।

शिक्षा के क्षेत्र में [illegible] के राज्य-बजट का [illegible] और [illegible] किया जाता था और [illegible] प्रशासकीय कामों के लिए [illegible] ३३५ राजकीय [illegible] विद्यार्थी थे। और १८६६ में वहां ११ [illegible] ८,००० व्यक्ति विभिन्न प्रकार के [illegible] और खीवा में [illegible] १९२० में खीवा में [illegible] की संख्या ४० [illegible] तुर्कमानों में [illegible] बुखारा राज्य में [illegible] और खान [illegible] और स्त्रियों [illegible] तुर्कमानों का [illegible]

---

*V. I. Lenin, Collected Works, [illegible]

**[illegible]

सास्कृतिक विकास

औपनिवेशिक काल मे सास्कृतिक क्षेत्र मे कुछ महत्वपूर्ण गतिविधियो का उल्लेख किया जा सकता है, यद्यपि आम तौर पर यह सास्कृतिक पिछडेपन का काल था। तुर्किस्तान म लौकिक स्कूला तथा अन्य सास्कृतिक सस्थाना का खुलना बहुत महत्वपूर्ण था। पहला रूसी स्कूल समरकन्द मे १८७० मे खुला।* तत्कालीन गवरनर-जनरल काउफमन ने इस बात को बहुत महत्त्व दिया कि स्थानीय लोग अपने बच्चो को रूसी स्कूलो म भेजे, जहा लौकिक तथा वैज्ञानिक विषयो की शिक्षा दी जाती थी। परन्तु रूसी स्कूलो मे बहुत कम स्थानीय विद्यार्थी गये। ज्यो ज्यो वर्ष बीतते गये उनकी लोकप्रियता और कम होती गई। इसका कारण यह था कि रूसी छात्रो को ईसाई धर्म की शिक्षा दी जाती थी, परन्तु मुस्लिम धार्मिक शिक्षा का प्रबध नही था।**

स्थानीय छात्रो को स्कूलो म आकर्षित करने के लिए एक और तरीका मिश्रित रूसी स्थानीय स्कूलो की स्थापना था। ऐसा एक स्कूल ताशकन्द मे दिसम्बर १८८४ मे एक धनी उज्बेक सैयद गनी की पहलकदमी पर स्थापित किया गया। *** १९११ तक १०५ ऐसे स्कूल कायम हो चुके थे। स्कूल का पाठ्यक्रम दो भागो मे बटा था, यानी रूसी भाषा और गणित शास्त्र आदि, जो रूसी शिक्षक पढाता था, और मुस्लिम धार्मिक शिक्षा मुल्ला दिया करता था।****

स्थानीय लोगो के सास्कृतिक जीवन म ये नयी गतिविधिया बहुत महत्वपूर्ण थी। रूसी सस्कृति के प्रभाव से पुराने स्कूलो के सुधार का ख्याल पैदा हुआ, ताकि उन्हे जीवन की नयी स्थितियो के अनुकूल बनाया जाय। नये स्कूलो को नयी प्रणाली के स्कूल कहा जाता था, क्योकि उन्होने अध्ययन की ध्वनिक प्रणाली अपनायी थी। इस उसूल ए जदीद (नये उसूल)

---

*व० व० बरतोल्द, रचनाए, खण्ड २ भाग १, पृष्ठ २६६।

*वही पृष्ठ ३०२।

**वही पृष्ठ ३०५।

*** 'उज्बेकिस्तान के जनगण का इतिहास" खण्ड २, पृष्ठ ३२६।

भूगोलविद, भूविज्ञ तथा जीवविज्ञानी आये, जसे उदाहरण के लिए, प० प० सेम्योनोव तियानशानस्की नि० अ० सेवेर्त्सोव, अ० प० फेन्चनको, इ० व० मुश्केतोव, ग० द० रोमानोव्स्की वगैरह। व० व० बरतोल्द और न० इ० वेसेलाव्स्की ने मध्य एशिया के इतिहास और सस्कृति के बारे मे बहुमूल्य सामग्री जमा की तथा उसका अध्ययन करने म अग्रणी भूमिका अदा की। ताशकन्द मे १८७० मे एक सावजनिक पुस्तकालय खोला गया जिसके लिए सेट पीटसबग और मास्को की विभिन्न सास्कृतिक सस्थाओ ने तथा अनक रूसी विद्वानो ने पुस्तके दान की। अ० प० फेन्चेनको की पहलकदमी पर १८७१ मे ताशकन्द मे एक सग्रहालय आयोजित किया गया था। पत्र पत्रिकाओ का पकाशन तथा पुस्तको का मुद्रण भी उस इलाके के जीवन मे एक महत्वपूण नयी घटना थी। रूसी वज्ञानिको की पहलकदमी पर भूगोल मानव विज्ञान पुराविद्या, खगोल विज्ञान और चिकित्सा विज्ञान के अध्ययन के लिए अनेक वैज्ञानिक सस्थाए सगठित की गइ। इन सब बाता से मध्य एशिया के सास्कृतिक जीवन को समृद्ध बनाने म अवश्य ही योगदान मिला।

इन गतिविधियो का स्थानीय बुद्धिजीवियो पर प्रबल असर पडा और स्थानीय लोगो में बौद्धिक जागरण तेजी से फैला। प्रगतिशील रूसी सस्कृति के प्रतिनिधियो के साथ सम्पर्क से उनमे नये लौकिक ज्ञान की आकाक्षाओ को प्रोत्साहन मिला और इसके अध्ययन के लिए उनम शीघ्र ही एक आन्दोलन चल पडा। नयी सास्कृतिक और शक्षणिक प्रगति के लिए इस आन्दोलन को अक्सर भ्रामक रूप मे **जदीदियत** से जोड दिया जाता है। **जदीदियत** का यह मूल्याकन कि वह स्थानीय बुद्धिजीवियो का प्रगतिशील आन्दालन था इस ऐतिहासिक गलतफहमी का नतीजा है कि २० वी सदी के प्रारम्भ मे मध्य एशिया मे ज्ञान प्रसार का जनवादी आन्दोलन लुप्त हो चका था और उसका स्थान **जदीदियत** ने ले लिया था। इसके अलावा कुछ अनुसधानकर्ता **जदीदियत** को प्रगतिशील आन्दालन के रूप मे इसलिए भी समझने लगे है कि अनेक देशा म जिन्होने हाल ही म औपनिवेशिक शासन स मुक्ति प्राप्त की है, राष्ट्रीय पूजीपति वग ने राष्ट्रीय

था। कुछ मुद्दत मे एक विचारधारात्मक तथा राजनीतिक आन्दोलन की रचना हुई, जिसने ऐतिहासिक साहित्य मे **जदीदियत** का नाम पाया। प्रसिद्ध सोवियत उज्बेक इतिहासकार म० ग० वहाबाव के शब्दो मे '**जदीदियत** औपनिवेशिक मध्य एशिया के स्थानीय पूजीपति वर्ग की राष्ट्रवादी विचारधारा के रूप मे उत्पन्न हुई।' उनके अनुसार "इस विचारधारा की उत्पत्ति मजदूरो के क्रान्तिकारी आदोलन तथा जनव्यापी राष्ट्रीय स्वाधीनता सघर्ष के दौर मे हुई, जब स्थानीय पूजीपति वर्ग ने आम जनता से नाता तोड लिया और जारशाही तथा रूसी पूजीपति वर्ग का समर्थन करने लगा।"*

मध्य एशिया की पूजीवादी राजनीतिक विचारधारा को जिस चीज ने एशिया तथा अफ्रीका के अनेक देशो की राजनीतिक विचारधारा से अलग किया वह मध्य एशिया की विशेष औपनिवेशिक परिस्थिति थी। एशिया और अफ्रीका के अनेक देशो मे पूजीवादी राजनीतिक विचारधारा का विकास ऐसी स्थिति मे हुआ, जब मजदूर आन्दोलन कमजोर था, परन्तु मध्य एशिया मे जो जारशाही रूसी साम्राज्य का अग था, स्थानीय और रूसी दोनो ही पूजीपति वर्ग रूसी मजदूर वर्ग के शक्तिशाली आन्दोलन से भयभीत थे। इसके अलावा मध्य एशिया मे राष्ट्रीय पूजीपति वर्ग इतना निर्बल था कि कोई स्वतत्र भूमिका नही अदा कर सकता था। वह केवल साम्राज्यवादी रूसी पूजीपति वर्ग के एजेंट का काम करता था।

१६०५–१६०७ की क्रान्ति के वर्षो मे **जदीदियो** का कार्यकलाप व्यापक रूप से फैला हुआ था। १६०६ से १६०६ तक उन्होने कई पत्र प्रकाशित किये जैसे 'तरक्की', "खुरशेद शोहरत' और 'एशिया"। **जदीदी** अखबारो ने सर्व-तुर्कवाद तथा सर्व-इस्लामवाद का प्रचार किया और प्रभावशाली व्यापारियो और बाई लोगो को इस्तेमाल करके जनगण की

---

*म० वहाबाव जदीदियत का प्रतिक्रियावादी चरित्र तथा जन विरोधी भूमिका – महान अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति से पूर्व तथा इसके दौरान मे जातीय प्रश्न (सोवियत विज्ञान अकादमी की वैज्ञानिक समिति की बैठक के लिए लेख-सामग्री), पहला भाग मास्को, १६६४ पृष्ठ ५२–५३। (रूसी संस्करण)

इस प्रचार तले इकट्ठा करने का प्रयास किया। जदीदी अखबार जनगण की मुसीबतो, श्रमजीवी किसानो और कारीगरो की बढती हुई दरिद्रता, बाई लोगो तथा साहूकारा द्वारा उनके शोषण तथा औपनिवेशिक प्रशासन की मनमानी धाधली के बारे मे कुछ नही लिखा करते थे। परन्तु लोगो को तो ठीक यही सवाल विचलित कर रहे थे। इस लिए कोई आश्चर्य नहीं कि जदीदी अखबारो का जनगण मे कोई प्रभाव नही था। १९१६ के विद्रोह के समय जदीदियो ने जनगण का विरोध किया, जारशाही सरकार के लामबन्दी अभियान का समथन किया। उन्होंने जनता को अपना विरोधी बना दिया, जो उनकी प्रतिक्रियावादी भूमिका को समझने लगी थी।

यह सही है कि धामिक तथा सामती तत्वो के मुकाबले मे जदीदियत म कुछ उदारवादी प्रवृत्तिया थी। जदीदी नई यरोपीय सस्कृति का समथन तथा पुरानी सामती प्रणाली का विरोध करते थे। यह बात उनमे और अन्य प्रबुद्ध जनवादियो मे समान रूप से पायी जाती थी। परन्तु इन दूसरो के विपरीत वे समस्त जनता के हितो की रक्षा नही करते थे। वे अपने वग—पूजीपति वग के हितो—का समथन करते थे। धामिक तत्वो के विरुद्ध सघष म भी वे दृढ सैद्धातिक स्थिति पर जमे नही रहे। बल्कि वे इस्लाम के उसूलो को राष्ट्रीय पूजीपति वग के हितो के अनुकूल बनाना चाहते थे।

जदीदियों को राष्ट्रीय स्वाधीनता क्राति का बौद्धिक अग्रदूत कहना गलत होगा। उनका उदारवाद भी ऐसी अवस्था से सबध रखता था, जिसम मध्य एशिया के लोग आगे बढ चुके थे। वे अब सवहारा क्राति के द्वार पर खडे थे। औपनिवेशिक भारत मे राजा राम मोहन राय द्वारा सस्थापित ब्रह्म समाज आदोलन से, जो सामाजिक सुधार और सास्कृतिक पुनरुद्धार का आदोलन था, जदीदियो की तुलना करना बिल्कुल भ्रामक है, क्योकि भारत और मध्य एशिया का ऐतिहासिक विकास भिन्न था। राजा राम मोहन राय प्रगतिशील समाज-सुधारक और प्रबुद्ध जनवादी थे, क्योकि उन्होने आधुनिक उदारवादी विचारो का प्रचार उस समय किया, जब समाज के क्रातिकारी रूपातरण की शक्तिया भारतीय राजनीति के मच पर नही आयी था। परन्तु जब बेग बुदी ने मुसलमाना से अपनी एक अलग राजनीतिक पार्टी बनाने और सामाजिक

के विरुद्ध वैधानिक सम्राटवादियो का समर्थन करने की अपील की, तो वह मात्र सुधारक तथा शिक्षा प्रचारक नही रहा, बल्कि सक्रिय प्रतिक्रियावादी हो गया। जदीदी नेताओ ने मेहनतकश जनता को यह विश्वास दिलाने का प्रयास किया कि "मुस्लिम कौम" यानी सारे मुसलमान एक है और उनके विभिन्न वर्गो मे कोई भेद नही है। यह वे ऐसे समय कर रहे थे, जब वर्गीय विरोध दिनोदिन तीव्र होते जा रहे थे और क्रांतिकारी परिस्थिति तेजी से विकसित हो रही थी। यह नई क्रांतिकारी ऐतिहासिक परिस्थिति और इसमे उनकी प्रतिक्रियावादी भूमिका मध्य एशिया के जदीदियो को भारतीय समाज-सुधारको से जुदा करती है।

मध्य एशिया की जातियो के सामाजिक और वर्गीय ढाचे तथा उनके आर्थिक और सास्कृतिक विकास स्तर के बारे मे ऊपर की बहस का खुलासा करते हुए यह बात ध्यान मे रखनी चाहिए कि बावजूद इसके कि औपनिवेशिक काल मे उनके आर्थिक और सास्कृतिक जीवन मे अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन हो गये थे, जैसे उदाहरण के लिए, नये शहरो का जन्म, रेलवे का निर्माण, कृषि मे पूजीवादी सबधो की उत्पत्ति, हल्के पूजीवादी उद्योग की उत्पत्ति और एक आम बौद्धिक जागरण। फिर भी पूजीवाद पूर्व सबधो का प्रभुत्व, सास्कृतिक पिछडापन और अज्ञानता तथा इसलाम का प्रभुत्व रह गया था। परन्तु सामतवादियो, मुल्लाओ और नवजात राष्ट्रीय पूजीपति वर्ग से जनता का विलगाव भी स्पष्ट दिखाई देने लगा था। यह विशेष रूप से १९०५-१९०७ मे मजदूरो के क्रातिकारी आन्दोलन के समय और आगे चलकर १९१६ मे राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के सक्रिय दौर मे और बाद के वर्षो मे स्पष्ट हो गया था। १९१७ की फरवरी क्राति के बाद के दौर मे वह अपनी चरम सीमा पर पहुच गया।

राष्ट्रवादी तथा राष्ट्रीय मुक्ति आदोलन

औपनिवेशिक काल मे जारशाही शासन के विरुद्ध अनेक विद्रोह और बगावते हुई। परन्तु उन सभी को राष्ट्रीय मुक्ति आदोलन कहना सही नही होगा। इस सबध मे यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि औपनिवेशिक शासन के प्रारम्भिक वर्षों मे लोगो के आर्थिक और सास्कृतिक जीवन मे

अनेक प्रगतिशील परिवर्तन हुए। खान-दुशासन की निरकुशता और खुली लूटखसोट के तारीक दिनो के बाद जनगण ज़ारशाही शासन की लाई हुई नई तब्दीलियों को पसन्द किए बिना नहीं रह सकते थे। इसलिए जब सामती और धार्मिक नेताओं ने गज़वात या धार्मिक युद्ध के प्रतिक्रियावादी नारे के तहत खान प्रशासन को बहाल करने का धार्मिक-राष्ट्रवादी आदोलन खड़ा किया, तो जनगण ने उनका साथ नहीं दिया।

१६वीं सदी के आठवें और नवें दशकों में फरगाना घाटी में "नक्ली खानों" ने ऐसे विद्रोहों को भड़काने का प्रयत्न किया। इन विद्रोहों का समर्थन केवल कुछ अधिकारप्राप्त सामतवादियों और मुल्लाओं ने किया, जिनके विशेषाधिकारों पर ज़ारशाही प्रशासन की कुछ कार्रवाइयों से चोट पहुंची थी। १८८५ में दरवेश खान तियुरा ने खान शासन की बहाली के लिए आन्दोलन चलाया। उसके साथ मोमिनबाई आ मिला, जिसने फरगाना क्षेत्र में एक सशस्त्र दस्ता सगठित किया। ज़ारशाही सेना ने इस विद्रोह को आसानी से कुचल दिया। दरवेश खान भागकर काशगर चला गया और मोमिनबाई गिरफ्तार हो गया।

दरवेश खान के विद्रोह को जन-समर्थन नहीं प्राप्त था। इसी तरह मदाली ईशान का विद्रोह या तथाकथित अदीजान बगावत भी जनप्रिय आन्दोलन नहीं था। मदाली ईशान बुखारा का रहनेवाला था जहा उसने अध्ययन किया और कुछ दिन अमीर की चाकरी की। आठवें दशक के प्रारम्भ में वह अदीजान आया और यहा उसने जैसे-तैसे करके बहुत धन अर्जन कर लिया और अपने मुरीदों या चेलों के ज़रिये कुछ स्थानीय प्रभाव भी हासिल कर लिया। ईशान मिंग-तेपे गाव में बस गया, जहा उसने एक धार्मिक समुदाय की स्थापना की। परन्तु साधारण लोगों से उसका दूर का भी सबध नहीं था और उसके चेले अधिकतर सामती क्षेत्र के लोग थे। रूसियों के विरुद्ध धार्मिक युद्ध का जो नारा उसने १७ मई, १८६८ को दिया, उसका लोगों ने समर्थन नहीं किया और जब उसने अदीजान पर धावा किया, तो वह मात्र १००० आदमियों से अधिक को साथ नहीं ला सका। उसके विद्रोह को बिना किसी कठिनाई के कुचल दिया गया और वह पहाड़ों में भाग गया। औपनिवेशिक प्रशासन ने इसके

बाद बडा अत्याचार किया। वह अपनी शक्ति के प्रदर्शन से लोगो को भयभीत करके अपना तावेदार बनाना चाहता था। तोपो की गोलाबारी से मिंग-तेपे को मटियामेट कर दिया गया और मदाली ईशान के २०८ अनुयाइयो को मार डाला गया।

जारशाही शासन के विरुद्ध इन प्रारम्भिक विद्रोहो का वास्तविक स्वरूप सोवियत ऐतिहासिक लेखो मे बडे वाद विवाद का विषय बना रहा है। "उज्वेकिस्तान के जनगण का इतिहास" के लेखको ने मदाली ईशान के विद्रोह को राष्ट्रीय स्वाधीनता सग्राम की सज्ञा दी है।* "इज्वेस्तिया" अखबार ने इस पुस्तक की समीक्षा की और मुसलमान धर्म गुरुओ द्वारा निर्देशित और साम्राज्यवादी शक्तियो के दलालो द्वारा उकसाये गये सामन्ती राष्ट्रवादी विद्रोहो को जन क्रातिकारी आन्दोलन के रूप मे प्रस्तुत करने की कडी आलोचना की।

ऐतिहासिक घटनाओ का पुनर्मूल्याकन ससार के सभी देशो मे ऐसी प्रक्रिया है, जो बराबर जारी रहती है। यह बात उन घटनाओ और आन्दोलनो के बारे मे खासकर सही है जिनको हुए अभी बहुत समय नही बीता है। सही ऐतिहासिक दृष्टिकोण का निर्माण समय गुजरने पर ही होता है। यह सर्वथा नियमित प्रक्रिया है और सोवियत इतिहास-लेखन कोई अपवाद नही है।

निस्सन्देह एक समय ऐसा था, जब सोवियत इतिहासकार (उज्बेक और रूसी दोनो ही) रूस के साथ मध्य एशिया के विलयन के वस्तुनिष्ठ प्रगतिशील महत्त्व को कुछ कम करके आकते थे। यह कुछ हद तक अक्तूबर क्राति के तुरत बाद के दौर का अनिवार्य नतीजा था, जब उस हर चीज की अवहेलना और निंदा की जाती थी, जिसका क्रातिपूर्व अतीत से सबध था। ऐसी स्थिति मे प्रारम्भिक सोवियत लेखको ने जारशाही शासन के विरुद्ध औपनिवेशिक काल के सभी आन्दोलनो को स्वाधीनता का क्रातिकारी जन-सघर्ष बना कर पेश किया। तीसरे और चौथे दशकों के कई सोवियत लेखको की कृतियो का हवाला दिया जा सकता है, जिन्होने यह

---

*"उज्बेकिस्तान के जनगण का इतिहास", ताशकन्द, १९६७, खण्ड १, पृष्ठ ३६८।

दृष्टिकोण अपनाया है। यू० फयादोरोव ने अपनी पुस्तक* में औपनिवेशिक काल के सभी आंदोलनों को, उनका भी, जिनका नेतृत्व मुस्लिम धार्मिक गुरु कर रहे थे और जिनको कोई जन-समर्थन प्राप्त नहीं था, एक ही शीर्षक "राष्ट्रीय धार्मिक मुक्ति आंदोलन" के अन्तर्गत जमा कर दिया है। उन्होंने १८९८ के अन्दीजान विद्रोह को भी राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन बताया है। प० ग० गलुज़ो ने अपनी पुस्तक** में जारशाही शासन के प्रति हर विरोध को आँख बंद करके राष्ट्रीय मुक्ति-संघर्ष माना है, जिसमें उन्होंने गत शताब्दी के चौथे दशक में सुलतान केनिस्सारी के विद्रोह, १८६८ में समरकन्द में विद्रोह, शहरिसब्ज़ बेकशाही के विद्रोह, १८७५ और १८७६ कोकान में विद्रोह, ताशकन्द में १८९२ में हैजा उपद्रव, १८९८ में मदाली ईशान के विद्रोह से लेकर १९१६ के विद्रोह तक को जोड़ लिया है।

यह दृष्टिकोण उस समय सोवियत इतिहास-लेखन में आम था और इसका कोई संबंध कुछ उज़्बेक लेखकों के "पूंजीवादी राष्ट्रवादी भटकाव" से नहीं था, क्योंकि फयादोरोव और गलुज़ो उज़्बेक नहीं हैं। यह ऐसे दौर की पैदावार था, जब अतीत की संपूर्ण निंदा करने की प्रवृत्ति हावी थी। "उज़्बेकिस्तान के जनगण का इतिहास" ने इस परम्परा को ऐसे दौर में जारी रखा, जब सोवियत इतिहासकारों से अतीत की घटनाओं के अधिक वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन की आशा की जाने लगी थी और इसी लिए "इज़्वेस्तिया" ने सही ही इसकी आलोचना की। यहां यह बता दिया जाये कि इस दृष्टिकोण की आलोचना उस प्रारम्भिक दौर में भी की जा रही थी, जब उसे अधिकृत दृष्टिकोण माना जाता था।***

---

*यू० फयादोरोव, "मध्य एशिया में राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन का विवरण", ताशकन्द, १९२५, पृष्ठ १४–१८। (रूसी संस्करण)

**प० ग० गलुज़ो, "तुर्किस्तान – उपनिवेश", ताशकन्द, १९३५। (रूसी संस्करण)

***दे० प० अलोपाव, "मध्य एशिया के क्रांतिकारी आंदोलन के इतिहास और पार्टियों के बारे में क्या और किस तरह पढ़ना है", समरकन्द-ताशकन्द, १९२९, पृष्ठ ३०। (रूसी संस्करण), ग० तुर्कित्रास्की द्वारा लेख 'कोम्मुनिस्तीचेस्काया मीस्ल' में, १९२ ७ अंक ३, पृष्ठ १९०–२२२। (रूसी संस्करण)

जारशाही के विरुद्ध आदोलना का वतमान सोवियत मूल्याकन "महान रूसी अधराष्ट्रवादी भटकाव" का नतीजा नही है, जैसा कि रिचर्ड पाइप्स और सीटन वॉट्सन हमे विश्वास दिलाना चाहते है। पाइप्स ने मध्य एशिया पर रूसी कब्जे की प्रगतिशील भूमिका पर हाल मे जोर देन का "सोवियत उपनिवेशवाद" विषयक गोष्ठी म मध्य एशियाई जातिया के "रूसीकरण" का "इतिहास लेखन सबधी पहल" घोषित किया है। सीटन वाटसन ने सोवियत इतिहासकारो के तर्कों के बारे मे कहा है कि यह "गोरे आदमी के उत्तरदायित्व के सिद्धात का नकली मार्क्सवादी रूप है, जिसे किपलिंग समझ लेता"।* लेकिन इन दावा म रत्ती भर सच्चाई नही है। मध्य एशिया पर जारशाही के कब्जे के प्रगतिशील चरित्र के बारे म सोवियत इतिहासकारो का हाल का विचार अच्छी तरह सोचा-समझा हुआ विचार है, जो कुछ अतिशयोक्तियो के बावजद तथ्यो के वस्तुनिष्ठ विश्लेषण पर आधारित है।

वह दृष्टिकोण, जो जारशाही के विरुद्ध सभी आदोलना को राष्ट्रीय मुक्ति आदोलन के रूप म मानता हैं, सही नही है, क्योकि वह इस तथ्य को नजरअदाज करता है कि इन सभी आदोलनो म से कुछ को छोडकर, जैसे १८९२ मे ताशकन्द म हैजा उपद्रव और १९१६ का विद्रोह, किसी मे भी जनता न भाग नही लिया। सुलतान केनिस्सारी के विद्रोह को कजाखो का राष्ट्रीय मुक्ति सघर्ष नही कहा जा सकता। यह सही है कि शुरू मे केनिस्सारी न अनेक कजाख खानाबदोशो को इकट्ठा कर लिया था, परतु उसका सामती चरित्र समझ लेने के बाद वे उससे अलग हो गय और वह अत म जार के रूसी सैनिको से नही, बल्कि किर्गिजो स लडते हुए मारा गया। बुखारा की राजगद्दी के लिए शहरिसब्ज के बेको के षडयत्रो को तथा जारशाही शासन के विरुद्ध धार्मिक युद्ध के नारे क तहत लोगो को उभारने के लिए मुस्लिम मुल्लाओ और रईसो के नाकाम प्रयत्नो को जसा कि उन्होने १८७५ और १८७६ मे कोकान म, १८८५

* H Seton Watson *The New Imperialism* London 1964 p 65

म फरगाना म और १८६८ म अदीजान मे किया था, राष्ट्रीय मुक्ति-आदोलन कहना ऐतिहासिक तथ्यो को बिल्कुल तोड-मरोड कर पेश करना है।

मध्य एशिया म औपनिवेशिक काल मे राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के बारे म कुछ सामान्य टिप्पणियो से शायद उस आदोलन को ज्यादा अच्छी तरह समझना आसान हो जायेगा। खान प्रशासन काल मे मध्य एशिया के लोग आपस के विनाशकारी युद्धो से ऊब गये थे। इसलिए प्रारम्भ म उन्होने जारशाही द्वारा ऐसे शासन की स्थापना का स्वागत किया, जिसने अदरूनी सुव्यवस्था और व्यक्ति की सुरक्षा कायम की। ताशकन्द पर, यह याद रहे, दो हजार रूसिया ने दखल किया था। केवल तुर्कमान कबीलो ने जारशाही कब्जे का घोर विरोध किया था।

मध्य एशिया पर जारशाही का अधिकार ब्रिटेन के साथ तीव्र प्रतिद्वद्विता के वातावरण म हुआ जिससे मजबूर होकर जारशाही को मध्य एशिया की जातियो के प्रति सावधानीपूर्ण नीति अपनानी पडी। यहा जारशाही ने इसलाम के मामले मे हस्तक्षेप करने का कोई प्रयास नही किया। मध्य एशिया के मुसलमानो में काम करने से ईसाई मिशनरिया को रोका गया। परन्तु १९वी सदी के अत म जब आग्ल रूसी प्रतिद्वद्विता की तीव्रता धीरे धीरे कम होने लगी, तो परिस्थिति बदली और जारशाही की नीति का दमनकारी दौर शुरू हुआ। परन्तु सदी के अत मे राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन का उभार बडी हद तक मध्य एशिया म पूजीवादी सबधो का उत्पत्ति के कारण हुआ जिससे श्रमजीवी जनगण की दरिद्रता बढ गई और उनकी राष्ट्रीय चेतना जग गयी। अब आर्थिक दृष्टि मे तबाह देहकान और गरीब कारीगरो ने राजनीतिक क्रियाकलाप के क्षेत्र मे प्रवेश किया। ताशकन्द म हैजा उपद्रव और पूरे तुर्किस्तान म १९१६ का विद्रोह इसी दौर से सबध रखते है।

इन दोनो आदोलनो को पूरे औचित्य के साथ औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध जनगण का मुक्ति-सग्राम कहा जा सकता है। हाल की सभी सोवियत ऐतिहासिक कृतिया म इन्हे इस रूप मे स्वीकार किया गया है। इस मूल्याकन मे धर्म के प्रति विरोध का कोई हाथ नही रहा है। सभी

सोवियत लेखकों ने ताशकन्द में हैजा उपद्रवों को धार्मिक तत्वों के शरीक होने के बावजूद जन आन्दोलन के रूप में स्वीकार किया है। मार्क्सवाद ने हमेशा यह स्वीकार किया है कि किसानों पर धार्मिक अत्याचार करने से धार्मिक नारों के तहत मुक्ति संघर्ष शुरू हो जा सकता है। इस संबंध में यह याद रहे कि मार्क्स ने हुस्साइट युद्धों को "धार्मिक झंडे तले चेक किसानों का राष्ट्रीय युद्ध"* कहा था। लेकिन जैसा कि ऊपर कहा गया था, जारशाही ने तुर्किस्तान में धार्मिक अत्याचार की नीति नहीं अपनाई थी। इसलिए मध्य एशिया की जातियों की राष्ट्रीय मुक्ति-संग्राम में धर्म ने कोई भूमिका अदा नहीं की।

१९वीं सदी के अंत में मध्य एशिया के किसानों ने ज़ारशाही के औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध अपनी राजनीतिक कारवाई शुरू की। उस क्षेत्र के ग्रामीण अर्थतंत्र में पूंजीवाद के प्रवेश के कारण देहकानों की स्थिति बिगड़ गयी थी। दरिद्र किसानों ने औपनिवेशिक शासन के तहत अपना दयनीय स्थिति के प्रतिरोध के रूप में धनी लोगों और औपनिवेशिक अधिकारियों पर छापा मारना शुरू किया। फरगाना, समरकन्द और सिर दरिया के तीन ओब्लास्तों में, जहां औपनिवेशिक शोषण सबसे अधिक तीव्र था कपास उत्पादक किसानों द्वारा ऐसे छापों की संख्या प्रतिवर्ष बढ़ती गई। १८८७ और १८९८ के बीच ६६८ ऐसे छापे मारे गये। फरगाना में, जहां किसानों की आर्थिक तबाही की प्रक्रिया सबसे तेज़ थी, किसान छापों की संख्या ४२९ थी। इस अवधि में समरकन्द में १८२ और सिर-दरिया क्षेत्र में ५७ छापे मारने की रिपोर्ट मिली।**

किसान आन्दोलन ने प्रशासन के साथ मुठभेड़ का रूप भी लिया। १८८७ और १८९८ के बीच इस प्रकार की २५ मुठभेड़ों की सूचना मिली जिसमें ३४ अधिकारी उलझे हुए थे और इनके फलस्वरूप २० हताहत हुए। सदी के अंत तक अधिकाधिक देहकान और खानाबदोश राष्ट्रीय स्वाधीनता तथा वर्ग-संघर्ष में भाग लेने लगे। स्थानीय पशुपालक खानाबदोश

---

*का० मार्क्स और फ्रे० एंगेल्स, पुरालेख-संग्रह १९३९ खण्ड ६ पृष्ठ ३-४। (रूसी संस्करण)

** प० ग० गलुज़ा "तुर्किस्तान—उपनिवेश", पृष्ठ ६०।

भी कुलकों और कज्जाक बसनेवालो के विरुद्ध सघष के मैदान मे उतर आये और उनके मवेशी पकड कर ले जाने लगे।

किसानो ने इस प्रकार का राष्ट्रीय सघष २० वी सदी के प्रथम दशक म जारी रखा। किसानो के छापो को* जिनकी सख्या १९०५ तक धीरे-धारे ही बढी थी, १९०५ की क्रातिकारी उथल पुथल से प्रोत्साहन मिला। १९०५ से १९०८ तक उनकी सख्या मे ८३ प्रतिशत वृद्धि हुई। १९०५ की क्राति इस दृष्टि से मोड बिदु साबित हुई। उसने देहकानो के राजनीतिक सघष को सक्रिय बना दिया, जो उसके बाद खुले आम जारशाही औपनिवेशिक शासन का विरोध करने लगे। परतु उनके आदोलन का स्वरूप असगठित और स्वत स्फूत रहा। १९०५–१९०७ की क्राति म स्थानीय सवहारा ने भी, यद्यपि उसकी सख्या कम थी, बडी राजनीतिक शिक्षा प्राप्त की। १९०६ मे जब हडताली रूसी मजदूरो की जगह स्थानीय जातियो के मजदूर भरती किये जाने लगे, तो वे भी स्वत स्फूत ढग से हडताल म शामिल हो गये। स्थानीय मजदूरो ने भी रूसी मजदूरो के साथ सभाओ और प्रदशनो मे भाग लिया। मास्को के दिसम्बर विद्रोह के असफल होने पर पूरे तुर्किस्तान मे घेराव की स्थिति घोषित कर दी गई और इस घोर दमन के दौरान मे सामाजिक जनवादी सगठनो का बद कर दिया गया। जन क्रातिकारी आदोलन की नई लहर, जो रूस मे १९१२ मे शुरू हुई, तुर्किस्तान के सैनिको और मजदूरो को प्रभावित किये बिना नही रह सका। जुलाई १९१२ मे ताशकद मे सैनिको का शक्तिशाली सशस्त्र विद्रोह हुआ। परन्तु इसे भी औपनिवेशिक प्रशासन ने कडाई से कुचल दिया।

जारशाही के विरुद्ध मध्य एशिया की जातियो का एक जन राष्ट्रीय

---

*प० ग० गलुजो ने ३० जुलाई, १९२८ मे 'प्राव्दा वोस्तोका' के अक १७२ (१९९९) मे प्रकाशित अपने लेख मे तथा अपनी पुस्तक "तुर्किस्तान – उपनिवेश" मे धनी लोगो पर किसान छापो का उल्लेख किया था, मगर वह कभी भी 'रूसियो पर छापा" के बार म करते थ, जसा कि अपनी मर्जी पर र० वैद्यनाथ न किया था। (R V dyanath *The Formation of the Soviet Central Asian* ''

मुक्ति विद्रोह १६१६ मे हुआ। इसमे मध्य एशिया की सभी जातियो ने भाग लिया। साम्राज्यवादी युद्ध के फलस्वरूप मध्य एशिया का औपनिवेशिक शोषण और लूट अधिक तेज हो गई थी। जारशाही प्रशासन ने पशु जब्त करवाया और अतिरिक्त कर लगाये, जिसके कारण लोगो की आर्थिक स्थिति और खराब हो गई। रूस से रोटी का आयात कम हो गया और इसलिए उसका दाम बढ गया। फसल नही होने से हालत और खराब हो गई और देश मे अकाल फैल गया।

जारशाही के विरुद्ध व्यापक जन आदोलन का अवसर २५ जून, १६१६ की आज्ञप्ति के जरिये मिल गया। यह आज्ञप्ति मोरचे के पीछे काम के लिए स्थानीय पुरुषो की लामबदी के सबध मे थी। इससे जनगण मे आक्रोश फैल गया। इसका कारण स्थानीय प्रशासन द्वारा इस आज्ञप्ति पर अमल करने का ढग था। धनी बाई लोग और समाज के अन्य समृद्ध तत्व रिश्वत देकर या अपने बदले किसी को रखकर सेवा से बच जाते थे। आज्ञप्ति का कडा वार सारा का सारा गरीबो पर पडता था।

मध्य एशिया के विभिन्न क्षेत्रो मे देहकानो और शहर के गरीबो का विद्रोह स्वतस्फूर्त ढग से शुरू होने लगा। क्रुद्ध लोगो की भीड ने वोलोस्त प्रशासन कार्यालयो पर धावा बोल दिया और मोरचे के पीछे सेवा के लिए भरती किये जानेवालो की सूचियां फाडकर फेंक दी, कई अधिकारियो की हत्या भी की। आदोलन आम तौर पर असगठित था और उसका कोई समान नियत्रण या आदेश-केन्द्र नही था। अधिकाश जिलो मे यह आदोलन मनमाने जारशाही प्रशासन, औपनिवेशिक अधिकारियो और साथ ही स्थानीय बाई लोगो तथा सामती तत्वो के विरुद्ध था। बडी हद तक इसका राष्ट्रीय मुक्ति-सघर्ष का प्रगतिशील स्वरूप था। परन्तु कुछ जिलो मे सामती और धार्मिक तत्व जर्मन और तुर्की के एजेंटो से मिलकर इसे रूस विरोधी रग देने मे सफल हुए। जिज्जक उयेज्द, तजेन और गिउरगेन मे आन्दोलन ने यही रुख लिया।

१६१६ के विद्रोह को जारशाही ने शस्त्र बल से बडी क्रूरता के साथ कुचल दिया। किरगिज़ खानाबदोशो के विरुद्ध दमन विशेष रूप से कडा था। उनमें से कोई तीन लाख जेतीसुय से चीन भाग गये। उनकी

ज़मीनें जब्त कर ली गइ और रूसी बसनेवालो को दे दी गई। १९१६ के विद्रोह ने अपनी असफलता के बावजूद औपनिवेशिक क्षेत्र की जातियो के इतिहास म महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। यह उपनिवेशवाद विरोधी आन्दोलन से सामतवाद विरोधी आन्दोलन म परिवर्तित हो गया। सामतवादी के विरुद्ध स्वत स्फूर्त प्रदर्शनो से शुरू होकर उसने सशस्त्र संघर्ष का रूप धारण कर लिया। उसका उद्देश्य रूस से अलग होना नही था, बल्कि केवल राष्ट्रीय औपनिवेशिक उत्पीडन से मुक्ति प्राप्त करना था। आन्दोलन की शक्ति और उसकी व्यापकता मध्य एशिया म क्रातिकारी परिस्थिति की परिपक्वता साबित कर रही थी। भरती हुए मजदूर और देहकान, जिन्होने रूस म रहकर काम किया, रूसी बोल्शेविको के प्रभाव से राजनीतिक तौर पर सक्रिय हो गये और तुर्किस्तान मे वापस आकर फरवरी और अक्तूबर क्राति के बीच के दौर म स्थानीय जनता के हिरावल दस्ते बन गये। उन्होने मेहनतकश मुसलमानो की सोवियतें सगठित करने म अग्रिम भूमिका अदा की।

१९१६ का विद्रोह विफल हुआ, मगर उसने मध्य एशिया के जनगण को क्रातिकारी संघर्ष का बडा सबक दिया। इसने उन्ह विश्वास दिला दिया कि केवल रूसी सर्वहारा की सहायता से और केवल समाजवादी क्राति के ज़रिये वे राष्ट्रीय और औपनिवेशिक उत्पीडन से मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं। राष्ट्रीय पूजीपति वर्ग और पूजीवादी बुद्धिजीवियो के विश्वासघात न, जो उस समय जारशाही साम्राज्यवाद की चाटुकारी कर रहे थ, जनता की आखें खोल दी।

समाजवादी क्राति के लिए सामाजिक आर्थिक तथा राजनीतिक पूर्वस्थितियों का परिपक्व होना

मध्य एशिया मे समाजवादी क्राति सामाजिक-आर्थिक तथा राजनीतिक पूर्वस्थितियो की उपस्थिति के कारण फट पडी। कुछ लेखको का कहना है कि मध्य एशिया मे उत्पादक शक्तियो के अविकसित होने तथा वहा की जातियो के निम्न सास्कृतिक स्तर के कारण ऐसी पूर्वस्थितिया नही थी।

वे यह रट लगाये जाते है कि स्थानीय लोगो मे औद्योगिक सर्वहारा का कोई बडी सख्या नही थी, जिसके बिना समाजवादी क्रांति की कल्पना नही की जा सकती। उनके सभी तर्कों का सार उनका यह दावा है कि मध्य एशिया मे समाजवादी क्रांति की अपनी जडे नही थी और उसे रूसी बोल्शेविक रूस से लेकर आये।* रूस से समाजवादी क्रांति के "आयात" के सबध मे अपने ऐतिहासिक रूप से भ्रामक नतीजे पर पहुचने म पश्चिमी लेखको का सफारोव जैसे विगत सोवियत लेखको स बहुत समर्थन मिला, जिन्हे एक समय पार्टी और प्रशासन मे महत्वपूर्ण स्थान मिला हुआ था।**

परन्तु यह दृष्टिकोण ऐतिहासिक वास्तविकता के विपरीत है। साम्राज्यवाद के युग मे समाजवादी क्रांति के लिए आवश्यक शर्तों का मौजदगी के सवाल पर विश्व साम्राज्यवादी व्यवस्था के सदभ म ही विचार किया जा सकता है, और सामतविरोधी तथा राष्ट्रीय मुक्ति क्रांतिया के समाजवादी क्रांतिया म विकास की सभावनाओ से इनकार नही किया जा सकता।

तुर्किस्तान के सबध म सही दृष्टिकोण केवल इस विलंबित दूरवर्ती

---

* A G Park *Bolshevism in Turkestan* New York 1957 R Pipes *The Formation of the Soviet Union*, Cambridge Mass 1954 W Kolarz *Communism and Colonialism*, London New York, 1964 H Seton Watson *The New Imperialism* London, 1964, Briand Krozier *Neo Colonialism* London 1964

**सफारोव के अभिनत तथा अवस्तुनिष्ठ विचारा के लिए देखिये उनकी पुस्तक "औपनिवेशिक क्रांति–तुर्किस्तान का अनुभव', मास्को–लेनिनग्राद १९२१ (रूसी सस्करण)। इस लेखक की राय म फरवरी क्रांति से पहले तुर्किस्तान म 'तनिक भी फैला हुआ क्रांतिकारी आन्दोलन" नही था (पृष्ठ ५३)। उनकी राय म फरवरी क्रांति 'तार के जरिये' तुर्किस्तान पहुची (पृष्ठ ८४)। उनका दावा था कि तुर्किस्तान में रूसी मजदूरा म 'क्रांतिकारी विचारधारा कोई क्रांतिकारी परम्परा नहा थी" और कि उनम और स्थानीय लोगा म कोई समान हित नहा था। उनका कहना था कि तुर्किस्तान म सभी रूसी मजदूरा और वहा रानगारा के अधिनायकत्व का 'ग्राम औपनिवेशिक रूप' था (पृष्ठ ७१) पश्चिमी देशा मे सफारोव का हवाला व्यापक तौर पर दिया जाता है।

क्षेत्र म समाजवादी क्राति की आवश्यक शर्तों के विश्लेषण तक ही सीमित नहा रह सकता, बल्कि उसे पूरे देश के सदभ मे दखना होगा। जारशाही उपनिवशवाद क विरुद्ध मध्य एशियाई जनगण के राष्ट्रीय मुक्ति सघप को ध्यान म रखना होगा, जो हर साल रूस मे मजदूरा के क्रातिकारी आदोलन क प्रत्यक्ष अनुपात म और मुख्यत उसके प्रभाव के तहत तीव्र और व्यापक हो रहा था। फिर, वस्तुनिष्ठ सामाजिक आर्थिक तत्वा के अलावा आत्मनिष्ठ तत्व की भूमिका का भी खयाल रखना होगा।

रूस क साथ मध्य एशिया के विलयन की बदौलत यह सम्भव हुआ कि समाजवादी क्राति की सामाजिक आर्थिक पूवस्थितियो का विकास तेजी से हो। औपनिवेशिक काल म पूजीवादी सबधो की उत्पत्ति से वग विरोध और तीव्र हुए। इसके फलस्वरूप मध्य एशिया म अत मे समाजवादी क्राति की विजय हुई। तुर्किस्तान म क्राति से पहले की स्थिति का मूल्याकन करने क लिए उत्पादक शक्तियो के विकास को ही नही बल्कि वग-सघप की परिस्थितिया को राष्ट्रीय उत्पीडन की तीव्रता आदि को भी ध्यान मे रखना आवश्यक है। समाजवादी क्राति के लिए यह कोई जरूरी नही कि किसी देश की आर्थिक और राजनीतिक परिपक्वता मे प्रत्यक्ष सानुपातिक सबध हो। जसा कि लेनिन ने कहा है यह कहना कठिन है कि "इसकी शुरुआत कौन करेगा और अत कौन"।* समाजवादी क्राति के दष्टिकोण स तुर्किस्तान के अपरिपक्व होने की सारी दलीलो का मतलब है रूस के साथ मध्य एशिया के विलयन के वस्तुनिष्ठ प्रगतिशील परिणामो और उस विलयन के फलस्वरूप हुए राजनीतिक तथा आर्थिक परिवतना से इनकार करना। रूस म मिल जान के कारण तुर्किस्तान म आर्थिक विषमता बढ गई। उत्पादन-साधनो के प्रति विभिन्न वर्गों के सबध बदल गये और कृषि तथा उद्योग म वर्गीय विभेदीकरण की प्रक्रिया और गहरी हो गई।

यह मानना, जैसा कि हयात और मुस्तफा चाकायेव कहते है, कि मध्य एशिया के मुसलमाना म वग भेद नही था और कि उन्होने एक सयुक्त मुस्लिम राष्ट्र बनाये थे जो वग-सघप की धारणा से भी अपरिचित

---

* V I Lenin *Collected Works* Vol 24 p 246

थे वस्तुस्थिति के विपरीत हे। यह सही है कि तुर्किस्तान मे औद्योगिक सवहारा की सख्या बहुत कम थी, पर इसका मतलब यह नही कि उसकी आबादी मे सवहारा तत्वा का अधिकत्व नही था। कृषिक सवहारा और अद्ध सवहारा मिलकर आबादी का खासा बहुमत बन गये थे। यहा यह उल्लेख कर दिया जाये कि लेनिन ने "शहरी सवहारा" और "ग्रामीण सवहारा" की बात कही है और कुलको तथा किसान पूजीपतियो के विरुद्ध उनके एक होने की चर्चा की है।* उन्होने "गरीब किसानो" का अद्ध-सवहारा कहा है।** अपनी "सोवियत सत्ता के सबध मे दस प्रस्थापनाए" नामक कृति म लेनिन ने बताया कि सवहारा तथा गरीब किसाना (अद्ध सवहारा) का अधिनायकत्व कायम करना सावियत सत्ता के उद्देश्या मे से एक है।***

मध्य एशिया के इतिहास का कोई गम्भीर अध्ययनकर्ता इस बात से इनकार नही कर सकता कि तुर्किस्तानी गावो की आबादी का अधिकाश भाग सवहारा और अर्द्ध-सवहारा था। १९१७ की अखिल रूसी कृषि जनगणना के अनुसार कृषि मे काम करनेवाले उजरती मजदूरा की सख्या फरगाना ओब्लास्त के बसे हुए हिस्सो मे २२,२१७, समरकन्द ओब्लास्त म २३,०२७ और सिर दरिया ओब्लास्त म (आमू दरिया विभाग को छोड कर) १८,०६७ थी।**** दूसरे प्रदेशा के सवध मे कोई आकडे हासिल नही किये जा सके। इन चन्द उपलब्ध आकडो से भी पता चलता है कि ग्रामीण समाज मे वर्गीय विभेदीकरण कितना बढ गया था। भूमिहीन किसाना की यह विशाल सेना ही कृषिक सवहारा का आधार बन गयी। फिर गरीब किसानो—चारिकेरो और मरदिकेरो की बडी सख्या थी। इनका थाडा जमीन पर स्वामित्व था। वे बाई लोगो की जमीन पर बटाईदारी के आधार और ऐसी शर्तों पर खेती करते थे, जा उनके लिए प्रतिकूल और कठिन थी। तुर्किस्तान की दस्तकारी म १,०८,३२४ आदमी काम करते

*वही, खण्ड २८ पृष्ट ३९२ और खण्ड ३३, पृष्ठ ४६५।

*वही, खण्ड ३१, पृष्ठ ३८५ और खण्ड २८, पृष्ठ ५६।

* वही, खण्ड २७, पृष्ठ १५३–१५४।

****ग० त० तुगूनोव, "मध्य एशिया और कजाखस्तान म १९१६ का विद्रोह, ताशकन्द, १९६२ पृष्ठ १००। (रूसी सस्करण)

थे।* आबादी के इस क्षेत्र की सामाजिक बनावट १९०८–१९०९ में यह थी कि उसमें ४० प्रतिशत गरीब दस्तकार, २५ प्रतिशत माध्यमिक दस्तकार और २४ प्रतिशत उजरत पर काम करनेवाले मजदूर और बाकी समृद्ध दस्तकार थे।** यही जनता समाजवादी क्रांति और नये जीवन की स्रष्टा थी।

रूस के साथ मध्य एशिया के विलयन के पहले दिनों से ही श्रमजीवी जनता का सम्पर्क "दो रूसों" से हुआ–एक उत्पीड़कों और शोषकों, रोमानोवों और स्तोलीपिनों का रूस, जो एशिया की जातियों और रूसी लोगों दोनों का शोषण और उत्पीड़न करता था और दूसरा क्रांतिकारियों का रूस जो सामाजिक और राष्ट्रीय उत्पीड़न के विरुद्ध लड़ते थे। मध्य एशिया के लोगों का ज़ारशाही उपनिवेशवादियों, रूसी कुलकों और व्यापारियों से ही नहीं, बल्कि रूसी किसानों और औद्योगिक मज़दूरों, वैज्ञानिकों, शिक्षकों, लेखकों और क्रांतिकारियों से भी सम्पर्क होता था।

महान रूसी जनगण के साथ मध्य एशिया के श्रमजीवियों के इस मिलन का प्रगतिशील चरित्र और अधिक स्पष्ट तब हुआ, जब रूस विश्व क्रांतिकारी आन्दोलन का केन्द्र बन गया और रूसी मजदूर वर्ग अपनी जंगी क्रांतिकारी पार्टी का निर्माण करके अंतर्राष्ट्रीय क्रांतिकारी आन्दोलन का हिरावल दस्ता बन गया। रूस में क्रांति की उभरती लहरों ने भी मध्य एशिया को प्रभावित किया। मध्य एशिया की प्रगतिशील शक्तियों ने रूसी सर्वहारा के साथ मिलकर सामंती और औपनिवेशिक उत्पीड़न के विरुद्ध संयुक्त संघर्ष का आह्वान किया। यह समझकर कि रूस के श्रमजीवी जनगण उन्हीं पूंजीपतियों और ज़मींदारों के उत्पीड़न के शिकार थे, मध्य एशिया की जनता ने स्पष्ट रूप से देख लिया कि उनकी समान नियति रूसी सर्वहारा के साथ सम्बद्ध है।

मध्य एशिया की समाजवादी क्रांति में रूसी सर्वहारा ने निस्संदेह अग्रिम भूमिका अदा की। उसने स्थानीय मज़दूरों की वर्ग चेतना को जागृत

---

*वही, पृष्ठ ७२।

**म० वहाबोव "उज़्बेक समाजवादी जाति का निर्माण", पृष्ठ १७७।

करने तथा देहकानो स एकता कायम करने मे एक यत्न का काम किया। ये देहकान धीरे धीरे सामतवादियो और धार्मिक नेताओ के प्रभाव से अपने आपको उबारने का प्रयास कर रहे थे, और १९वी सदी के अत स व राजनीतिक सघष के क्षेत्र मे प्रवेश करने लगे थे, यद्यपि स्वतस्फूत और असगठित ढग से।

मध्य एशिया पर रूसी औपनिवेशिक कब्जे मे एक नया तत्व मौजूद था, जो अय यूरोपीय शक्तियो के औपनिवेशिक कब्जा मे नही था। वह था रूसी साम्राज्य की औपनिवशिक प्रजा और साधारण रूसी जनगण मे प्रत्यक्ष सम्पक। रूस के उपनिवेश क्षेत्रीय दृष्टि से इससे मिले हुए थे और रूसी उनमे आकर बसते थे।

यह चीज रूसी उपनिवेशो मे समाजवादी क्राति के लिए आवश्यक पूवस्थितियो के विकास के लिए बहुत महत्वपूण थी। दूसरी ओर ब्रिटिश सवहारा अनेक कारणो से, जिनम उपनिवेशो से भौगोलिक दूरी भी एक थी, उपनिवशो म समाजवादी क्राति के मामले म पहलकदमी नही कर सका। ब्रिटिश सवहारा उपनिवेशो (जैसे भारत) म वही प्रगतिशील भूमिका नही अदा कर सका क्योकि वह बडी हद तक श्रमिक रईसशाही के प्रभाव मे था। याद रहे कि ब्रिटेन की लेबर पार्टी ने अनेक मौको पर भारत के लिए स्वायत्त शासन का विरोध किया था। परन्तु अगर ब्रिटिश मजदूर वग श्रमिक रईसशाही के प्रभाव मे नही होता, तब भी भौगोलिक दूरी ऐसी चीज थी जो बाधा बनी रहती। भारत म शायद ही कोई ब्रिटिश मजदूर रहा हो, जबकि हजारो रूसी मजदूर मध्य एशिया की रेलवे तथा अय औद्योगिक उद्यमो म काम करते थे। ब्रिटिश पूजी न अवश्य ही भारत के कच्चे सामान के साधनो का अधिक पर्याप्त शोषण करने के लिए भारत मे रेलवे का निर्माण किया। इन निर्माण प्रायोजनाओ म एक भी ब्रिटिश मजदूर न काम नही किया। रूसी मजदूरो के अलावा मध्य एशिया म खासी बडी सख्या म रूसी किसान भी आकर बस गये थ। इन म से बहुतर कुलक नही थ और इनका और देहकानों का समान हित था।

कुछ लेखको न यह मिथक का प्रयोग किया है कि मध्य एशिया म

इन रूसी बसनेवाला तथा देशी जनगण के हितों में स्थायी विरोध था, जिससे दोनों में सहयोग की सम्भावना नहीं थी। सफारोव का कहना कि तुर्किस्तान में एक तिहाई से आधे तक रूसी आबादी "मुफ्तखोर" थी, वस्तुस्थिति की घोर विकृति है।* वह इस "मुफ्तखोर" वर्ग में बिना किसी भदभाव के सभी रूसी शहरी बाशिन्दों को शामिल करते हैं। अगर हम उनसे सहमत हों, तो सभी रूसी साहित्यकार और वैज्ञानिक जसे न० म० प्रझेवाल्स्की, प० प० सम्योनोव तियानशान्स्की आदि उपनिवेशवादी हो जाते हैं, और सभी मजदूर अधिकार प्राप्त श्रमिक रईसशाही के सदस्य।

तुर्किस्तान की कुल रूसी आबादी ५४०,६७४ थी।** इसमें से १,८५,३०३ शहरों में रहते थे और ३,३०,४६९ गांवों में, १६६४८ शहरी बस्तियों में और ८,२५८ रेलवे लाइन के निकट स्टेशनों में रहते थे। रूसी नगरनिवासियों में कोई २६,००० औद्योगिक मजदूर थे, जिनमें २०००० रेलवे मजदूर थे।*** मनज्ञारा जैसे मजदूरों के संस्मरणों से पता चलता है कि रूसी रेलवे मजदूरों को कोई विशेष सुविधाएं नहीं प्राप्त थीं। उन्हें वही वेतन मिलता था, जो उनके जैसे मजदूरों को रूस में मिलता था। निपुण रूसी मजदूरों और अनिपुण स्थानीय मजदूरों के वेतन में फर्क से यह नतीजा निकालना कि मध्य एशिया में सुविधाप्राप्त रूसी श्रमिक रईसशाही थी, श्रमिक रईसशाही की धारणा के बारे में अज्ञानता प्रकट करना है। अगर मध्य एशिया के रूसी मजदूर श्रमिक रईसशाही से संबंध रखते थे, तो उनमें असंतोष किस कारण था जिससे बडी-बडी हडतालें और प्रदर्शन होते थे? मालिक देश के पूंजीपति वर्ग के औपनिवेशिक अतिरिक्त मुनाफे द्वारा खरीदी हुई श्रमिक रईसशाही औपनिवेशिक शोषण का एक

---

*ग० सफारोव, "औपनिवेशिक क्रांति – तुर्किस्तान का अनुभव", पृष्ठ ५२।

** "सांख्यिकीय वार्षिकी, १९१७–१९२४", ताशकन्द, १९२४, खण्ड १, भाग ३, पृष्ठ ४२–४४। (रूसी संस्करण)

*** "उज्बेकिस्तान के मजदूर वर्ग का इतिहास", खण्ड १, पृष्ठ ३१–३२।

लचीला यत्न होता। भारत की रेलवे मे काम करनेवाले अंग्रेजा की हड़ताल और प्रदर्शन कभी सुनने मे नही आये।

यह कहना भी सही नही है कि गावो मे बस हुए सभी रूसा कुलक थे। जेतीसुव रूसी प्रवासी बस्तिया का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र था। वहा व आकडा से पता चलता है कि रूसी प्रवासियो म भी वर्गीय विभेदीकरण की प्रक्रिया जारी थी। जेतीसुव की पुरानी रूसी बस्तियो मे ११,६५६ परिवार थे जिनकी आबादी ७८,५६१ थी। इनमे १०,५३१ रूसी परिवार थे जिनमे ७२ ११७ व्यक्ति थे और १,४२८ गैर रूसी परिवार जिनम ६,४७४ व्यक्ति थे। ३,३२२ (१६ ५ प्रतिशत) परिवार भूमिहीन थे (जिनम २,२०४ यानी कोई ७० प्रतिशत रूसी थे और १,११८, यानी ३० प्रतिशत गैर रूसी)। भूमिहीन परिवार और ५ देसियातीन की छोटी भूमिवारी के परिवार ओब्लास्त के कुल परिवारा का ५० प्रतिशत थे। ६८ प्रतिशत परिवार कृषि के अलावा अनुपूरक काम करते थे, २,६६० व्यक्ति खेतिहर मजदूर थे ३७७ उद्योगो मे काम करते थे और २०८२ कारीगर और दस्तकार थे।* सिर दरिया ओब्लास्त के चिमकद उयेस्द म बसे हुए रूसी किसाना म कोई ३५ प्रतिशत परिवार खेतिहर मजदूर थे और ३४ प्रतिशत औद्योगिक मजदूर थे।** ट्रासकास्पियन ओब्लास्त के प्रशासक न रूसी प्रवासियो की भौतिक स्थिति का वर्णन करते हुए कहा था कि यह 'मध्यम स्तर के लोगा से खराब" है।*** वरतोल्द का कहना है कि रूसी किसाना की बडी सख्या भी जो कज्जाको से लगान पर जमीन लेती थी, सरकार के विरोध के बावजूद चली आयी थी।****

भारत म स्थिति बिल्कुल भिन्न थी। १६३१ की जनगणना के अनुसार देश म ६०,६०८ यूरोपीय पुरुष थे जिनम ५६ ६६२ सेना और पुलिस म काम करते थे, ३ ६७२ सरकारी प्रशासन म ३,५०७ व्यापार म, ६ ७५८ परिवहन म, ४,०८० उद्योग म, १,४३८ खनन म, ३,०६६ पशुपालन

*ए० त० तुर्सुनोव उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ १३०–१३१।
**वही पृष्ठ १३२।
*वही।
**व० व० बरतोल्द, रचनाए खण्ड २, भाग १ पृष्ठ ३२२।

और कृषि म और ६,०१२ बौद्धिक पेशो तथा कला म।* यद्यपि जनगणना की तालिकाओ म कही स्पष्ट नही कहा गया है, यह सभी जानते है कि उद्योग खनन और परिवहन म काम करनेवाले यूरोपीय अधिकतर उच्च प्रशासनिक पदो पर काम करते थे और जहा तक पशुपालन और कृषि का सबध है वे फार्मो और बगानो के मालिक थे। अत साधारण मजदूर बहुत कम थ। इसी प्रकार भारत म ८३१३ यूरोपीय स्त्रिया मे, ५,०८९ बौद्धिक पशो और कला म काम करती थी।

मध्य एशिया म क्राति वहा की व्याप्त पूजीवाद पूव सबधा की अनूठी परिस्थिति म समाजवादी क्राति थी। वह महान अक्तूबर समाजवादी क्राति का एक अभिन्न अग थी, उन घटनाओ का सिलसिला और विकास जो पेत्रोग्राद और मास्को म अक्तूबर १९१७ म शुरू हुई थी। रूस के केन्द्र म अक्तूबर क्राति की विजय और रूसी सवहारा द्वारा दी गई सहायता ने मध्य एशिया म क्राति की विजय म महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। क्राति का नतत्व निश्चित ही रूसी सवहारा क हाथो म था, जिसे तुर्किस्तान की व्यापक जनता का पूरा विश्वास और समथन प्राप्त था।

मध्य एशिया म क्राति समाजवादी रूस की सहायता क बिना सफल नही हो सकती थी। लकिन इसका यह मतलब नही कि मध्य एशिया पर क्राति रूसी मजदूरो न ऊपर स लादी थी। मध्य एशिया के मेहनतकशो ने क्राति का अभिनन्दन किया मानो यह उनका अपना मामला हो और इसको लाने और इसकी रक्षा करने मे सक्रिय भाग लिया।

इतिहास हम सिखाता है कि किसी क्राति की जड अगर व्यापक जनता म गहरी नही हो और उसे ज़बरदस्ती ऊपर से लादा जाये तो वह कभी स्थायी नही हो सकती। ऐसी क्राति अगर इतिहास की आकस्मिक चोट के रूप म जीत भी जाये तो वह अदरूनी और बाहरी अनेक शक्तिशाली शत्रुओ का सफल मुकाबला नही कर सकती थी। मध्य एशिया के लोगो ने स्वय क्राति का रास्ता चुना इसे पूरा किया और इसकी उपलब्धियो की रक्षा की।

---

* J H Hutton *Census of India*, vol I pt II 1931, pp 420—421

२०वी शती के प्रारम्भ से रूसी सवहारा और देशी मजदूरा और देहकानो की तेजी से विकसित होती हुई एकता के विरुद्ध जारशाही और देशी बाई लोगा और मुल्लाओ मे एकता स्थापित होने लगी। राष्ट्रीय पूजीपति वग से स्थानीय जनता के बिलगाव की प्रक्रिया, जा १९०५-१९०७ के दौर मे ही शुरू हो गई थी, १९१६ के विद्रोह के समय पूरा हो चुकी थी। मध्य एशिया का राष्ट्रीय पूजीपति वग रूसी साम्राज्यवादी पूजीपति वग की सेवा कर रहा था। उसने जनता के हितो का विश्वासघात किया। फरवरी क्राति की विजय ने औपनिवेशिक तुर्किस्तान म राष्ट्रीय मुक्ति आदोलन के लिए नई सम्भावनाओ के द्वार खोल दिये। तुर्किस्तान के श्रमजीवी जनगण को तब तक यह विश्वास हो चुका था कि वे रूसी सवहारा की सहायता से ही राष्ट्रीय और औपनिवेशिक शोषण से मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं और उन्होने राजनीतिक कायकलाप सगठित करना शुरू किया। फरवरी क्राति के बाद उनके अनेक वर्गीय सगठन कायम हुए-स्थानीय श्रमजीवी जनगण की सोवियते, समितिया और यूनियनें। मई १९१७ के अत और जून के प्रारम्भ मे स्थानीय मेहनतकशो की सोवियते बनने लगी। सागठनिक रूप म भी रूसी मजदूर वग ने बडी सहायता की। देशी मजदूरा ने मोरचे के पीछे सेवा-काय से घर वापसी पर इन सगठनो के निर्माण मे अग्रिम भाग लिया। मुस्लिम मजदूरो के प्रतिनिधियो की सोवियतो ने शुरू ही से देशी शोषका के विरुद्ध दृढ सघष किया। शोषक तत्वा ने भी अपने आपको "शूरा ए इसलामिया" और "उलमा" जसे सगठना म सगठित किया। यह सही है कि शुरू मे देशी जनता ने अपने सास्कृतिक पिछडेपन और राजनीतिक अपरिपक्वता के कारण इन प्रतिक्रियावादी सगठना म कुछ विश्वास प्रकट किया। परन्तु वग विरोध तीव्र होते गये और इसका नतीजा यह हुआ कि आम मुसलमान जनता का इन प्रतिक्रियावादी सगठना म जो भी विश्वास था वह जाता रहा। अक्तूबर क्राति के समय वर्गीय शक्तिया के विभेदीकरण की प्रक्रिया पूरा हो चुकी थी। क्रातिकारी परिस्थिति पूरी तरह विकसित और सकट पूरी तरह परिपक्व हो चुका था। इन सब का अनिवाय परिणाम यह था कि मध्य एशिया म समाजवादी क्राति शुरू हो गई।

भारत और मध्य एशिया

साम्राज्यवाद या भारत की सुरक्षा?

भारत और मध्य एशिया के लोगो का राजनीतिक, आर्थिक और सास्कृतिक सबध कई सदी पुराना है। मध्य एशिया के ही इलाके से यात्री और व्यापारी चीन से भारत और भारत से चीन आते और जाते थे। इसी तरह पश्चिम और पूव के व्यापार का रास्ता भी यही से होकर जाता था। समुद्री रास्तो की खोज से पहले यह क्षेत्र सभ्यता और व्यापार का महत्वपूण चतुष्पथ था। स्ट्राबोन ने आक्सस नदी, कास्पियन सागर, ट्रासकाकेशिया और इसके आगे पश्चिम मे काले सागर तट से भारतीय सामान के जाने की चर्चा की है। आधुनिक सोवियत मध्य एशियाई जनतत्रा के इलाके तथा चीन के सिक्याग क्षेत्र मे जा पुरातन स्मारक मिले हैं, उनसे भी दोना जातिया के घनिष्ठ सवधा का पता चलता है।

य राजनीतिक और सास्कृतिक सबध मध्य युग मे बन रहे। ख्वारज्मी विद्वान अबू रैहान अल बेरूनी तथा अब्दुरज्जाक समरकदी की दास्ताना *यात्राए इन सम्पर्का के इतिहास मे एक उज्ज्वल अध्याय हैं।* बाबर द्वारा सस्थापित राजवश के तीन सौ वर्षीय शासन काल मे दोना जातियो का यह सबध और विकसित हुआ।

१६वी सदी के उत्तराद्ध म ब्रिटिश औपनिवेशिक व्यवस्था मे भारत का महत्व काफी बढ गया था। भारत अपने विशाल क्षेत्र, अत्यधिक भौतिक

साधनो और आबादी सहित पूरे एशिया तथा पूर्वी अफ्रीका मे ब्रिटिश सत्ता की "चौकी और बुर्ज" बन गया। ब्रिटिश साम्राज्यवादियो ने और अधिक उपनिवेशो पर विजय प्राप्त करने के लिए अड्डे के रूप मे भारत को इस्तेमाल किया। वे सूडान, मिस्र, अबीसीनिया, अफगानिस्तान, बर्मा और चीन मे आक्रामक युद्ध भारतीय सैनिको का प्रयोग करके लड और इन युद्धो का खर्च भारत के सर मढा। लदन मे इडिया आफिस, अदन तथा लाल सागर की अन्य बन्दरगाहो मे औपनिवेशिक सस्थानो, चीन मे कौनसलखाना और फारस मे दूतावास का खर्च भारत के लोगो को देना पडता था।

ब्रिटिश लेखको द्वारा भारतीय इतिहास के आधुनिक युग के मिथ्या प्रदर्शन के सबध मे जवाहरलाल नेहरू के विचारो से प्रेरित होकर भारतीय विद्वानो को इस युग की पुन छानबीन उससे अधिक आलोचनात्मक ढग से करनी चाहिए जितनी अक्सर की जाती है। नेहरू ने लिखा है

"भारत के इतिहास और खासकर जिसे ब्रिटिश युग कहते हैं, उसके ब्रिटिश विवरण को बहुत बुरा माना जाता है सच्चाई अक्सर सबसे गहरे कूए की तह मे छिपी होती है, और झूठ नग्न और निलज्ज सर्वोपरि होता है।"*

ब्रिटेन की साम्राज्यवादी कारवाइया भारत के पडोसी देशो सिवाय अफगानिस्तान, ऊपरी बर्मा और तिब्बत तक फैली हुई थी। ब्रिटेन की औद्योगिक पैदावार के लिए मडी और कच्चे सामानो के स्रोत के रूप मे इन क्षेत्रो का महत्व नगण्य था। परन्तु विश्व के अतिम विभाजन के साम्राज्यवादी सघर्ष के युग मे सामरिक दृष्टि से उनका महत्त्व बढ गया, क्योकि वे चीन और मध्य एशिया के द्वार पर स्थित थे।

भारत मे ब्रिटिश औपनिवेशिक सत्ता की वैदेशिक नीति हमेशा आक्रामक रही। उसकी बुनियादी दिशा सर्वप्रथम ब्रिटेन की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति से निर्धारित होती थी। १९वी शती के उत्तरार्द्ध मे ब्रिटिश औपनिवेशिक नीति का केन्द्र बिन्दु "पूर्वी प्रश्न" यानी पतनशील तुर्की साम्राज्य की

---

* J Nehru *The Discovery of India* London 1956 p 287

विरासत सभालने के सघष म निहित था। निकट और मध्य पूव मे रूस मुख्य शत्रु था। इसी तथ्य स ब्रिटिश विस्तार का विकास भारत की सीमा पर, खासकर उत्तर और पश्चिमोत्तर दिशाओ म काशगर, अफगानिस्तान और तुर्कमानिस्तान के दक्षिणी क्षेत्रो म निर्धारित होता था। ब्रिटिश उपनिवेशवादी इन क्षेत्रो को मध्य एशिया म रूस के विरुद्ध सघष का अड्डा मानते थे।

ब्रिटेन की सीमा-नीति की आक्रामकता म भारत के अन्दर की स्थिति म उतार-चढाव के अनुसार हेरफेर होता रहता था। सीमा-नीति के सबध म दो दृष्टिकोण उत्पन्न हुए। भारत की सीमाओ पर "अग्रिम नीति' का पक्ष जो प्रतिरक्षा-व्यवस्था म उत्तर-पश्चिमी सीमाओ की दुबलता की रट लगाया करता था भारत के प्रतिरक्षा प्रबध को उसकी प्राकृतिक सीमाओ के बाहर सबल बनाने का आवाहन करता था। इस नीति के समथको का कहना था कि मध्य एशिया पर रूस का कब्जा ब्रिटिश भारत के लिए बडा खतरा है। दूसरा पक्ष इस खतरे से इनकार करता था और एक "बन्द सीमा-नीति" का समथन करता, और भारत की सीमाओ के बाहर सक्रिय रूप म आगे बढने का विरोधी था। इसका उद्देश्य उपनिवेश की भीतरी स्थिति को सुदृढ बनाना था। उस जमाने की ऐतिहासिक परिस्थितिया के कारण "बन्द सीमा-नीति" १८५७ से १८७५ तक हावी रही। १८५७ के जन विद्रोह के बाद अदरूनी पेचीदगिया के कारण सक्रिय रूप म आगे बढना कठिन हो गया था। परन्तु अस्थायी रूप म "अग्रिम नीति' को त्यागने का मतलब यह नही था कि पडोसी इलाको म घुसपैठ की नीति को बिल्कुल छोड दिया गया। कूटनीति का चतुराई से प्रयोग करके अग्रेज अपने प्रभाव-क्षेत्र को बराबर बढाते रहे व ऐसी परिस्थितिया तैयार करने मे सलग्न रहे, जो सक्रिय आक्रमण के अनुकूल हो सके। काशगर और अफगानिस्तान म ब्रिटिश नीति इसका स्पष्ट प्रमाण है। लारेस ने अफगानिस्तान के प्रति "निष्पक्षता" और 'हस्तक्षेप नही करने' की जो नीति घोषित की थी, उसका कारण भी अफगानिस्तान की स्वतत्रता और क्षत्रीय अखडता का सच्चा सम्मान नही था। कजर्वेटिव पार्टी के ... मत्री क्रनबान ने लारेस को लिखा "विरोधी पक्षो के ...

सतर्कतापूर्ण रवैया ही एकमात्र ब्रिटिश हितो के अनुकूल है। भारतीय साधनो की आवश्यकता इस समय के विस्तार के अलावा और काम क लिए है" (ज़ोर—दे० कौ० का)।* वास्तव मे लैनबोन को अफगानिस्तान से अधिक दिलचस्पी ऊपरी बर्मा मे थी। लारेंस को उस समय तक अफगान शासको से घनिष्ठ सबध बनाने की कोई आवश्यकता या उसम कोई लाभ नही दिखाई दिया था। वाइसराय ने लिखा कि "ऐसा दिन आ सकता है, जब ऐसा करना बुद्धिमानी होगी (जैसा बाद म लिटन ने किया), परन्तु वह दिन अभी नही आया है"।**

उस ज़माने मे काशगर मे ब्रिटिश अपनी विस्तारवादी कारवाइयो पर परदा डालने के लिए व्यापार की आड ले रहे थे। ग० ज० ऐलडर ने स्पष्टत स्वीकार किया

"पूर्वी तुर्किस्तान मे ब्रिटिश नीति मे उन्नीसवी सदी के सातवे दशक के बाद हमेशा ही व्यापारिक साधनो और राजनीतिक उद्देश्यो की मिलावट रही है। व्यापार एक यत्र मात्र था। उस युग के सभी वाइसराय इस बात से भली भाति अवगत थे कि व्यापार 'राजनीतिक प्रभाव का एक बडा यत्र' है। लारेंस और रिपन भारत की राजनीतिक ज़िम्मेदारियो को भारतीय सीमा के अदर सीमित रखना चाहते थे, इसलिए उन्होने काशगर से व्यापार को प्रोत्साहित करने के लिए कुछ नही किया। और सबो ने इसको प्रोत्साहित किया, क्योकि वे ब्रिटिश प्रभाव को फलाना चाहते थे।"***

ब्रिटिश लेखक की यह राय सही है। परन्तु उसकी यह सफाई कि अंग्रेज काशगर म अपना प्रभाव "भारतीय सुरक्षा के लिए उसके विशेष महत्त्व" के कारण फैलाना चाहते थे, सत्य से बहुत दूर है। भारत को

*द० S Gopal *British Policies in India* Cambridge, 1965 p 43 अंग्रेज़ो के लिए "घनिष्ठ सबध" का एक ही मतलब था अफगानिस्तान का अधीन राष्ट्र म बदलना।

** वही, पृष्ठ ४८।

*** G J Alder *British India s Northern Frontier 1865 95* London 1963 p 98

रूसी खतरे का हौआ अंग्रेजो ने भारत की उत्तरी और उत्तर-पश्चिमी सीमाओ के परे अपने सम्भावी आक्रमण पर परदा डालने के लिए खडा किया था। ऐलडर स्वय अपना खडन करता है, जब वह उसी पुस्तक मे एक और स्थान पर कहता है

"रूस द्वारा सिक्याग पर कब्जा करने की काउफमन की योजना १८८० म इस आधार पर अस्वीकार कर दी गई कि उससे उसमे लगनेवाले समय और खच के मुकाबले मे नगण्य लाभ होगा। इस बात के ठोस राजनीतिक तथा सनिक कारण थे कि रूस बहुत अच्छी प्राकृतिक सीमा को छोडना नही चाहेगा और कही ज्यादा कष्ट देनेवाली एशियाई मुस्लिम प्रजा की जिम्मेदारी अपने सिर नही लेगा। एक ब्रिटिश सैनिक रिपोट ने काशगर पर रूसी हमले की सम्भावना को प्रमाणित रूप मे अस्वीकार किया।"*

इससे स्पष्ट है कि काशगर की ओर से रूसी हमले से भारत की सुरक्षा के लिए अंग्रेजो की चिन्ता और "कश्मीर जैसे देशी राज के साथ, जिसकी वफादारी अनिश्चित है और जो अध अगम्य है, रूस जैसे शक्तिशाली यूरोपीय राज्य के समसीमायुक्त होने" का खतरा झूठा बहाना था। दुख की बात है कि ब्रिटिश इतिहास लेखको द्वारा दिये गये इन परम्परागत कारणो को इस विषय के कुछ प्रमुख भारतीय लेखक आख ब द करके स्वीकार कर लेते हैं। श्री विशेश्वर प्रसाद लिखते है

"फिर भी इस बात पर बल देना होगा कि इस युग मे सीमावर्ती राज्यो की अखडता और स्वतत्रता तथा भारत की अपनी सुरक्षा का न केवल गहरा सबध, बल्कि दोनो की अन यता सामने आयी। अदन, फारस की खाडी, कलात, अफगानिस्तान, तिब्बत और बर्मा—सभी उसकी रक्षा के दुग थे और उनको गैरो के हस्तक्षेप से बचाने मे ही भारत की सुरक्षा भी थी भारत की वैदेशिक नीति की नीव तब पडी और मैत्री के सबधो और हिता की व्यवस्था विकसित हुई जिससे भारत को सुरक्षा प्राप्त हुई।"**

इसी प्रकार डी० पी० सिघल कहते हैं

---

*वही, पष्ठ ६६ ६७।

** Bisheshwar Prasad, *The Foundations of India s Foreign Policy* vol I Bombay Calcutta, Madras 1955 p 263

"भारत का हित ब्रिटिश साम्राज्यवादी नीति का एक महत्वपूर्ण पहलू था और यूरोपीय शक्तियों के प्रभाव के विरुद्ध भारत की सीमाओं को सबल बनाने की समस्या उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध मे साम्राज्यवादी नीति का एक प्रभावशाली तत्व बन गई।"*

इस तरह की धारणा भारत म अंग्रेजी राज के मूलत साम्राज्यवादी उद्देश्यों का नजरअंदाज करती है, जिसका के० एम० पनिक्कर ने सही मूल्यांकन किया है

"निस्सन्देह एक महान एशियाई शक्ति के रूप मे ब्रिटेन की ताकत भारत पर आधारित थी, जिसने उसको इस योग्य बनाया कि चीन के द्वार खुलवा सके, यांग्त्से घाटी म यूरोपीय प्रभुत्व स्थापित कर सके, महान मंचू सम्राटों की शक्ति को हीन बना सके और शेष एशिया का यूरोप के अधीन बनाने म सहयोग कर सके।"**

अभी हाल म एक और भारतीय लेखक ने भी "मध्य एशिया और फारस म रूस के आगे बढ़ने के खतरे" को "उत्तरी क्षेत्र मे" ब्रिटेन की दिलचस्पी का कारण बताया है। परंतु उनको इस बात का श्रेय देना चाहिए कि वह यह स्वीकार करते हैं कि ब्रिटिश नीति "मध्य एशिया पर दीर्घकालीन प्रभुत्व" स्थापित करने के उद्देश्य से "निरूपित" की गई थी। परंतु उनका खयाल है कि रूसी खतरे ने अंग्रेजों को "पुरजोश कारवाइयों" पर "आमादा" कर दिया। (P N K Bamzai *Kashmir from Lake Success to Tashkent*, Delhi 1966 pp 28 33 40 46) आर० ऐच० मजुमदार के अनुसार अंग्रेजों के अधिकार के तहत भारत की वदेशिक नीति का "प्रधान लक्ष्य ' "शुरू से अन्त तक उत्तर पश्चिम और उत्तर-पूर्व में क्षेत्रीय विस्तार या अन्य उपायों से भारत की प्राकृतिक सीमाओं का सुरक्षित करना था (*British Paramountcy and Indian Renaissance The History and Culture of the Indian People* pt I 1963 pp 1039 1041)।

* D P Singhal, *India and Afghanistan 1876—1907* Melbourne 1963 p xi

* K M Panikkar *Asia and the Western Dominance* London 1954 p 95

एशिया मे ब्रिटिश विस्तार ब्रिटिश साम्राज्यवाद के चरित्र का स्वाभाविक नतीजा था, न कि भारत की सुरक्षा की तथाकथित चिता का। ब्रिटेन के शासक वग इजारदारी-पूव के पजीवाद से साम्राज्यवाद मे सक्रमण काल म अधिकतम औपनिवेशिक विस्तार चाहते थे। जैसा कि पहले कहा गया था, भारत की सुरक्षा को "रूसी खतरा" ऐसी मनगढ़त बात थी जिससे वे मध्य एशिया मे अपने आक्रमण का औचित्य पेश करना चाहते थे। यह सचमुच दुख का विषय है कि भारतीय लेखको ने, उत्तर और पश्चिम मे भारत के सीमावर्ती राज्यो के प्रति ब्रिटिश नीति का यह कहकर समथन किया कि वह भारतीय सुरक्षा के हिता द्वारा निर्धारित होती थी। इन लेखका ने यह छानबीन करने का कष्ट नही किया कि यह "रूसी खतरा" रूस की सैनिक और राजनीतिक स्थिति तथा उसकी आर्थिक और यातायात सम्भावनाओ की दृष्टि से कहा तक वास्तविक था।*

मध्य एशिया से सबध

मध्य एशिया मे बडी भारतीय बस्तिया का उल्लेख १७वी शती के स्थानीय साहित्य मे मिलता है। उदाहरण के लिए, मोहम्मद यूसुफ मुशी की प्रसिद्ध ऐतिहासिक कृति मे इसकी चर्चा है। मध्य एशिया म हिदुस्तानी अधिवासियो की बस्तिया अक्तूबर क्राति के समय तक कायम रही। सावियत विद्वान ग० ल० दमीत्रियेव ने मध्य एशिया मे हिदुस्तानी अधिवासिया की सरगमियो का विस्तारपूवक अध्ययन किया है। उनके मतानुसार छह से आठ हजार हिदुस्तानी १६वी शती के मध्य और २०वी शती के पारम्भ मे वहा रहते थे। वे मुख्यतया सिंध के शिकारपुर इलाके और पजाब के पेशावर, लाहौर, मुलतान, लुधियाना और अमतसर के रहनेवाले

---

* K S Menon, *The "Russian Bogey and British Aggression in India and Beyond* Calcutta 1957 ब्रिटिश नीतिया के आलाचनात्मक अध्ययन का भारत म यह शायद पहला प्रयास है।

थे। उनमे कश्मीर, दिल्ली, इलाहाबाद, बम्बई तथा अन्य नगरो के लोग भी थे।

हिंदुस्तान से आकर बसनेवालो मे हिंदु, मुस्लिम, सिख—सभी प्रकार के लोग थे। वे अधिकतर अमीर-ए-बुखारा के प्रशासन क्षेत्र मे, फरगाना घाटी, समरकन्द, तुर्किस्तान के सिर-दरिया इलाके मे बसे हुए थे। कुछ हिन्दुस्तानी जेतीसुव और ट्रासकास्पियन क्षेत्रो म भी आबाद थे। खीवा के खान प्रशासन क्षेत्र मे शायद कोई हिंदुस्तानी बस्तिया नही थी, यद्यपि हिंदुस्तानी व्यापारी दो या तीन महीनो के लिए वहा जाया करते थे। मध्य एशिया म रहनेवाले अधिकाश हिंदुस्तानी व्यापारी और साहूकार थे (सिंध के भाटिये राजस्थान के मारवाडी, पजाब के खत्री तथा पश्चिमी भारत के खोजा और बोहरा)। मगर उनम कुछ किसान, दस्तकार तथा मेहनतकशो के अन्य प्रतिनिधि भी थे। ताशकन्द म १८७५ म जो १३६ हिंदुस्तानी रहते थे, उनम ३६ धनी भारतीय व्यापारियो के नौकर चाकर और पाच भिखारी थे। उज्बेक सोवियत समाजवादी जनतत्र के पुरालेख सग्रहालय की कुछ दस्तावेजो से पता चलता है कि कुछ हिंदुस्तानियो के अलावा, जो खेतीबारी का काम करते थे, सोनार, जिल्दसाज, बुनकर नानबाई और हलवाई भी थे।

बहुत कम हिंदुस्तानी ऐसे थे, जिन्होने मध्य एशिया मे स्थायी आवास ग्रहण कर लिया हो। ज्यादातर लोग अधिक से अधिक १० या १५ वर्ष रहा करते और उसके बाद देश लौट जाते थे। बहुत कम ऐसा होता कि स्त्री और बच्चे उनके साथ आते हो। भारतीय अधिवासी साधारणतया कारवान-सरायो म साथ मिलकर रहा करते थे। ताशकन्द, बुखारा और समरकन्द जैसे बडे शहरो म कई कई हिंदुस्तानी कारवान-सरायें होती थी। नमनगान और मर्गिलान जसे छोटे शहरो म खास हिंदुस्तानी मुहल्ले होते थे। मध्य एशिया म हिंदुस्तानी समुदायो के अपने मुखिया होते थे, जो प्रशासन के सम्मुख उनका प्रतिनिधित्व किया करते थे तथा विवाह सबधी तथा अन्य झगडो का निपटारा करने म सहायता करते थे।

मध्य एशिया पर जारशाही रूस का कब्जा होने स पहले भारत से इस इलाके का व्यापार काफी जोरो पर था। भारत मे जारशाही रूस का

संबंध (जिसका स्वरूप कुछ अस्थायी और अनियमित था) मध्य एशिया के जरिये ही हुआ करता था। जब जारशाही रूसी साम्राज्य में कोकान का खान शासित क्षेत्र, बुखारा और खीवा का वह भाग मिल गया, जो तुर्किस्तान का जारशाही प्रांत बना तो बुखारा भारत से व्यापार और व्यवसाय की एक महत्वपूर्ण कड़ी बना रहा। १९वी शती के सातवें दशक के अंत में वहां की स्थानीय आबादी को भारतीय सामान मुहैया करने में हिन्दुस्तानी व्यापारियों ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। वे चाय नील, मलमल, मसाले तथा अन्य प्रकार का भारतीय और अंग्रेजी तैयार माल मध्य एशिया लाया करते। ५४,७५ ००० रूबल का भारतीय सामान जिसका वजन एक लाख पूद होता, सालाना बुखारा निर्यात किया जाता था। इसके बदले में बुखारा से २ १०० पूद वजन का सामान भारत भेजा जाता था। बुखारा से भारतीय सामान रूसी तुर्किस्तान तथा रूसी साम्राज्य के अन्य व्यापार-केन्द्रों को भेजा जाता था। भारतीय माल, खासकर चाय, के निर्यात का थोक-व्यापार पेशावर के मुस्लिम व्यापारियों के हाथों में था, परन्तु रूसी तुर्किस्तान में उसकी फुटकर बिक्री सिंध और पंजाब के हिंदू व्यापारी किया करते थे। बुखारा में छह हिन्दुस्तानी कारवान-सराये थी, जो चाय के व्यापार से संबंधित थी। अब्दुरशीद की सराय में हर साल ३ ००० ऊंट हिंदुस्तानी चाय लादकर आया करते थे मिर्जा गुलिया की सराय में १ ५०० ऊंट और बदुद्दीन की सराय में १ २०० ऊंट।

जारशाही सरकार ने रूसी तुर्किस्तान में हिंदुस्तानी अंग्रेजी माल का आयात रोकने के लिए अनेक कारवाइयां की। इन कारवाइयों के फलस्वरूप पिछली शती के आठवें और नौवें दशकों में भारतीय सामान का निर्यात कुछ दिनों के लिए रुक गया। १८८५ में बुखारा में रूसी राजनीतिक एजेंसी स्थापित की गयी और चाय, मलमल और नील को छोड़कर बाकी आंग्ल भारतीय सामानों के प्रवेश पर निरोध लग दिया गया। भारतीय चाय के आयात पर ५० प्रतिशत चुंगी लगा दी गयी। इतने ऊंचे आयात-करों के कारण भारतीय व्यापारी परिवहन के खर्चों में किफायत करने का उपाय ढूंढने लगे। पहले उन्होंने मध्य एशिया में अपना सामान फारस के रास्ते लाना शुरू किया और अफगानिस्तान का खतरनाक

रास्ता छोड दिया। दसवीं दशाब्दी के शुरू म वे बम्बई–बतूम का समुद्री रास्ता अख्तियार करने लगे और वहा से व ट्रांसकास्पियन रेलवे पर जाते, जो उन्ही दिनो खुली थी। बतूम स भारतीय माल काकेशियाई रेलवे के जरिये कास्पियन तट तक लाया जाता और तब कास्पियन के रास्ते ताश्कन्द तक पहुचाया जाता। इस रास्ते भारतीय सामान के आने से जारशाही खजाने का भी नफा था, इसलिए १८६४ म इस रास्ते सामान लाने–ले जाने की आज्ञा दे दी गयी।

मध्य एशिया से व्यापार के इस सस्ते रास्ते के खुल जाने का इस क्षेत्र स भारत के व्यापार पर लाभदायक असर पडा, यद्यपि चुंगी कर ऊचा था। बम्बई–बतूम रास्ता खुल जाने के साथ भारतीय व्यापारियो ने तुर्किस्तान की मडी मे, खासकर जहा तक चाय के व्यापार का सवाल था अपनी पुरानी हैसियत पुन स्थापित कर ली। सोवियत इतिहासज्ञ ग० ल० दमीत्रियेव के अनुसार ताशकन्द के पुरालेख-सग्रहालय मे जो दस्तावेजें उपलब्ध है, उनसे पता नही चलता कि १८८१–१८९२ की अवधि म कोई हिन्दुस्तानी व्यापारी चाय का व्यापार करता था। परन्तु १८९६ की दस्तावेजो म छह हिन्दुस्तानी व्यापारियो का उल्लेख है, जिन्होंने उस साल चाय का व्यापार किया। समुद्री रास्ते के खुल जाने से बुखारा के साथ भी भारतीय चाय के व्यापार को फायदा पहुचा। गत शताब्दी के आठवे तथा नवे दशक म बुखारा म भारतीय चाय के व्यापारियो की सख्या ८–१० थी और बीसवी शती के प्रारम्भ म यह बढकर ७० के लगभग हो गयी। बुखारा के चाय के व्यापार पर भारतीय व्यापारियो ने प्राय अपना एकाधिकार कायम रखा और धीरे धीरे वे तुर्किस्तान की मडी पर भी हावी हो गये। समरकन्द म, जो चाय के व्यापार का एक मुख्य केन्द्र बन गया था १९१० म चाय की फर्मो के जो १० उद्यम थे, इनम से तीन के मालिक भारतीय व्यापारी थे।

जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया था भारत स मध्य एशिया को निर्यात की जानेवाली मुख्य वस्तुए चाय, मलमल नील कश्मीरी शाल और अग्रेजी औद्योगिक चीजें थी। उज्बेक इतिहासकार श्रीमती रसूलजादे का कहना है कि हर साल कोई सात लाख पूड भारतीय चाय, १८ हजार

पूड नील, मलमल की १४०० गाठ, काई ५०० कश्मीरी शाल और ३०० टुकडे किमखाव का आयात मध्य एशिया म होता था। भारतीय व्यापारी मध्य एशिया स अफगानिस्तान, काशगर और अक्सर हिदुस्तान मे बडी माता म कच्चे रेशम, रूसी चीनी के बतन तथा अन्य औद्योगिक सामान का आयात करते थे। वे रूसी तुर्किस्तान तथा मध्य एशिया क खान-प्रशासित क्षेत्रा के परस्पर व्यापार मे भी भाग लिया करत थे। इम प्रकार वे कोकान से ताशकन्द कपास हाथ का बुना कपडा, कालीन, गाउन और रग लात और रूसी लोहा ताबा इस्पात, चीनी तथा अन्य सामान कोकान लाया करते थे। भारतीय सामाना क अलावा वे रूसी तुर्किस्तान म १९१७ की अक्तूबर क्राति तक मध्य एशियाई तथा रूसी सामाना का भी व्यापार किया करत थे और अक्सर फेरीवाला की तरह गावो गावो घूमकर फुटकर माल भी बचा करते थे।

१९वी शती के अत और २०वी शती के प्रारम्भ तक कपास ऊन फर तथा खाद्यान्न की खरीद भारतीय व्यापारिया के कारोबारी कायकलाप म बडा स्थान ग्रहण कर चुकी थी। समय बीतन के साथ व केद्रीय रूसी फर्मो स भी कारोबार करन लगे, उनस सामान मगवात और नीज्नी नोवगोरोद के व्यापारी मेला म भाग लिया करत। कुछ हिदुस्तानी प्रवासिया न पजीवादी उद्यमा म पूजी भी लगायी। १८८७ म एक बाई वालागुलेव* को सोना तथा खनिज पदार्थो का खनन करने का कनसशन मिला। वालागुलेव रूसिया के शराब के कारखाना म अगर सप्लाई किया करता था। एक और हिदुस्तानी परामान लागूरिनोव का भी उल्लेख किया गया है कि वह भी कोई कारोबार करता था। हिदुस्तानिया की चाय पेकिग फैक्टरिया म अनेक स्थानीय मजदूर काम किया करते थे। उदाहरण के लिए एक पेशावरी फज़ल अहमदोव की फक्टरी म १९०६ म ३० मजदूर काम किया करते थे। १८९९ म बाई गुलाएव ने नमनगान ज़िले के मशहद नामक

---

*अभिलेखागार म उपलब्ध दस्तावेजा म दज हिदुस्तानी नामो पर स्पष्टत उज्बेक और रूसी प्रभाव है।

गाव म रूसी अ० येपीफानोव के साझे मे कपास साफ करने की फैक्टरी स्थापित की। एक और हिन्दुस्तानी याकूब शेख नूरखानोव न, जो पेशावर का रहनेवाला था, १९०९ म अन्दीजान मे एक और कपास साफ करने की फैक्टरी खोली।

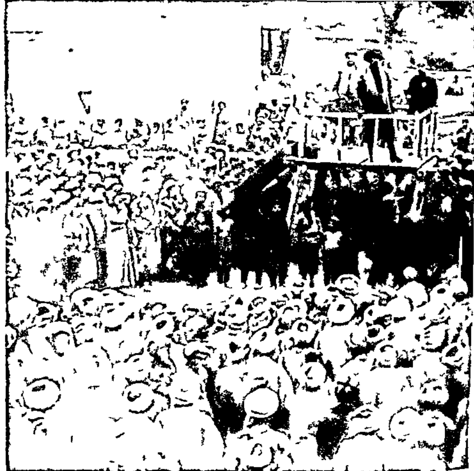
मध्य एशिया म हिन्दुस्तानी प्रवासियो की खासी बडी सख्या साहूकारी भी करती थी। गत शती के आठवे दशक मे हिन्दुस्तानी साहूकारो का कारोबार रूसी तुर्किस्तान मे जोरो पर चला हुआ था। उनकी शोषणकारी कारवाइयो की ओर प्रशासन का ध्यान १८७१ मे ही आकृष्ट हुआ था, जब जरफशान प्रदेश के सनिक गवनर ने उनके विरुद्ध दडात्मक कारवाई करने की सिफारिश की थी। परन्तु १८७७ तक इनकी सरगमिया पर रोक लगाने के लिए कुछ नही किया गया। उस साल एक कानन लागू करके हिन्दुस्तानियो द्वारा अचल सम्पत्ति की खरीदारी पर निषेध लगा दिया गया। इसके बाद तुर्किस्तान के हिन्दुस्तानी प्रवासी धीर धीर व्यापार की ओर ध्यान देने लगे। बुखारा म बीसवी शती के शुरू तक भारतीय समुदाय म अधिकाश साहूकार थे।

यद्यपि आग्ल रूसी औपनिवेशिक प्रतियोगिता के कारण भारत तथा मध्य एशिया के परस्पर व्यापार को कुछ धक्का लगा, उनका सास्कृतिक सम्पर्क निरतर बना रहा। इस दिशा मे एक महत्वपूर्ण कदम १८९७ मे उठाया गया, जब अशकाबाद और ताशकन्द म तुर्किस्तान सैनिक कमान के अफसरो के लिए हिन्दुस्तानी भाषा का दो वष का पाठ्यक्रम जारी किया गया। अशकाबाद हिन्दुस्तानी पाठ्यक्रम को १९०० म ताशकन्द पाठ्यक्रम म मिला दिया गया, जो आगे बढकर प्राच्य विद्याओ का स्कूल बन गया। अशकाबाद म हिन्दुस्तानी पाठ्यक्रम का प्रारम्भ कर्नल यागेल्लो न और ताशकन्द म लेफ्टिनेंट कनल विगानित्स्की न किया था। कनल यागेल्लो ने प्राच्य भाषाओ के पेरिस स्कूल म शिक्षा प्राप्त की थी और लेफ्टिनेंट-कनल विगानित्स्की ने बुखारा म भारतीय लोगो के साथ रहकर हिन्दुस्तानी सीखी थी। विगानित्स्की ने भारत की यात्रा भी की और वहा कुछ मास रहे थे। कर्नल यागेल्लो ने हिन्दुस्तानी-रूसी शब्दकोश तैयार किया था, जो १९०२ म प्रकाशित हुआ। उन्होंने गुणना तथा



बुखारा मे जन विद्रोह की विजय, सितम्बर १६२०। विद्रोही जनता अमीर के किले के सामने

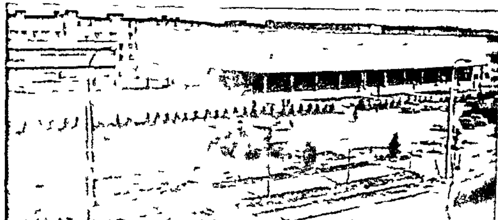
एक गरीब किसान को भूमि और मवशी का दानपत्र दिया रहा है १६२५



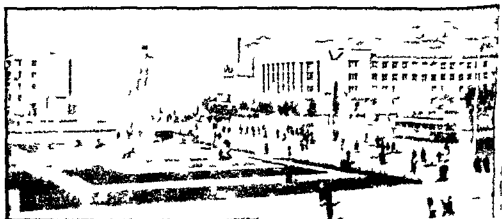
भूमि और जल-सुधार के कानून की तामील पर विचार करने के लिए एक सभा। प्रवक्ता हैं उजबेक सा० स० जनतंत्र की केंद्रीय कार्यकारिणी समिति के [illegible] के अध्यक्ष य० अखुनबाबायेव १९२९

सामूहिक विमान फरहाद पनबिजलीघर क निर्माण मे

फरहाद पनबिजलीघर का बाध, १९५८

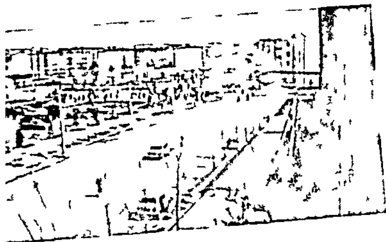


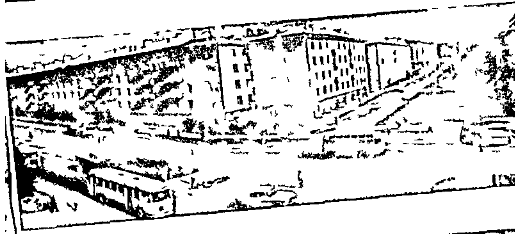


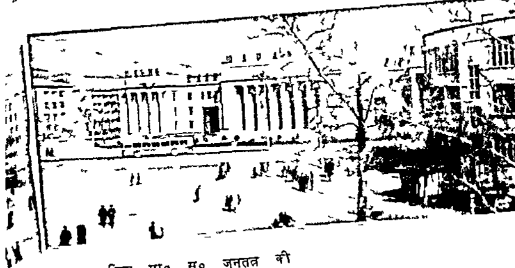


उजबेक सो० स० जनतंत्र की राजधानी ताशकन्द का चिमान चार गुम्बा

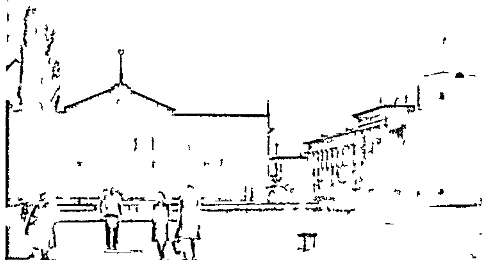
कजाख सो० स० जनतंत्र की राजधानी अल्मा-अता का आबाई प्रांगण





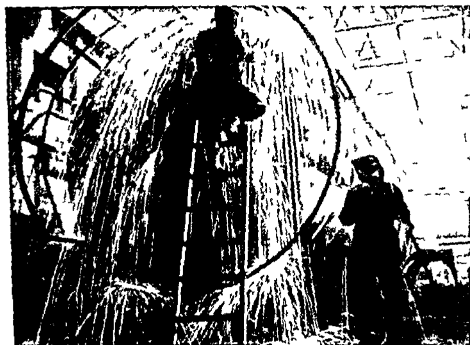


ताजिक सा० स० जनतंत्र की
राजधानी दुशंबे का लेनिन

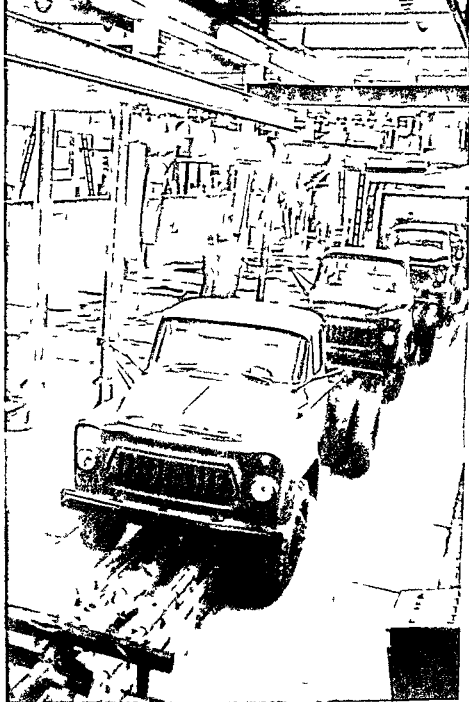


तुरमार गा० म० जनतत्र का
राजधाना मखाचकाला

तिगिज गा० म० जनतत्र दा
राजधानी म ज का मानगाता
सभा



चिरचिक उज्बेक सा० स० जनतंत्र, मे रासायनिक उद्योग के लिए यंत्रो का निर्माण



पज त्रिगिज मा० ग० जाता
म गर माग्र मारगाना

चित्राल की बोलियो का व्याकरण तैयार करने मे भी सहायता की। अप्रैल १९०१ मे प्राच्य विद्याओ की रूसी सस्था की एक शाखा अ० ग० सेरेब्रेनिकोव, अ० ई० स्नेमारेव, म० व० गुलेव तथा अन्य प्रसिद्ध प्राच्य विदो की पहलकदमी पर ताशकन्द म स्थापित की गयी। ताशकन्द ने दो महत्वपूर्ण अखबारो—रूसी मे "तुकिस्तानस्कीये वेदामास्ती" तथा उज्बेक मे "तुकिस्तान विलायतिनिग गज़ेती" ने हिदुस्तानी मामला मे काफी दिलचस्पी ली। इस दूसरे अखबार ने उज्बेक कवि फुक्त तथा यात्री सैयद अली खाजा की भारत यात्रा के सबध मे मूल्यवान सूचनाए प्रकाशित की। रूसी प्राच्यविदो के साथ उज्बेक विद्वानो ने भी भारतीय भाषाओ तथा सस्कृति के अध्ययन मे गहरी दिलचस्पी ली। इस सबध मे सैयद रसूल खोजा, सैयद अजीज़ खोजायेव, ताहिरबेक कियाशवेकोव और खलीलुद्दीन अहमद के नाम उल्लेखनीय हैं। कुछ उज्बेक विशेषज्ञ भारतीय भाषाओ का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करने भारत भेजे गये।

बहुतेरे हिदुस्तानियो न मध्य एशिया मे अपन लम्बे निवासकाल मे वहा की स्थानीय भाषाए सीखी। कुछ ने रूसी भी सीखी। कुछ हिदुस्तानियो को उज्बेक और ताजिक भाषाओ का अच्छा ज्ञान हो गया था जिसका दस्तावेजी सबत ताशकन्द के पुरालेख-सग्रहालय के कागजात मे मौजूद है। कबीरशाह मुस्ताफीन, जो कश्मीर से आये थे और ताशकन्द जिले के बेकाबाद गाव मे अपने परिवार सहित पिछली सदी के दसवे दशक मे रहते थे, ताशकन्द के रहनेवाले किरपामल और सुखमल, जो सिध के शिकारपुर से आये थे, तथा अन्य हिदुस्तानी जैसे साधुमल खिमनमलीयेव, खासा खुदायेव, गुलाममल खिमनमलीयेव और मुश्कीमल खिमनमलीयेव उज्बेक भाषा से भली भाति परिचित थे। जारशाही रूस म मध्य एशिया के विलयन के बाद हिदुस्तानियो को रूसी व्यापारियो, कारोबारियो तथा प्रशासको से काम पडने लगा। कुछ दिना मे अनेक हिदुस्तानिया न रूसी बोलने का अच्छा अभ्यास कर लिया था। १९वी शती के आठवे दशक मे सरकारी कागजो मे एक भारतीय नुका बूता का उल्लेख है जिसके बारे मे कहा गया है कि वह रूसी का अच्छा ज्ञान रखनेवाला विदेशी था। हमे १९०४ मे ताशकन्द मे कम से कम एक हिदुस्तानी का पता मिलता

है, जिसका काम अपने स्वदेशियों के लिए रूसी में अनुवाद करना था। उसका नाम था पीरदास शबीलदासोव। अधिकांश हिंदुस्तानी नामों के अंत में "ओव" प्रत्यय जुड़ा हुआ है जिससे रूसी प्रभाव प्रकट होता है। सरकारी दस्तावेज़ों में यह सूचना भी है कि समरकन्द में रहनेवाले एक ३२ वर्षीय हिंदुस्तानी तथा एक १६ साल के लड़के ने रूसी भाषा सीखने के लिए रूसी स्कूल में नाम लिखवाये थे। १९२६ की जनगणना में मध्य एशिया के क्षेत्र में रहनेवाले ३७ हिंदुस्तानियों का उल्लेख है। ये सब सोवियत संघ के नागरिक बन गये थे। उनमें से पांच ने रूसी को और एक ने उज़्बेक को अपनी मुख्य भाषा लिखवाया था।

मध्य एशिया के ज़ारशाही साम्राज्य में विलयन के बाद उस इलाके में अनेक हिंदुस्तानियों की उपस्थिति से कई रूसी प्राच्यविदों में दिलचस्पी पैदा हुई। १८६७ में ही प० ई० पशीनो ने "कश्मीरियों की ज़बानी कश्मीर की कहानी" प्रकाशित की। रूसी में यह उस राज्य का पहला वर्णन है, जो ताशकन्द में रहनेवाले कश्मीरियों के साथ लेखक के समालाप पर आधारित है। कुछ भारतीयों ने, जैसे रामचन्द्र बालाजी, जो अंग्रेज़ों के विरुद्ध १८५७ के विद्रोह के महान नेता नाना साहब का भतीजा थे, मध्य एशिया के अध्ययन के लिए रूसी वैज्ञानिक खोज-यात्राओं में भाग लिया। १८८७ की गर्मियों में रामचन्द्र ने समरकन्द वैज्ञानिक खोज-यात्रा के सदस्य की हैसियत से मध्य एशिया का विस्तारपूर्वक दौरा किया और आमू-दरिया की एक शाखा की प्राचीन धारा के अध्ययन में योगदान किया। मध्य एशिया में हिंदुस्तानी प्रवासियों ने अस्त्राबाद और ताशकन्द में रूसी अफसरों के लिए हिंदुस्तानी के पाठ्यक्रम संगठित करने में भी सहायता की। किसानिस्की तथा गिलफेदिंग जैसे रूसी अफसरों का हिंदुस्तानी बातचीत का व्यावहारिक अभ्यास बुखारा में हिंदुस्तानी प्रवासियों के बीच में हुआ था। भारतीय व्यापारी अपने साथ बड़ी संख्या में लीथोग्राफ में छपी पुस्तकें मध्य एशिया लाये थे। १९१३ में खोजन्द के एक ताजिक व्यापारी ने दिल्ली, बम्बई, लखनऊ, लाहौर, कानपुर तथा अन्य हिंदुस्तानी शहरों में प्रकाशित २००० पुस्तकें खायीं

की थी। इस व्यापारी ने बाद मे बम्बई मे अपना निजी छापाखाना भी कायम किया।

मध्य एशिया पर रूसी कब्जे का प्रभाव भारतीय राष्ट्रीय मुक्ति आदोलन पर भी पडा। एगेल्स ने लिखा था " जब एक प्रथम श्रेणी की यूरोपीय सैनिक शक्ति तुर्किस्तान मे अपने कदम जमाती है, बल प्रयोग तथा चापलूसी दोनो से काम लेकर फारस और अफगानिस्तान को अपना अधीन बनाने का प्रयास करती है, और धीरे धीरे मगर दृढतापूर्वक हिदूकुश तथा सुलैमान पर्वतमाला की ओर बढती है – तो वहा एक सर्वथा भिन्न स्थिति उत्पन्न हो जाती है। अंग्रेजी प्रशासन कोई अनिवार्य नियति नही रह जाता, और स्थानीय लोगो के सामने एक नयी सम्भावना उत्पन्न होती है। शक्ति द्वारा जिसका निर्माण किया गया है, शक्ति ही उसे छिन्न भिन्न भी कर सकती है "*

मध्य एशिया पर रूसी कब्जे से ठीक पहले ब्रिटिश भारतीय सेना के बहुत से भगोडो ने १८५७ के विद्रोह की असफलता के बाद बुखारा और कोकान मे शरण लिया था। मध्य एशिया म रूसी आगमन से भारतीय जनगण का आशा बधी कि वे अंग्रेजा के औपनिवेशिक अत्याचार का जूआ उतार फेंकेंगे। अवश्य ही यह आशा प्रारम्भ मे केवल कुछ देशी रजवाडो के शासको तक ही सीमित थी जिनकी जनप्रिय आकाक्षाए रही थी और जो केवल दो औपनिवेशिक शक्तियो के अतर्विरोध स फायदा उठाकर अपना उल्लू सीधा करना चाहते थे।

सोवियत इतिहासकार नि० अ० खालफिन, ग० ल० दूमीत्रियेव और प० व० रसूलज़ादे न विभिन्न दूत मडलियो का उल्लेख किया है, जिन्हे भारतीय राजो महाराजो ने अंग्रेजा के विरुद्ध सहायता मागने के लिए तुर्किस्तान म रूसी अधिकारियो के पास भेजा था। कश्मीर के महाराजा रणवीर सिंह ने चार व्यक्तियो का मडल भेजा था। इनमे से मडल के नेता सहित दो व्यक्ति रास्ते मे मार डाले गये और महाराजा का पत्र

---

*क० मार्क्स, फ्रे० एगेल्स, रचनाए, खड २२, पृष्ठ ४५। (रूसी सस्करण)

भी उनके साथ खो गया। बाकी दो—अब्दुर्रहमान खान और सरफराज खान—नवम्बर १८६५ में ताशकन्द पहुंचे। जनरल चेरन्यायेव ने उनसे भेंट की, जिसके समक्ष उन्होंने मंत्री की घोषणा की और पूछा कि रूसिया से क्या आशा की जा सकती है। इस दूत-मंडल को कोई सफलता नहीं मिली। ज़ारशाही सरकार को भारत की राष्ट्रीय स्वाधीनता के ध्येय को प्रोत्साहित करने से कोई दिलचस्पी नहीं थी। उसको दिलचस्पी केवल अपने औपनिवेशिक विस्तार से थी, यद्यपि पर्याप्त भौतिक साधनों के अभाव के कारण उस समय उसकी अभिरुचि नहीं थी कि शक्तिशाली ब्रिटिश साम्राज्य से किसी प्रकार झगड़े में पड़े।

१८६६ में इंदौर के शासकों ने भी इसी तरह के उद्देश्य से एक दूत मंडल ताशकन्द भेजा। दूत ने अपने को इंदौर के मुख्य मंत्री का सुपुत्र बताया। उन्होंने अनेक रजवाड़ों, जैसे हैदराबाद, बिकानेर, जोधपुर और जयपुर के नाम पर सहायता की याचना की। लेकिन सम्भव है कि उक्त दूत ने अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाने के विचार से ही इतने सारे नाम ले दिये हों, क्योंकि इसका कोई सबूत नहीं कि इन हिंदुस्तानी राज्यों ने अंग्रेजों को निकाल भगाने के लिए कभी कोई एका किया हो। इस दूत मंडल का भी कोई परिणाम नहीं निकला।

कश्मीर के महाराजा रणबीर सिंह का एक दूसरा दूत मंडल जून १८७० में ताशकन्द पहुंचा। इसके नेता थे वालिया राम प्रकाश। परन्तु इस बार भी ज़ारशाही रूस ने कोई राजनीतिक या सैनिक सहायता नहीं की। हिंदुस्तानी राजाओं और जागण के लिए जहां कहीं से हो सके समर्थन पाने का प्रयास करना स्वाभाविक ही था। मगर यह बात गलतफहमी है कि उपनिवेशवादी ज़ारशाही रूस की सहायता अगर मिल भी जाती, तो इससे देश आज़ाद हो सकता था। ज़ारशाही रूस "यूरोपीय प्रतिक्रिया का जनदाता' और जातियों का कारागार" था, और उससे यह आशा नहीं की जा सकती थी कि निस्स्वार्थ सहायता करे।

भारत के नामधारी [illegible] द्वारा भेजे गये दो दूत-मंडलों में यहां सबसे महत्त्वपूर्ण गुरु चरण सिंह का दूत-मंडल था, जो १८७८ में ताशकन्द पहुंचा। इस दूत मंडल को जातीय दूत-मंडल कहा जा सकता है।

इसका भारत के सामंती राजाओं से कोई संबंध नहीं था। इसे पंजाब के नामधारी सिखों ने भेजा था, जो उस प्रांत को अंग्रेजों के औपनिवेशिक शासन से मुक्त कराना चाहते थे। गुरु चरण सिंह ने जब यह कठिन यात्रा की, तो उनकी आयु ७० वर्ष से अधिक हो चुकी थी। उन्होंने रूसी अधिकारियों को यह समझाने की चेष्टा की कि राष्ट्रीय स्वाधीनता के संग्राम में भारतवासियों की सहायता करना क्या आवश्यक है। वह अपने साथ वालियां राम सिंह का पत्र ले गये थे जिसमें गुरु गोविन्द सिंह की भविष्यवाणियों के आधार पर बताया गया था कि भारत को रूसियों के आने पर अंग्रेजी जूए से मुक्ति मिलेगी। गुरु चरण सिंह के संबंध में लिखते हुए जरफ्शान प्रांत के गवर्नर न० अ० इवानोव ने इस बात पर बल दिया कि "यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि ब्रिटिश इंडिया की आबादी के एक भाग ने वैदेशिक जूए से मुक्ति दिलाने के लिए हमसे सहायता मांगी है"। उन्होंने यह भी नोट किया कि "गुरु चरण सिंह से बातें करने से हमें रूस की शक्ति में ऐसे विश्वास का, ब्रिटेन के घृणित शासन से भारतीय जनता को मुक्ति दिलाने की हमारी नियति में ऐसी आस्था का पता चलता है कि ब्रिटिश इंडिया की आबादी पर हमारे महान नैतिक प्रभाव में सन्देह करना असम्भव हो जाता है"।* लेकिन जारशाही सरकार ने हिन्दुस्तानी देशभक्तियों की प्रार्थना को फिर सुना अनसुना कर दिया। तुर्किस्तान के जारशाही गवर्नर-जनरल काउफमन ने किसी प्रकार वचनबद्ध हुए बिना दोस्ताना उत्तर दे दिया।

ग्वालियर और जयपुर के महाराजाओं ने भी १८७९ और १८८० में तुर्किस्तान में रूसी अधिकारियों के पास दूत मंडल भेजे थे। ग्वालियर के शासक के ब्राह्मण दूत हीरालाल से जरफ्शान के गवर्नर न० अ० इवानोव ने समरकन्द में भेंट की। इवानोव ने शाहजादे इब्राहीम शाह से भी भेंट की, जो जयपुर के महाराजा का पत्र लाये थे। सोवियत

---

*उज्बेक सो० स० जनतंत्र का राजकीय अभिलेखागार, फाइल १। मिशन के बारे में पढ़िये पी० सी० राय द्वारा लेख, 'प्राब्लेमी वोस्तोकोवेदेनिया', १९५९, अंक ४, पृष्ठ ७७–८१। (रूसी संस्करण)

भी उनके साथ खो गया। बाकी दो—अब्दुरहमान खान और सरफराज खान—नवम्बर १८६५ में ताशकन्द पहुचे। जनरल चेरन्यायेव ने उनसे भेंट की, जिसके समक्ष उन्होने मैत्री की घोषणा की और पूछा कि रूसिया से क्या आशा की जा सकती है। इस दूत मडल को कोई सफलता नही मिली। जारशाही सरकार को भारत की राष्ट्रीय स्वाधीनता के ध्येय को प्रोत्साहित करने से कोई दिलचस्पी नही थी। उसको दिलचस्पी केवल अपने औपनिवेशिक विस्तार से थी, यद्यपि पर्याप्त भौतिक साधनो के अभाव के कारण उस समय उसकी अभिरुचि नही थी कि शक्तिशाली ब्रिटिश साम्राज्य से किसी प्रकार झगडे मे पडे।

१८६६ मे इदौर के शासक ने भी इसी तरह के उद्देश्य से एक दूत मडल ताशकन्द भेजा। दूत ने अपने को इदौर के मुख्य मत्री का सुपुत्र बताया। उन्होने अनेक रजवाडो, जसे हैदराबाद, बिकानेर, जोधपुर और जयपुर के नाम पर सहायता की याचना की। लेकिन सम्भव है कि उक्त दूत ने अपनी प्रतिष्ठा बढाने के विचार से ही इतने सारे नाम ले दिये हो, क्योकि इसका कोई सबूत नही कि इन हिदुस्तानी राज्यो ने अग्रेजो को निकाल भगाने के लिए कभी कोई एका किया हो। इस दूत मडल का भी कोई परिणाम नही निकला।

कश्मीर के महाराजा रणवीर सिह का एक दूसरा दूत मडल जून १८७० मे ताशकन्द पहुचा। इसके नेता थे बालिया अम प्रकाश। परतु इस बार भी जारशाही रूस ने कोई राजनीतिक या सनिक सहायता नही की। हिन्दुस्तानी राजाओ और जनगण के लिए जहा कही से हो सके समथन पाने का प्रयास करना स्वाभाविक ही था। मगर यह बात सन्देहजनक है कि उपनिवेशवादी जारशाही रूस की सहायता अगर मिल भी जाती, तो इससे देश आजाद हो सकता था। जारशाही रूस "यूरोपीय प्रतिक्रिया का जनडाम" और "जातियो का कारागार" था, और उससे यह आशा नही की जा सकती थी कि निस्स्वार्थ सहायता करे।

भारत के सामती राजाओ द्वारा भेजे गये इन दूत मडलो से कही ज्यादा महत्वपूर्ण गुरु चरण सिह का दूत-मडल था, जो १८७९ मे ताशकन्द पहुचा। इस दूत मडल को जनप्रिय दूत मडल कहा जा सकता है।

इसका भारत के सामती राजाओ से कोई सबध नही था। इसे पजाब के नामधारी सिखो ने भेजा था, जो उस प्रात का अंग्रेज़ो के औपनिवेशिक शासन से मुक्त कराना चाहते थे। गुरु चरण सिंह ने जब यह कठिन यात्रा की, तो उनकी आयु ७० वर्ष से अधिक हो चुकी थी। उन्होने रूसी अधिकारियो को यह समझाने की चेष्टा की कि राष्ट्रीय स्वाधीनता के सग्राम मे भारतवासियो की सहायता करना क्यो आवश्यक है। वह अपने साथ बालिया राम सिंह का पत्र ले गये थे जिसमे गुरु गोविन्द सिंह की भविष्यवाणियो के आधार पर बताया गया था कि भारत को रूसियो के आने पर अंग्रेजी जूए से मुक्ति मिलेगी। गुरु चरण सिंह के सबध मे लिखते हुए ज़रफशान प्रान्त के गवनर न० अ० इवानाव ने इस बात पर बल दिया कि "यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि ब्रिटिश इडिया की आबादी के एक भाग ने वैदेशिक जूए से मुक्ति दिलाने के लिए हमसे सहायता मागी है"। उन्होंने यह भी नोट किया कि "गुरु चरण सिंह से बाते करने से हमे रूस की शक्ति मे ऐसे विश्वास का, ब्रिटेन के घृणित शासन से भारतीय जनता को मुक्ति दिलाने की हमारी नियति मे ऐसी आस्था का पता चलता है कि ब्रिटिश इडिया की आबादी पर हमारे महान नैतिक प्रभाव म सदेह करना असम्भव हो जाता है"।* लेकिन ज़ारशाही सरकार ने हिन्दुस्तानी देशभक्तियो की प्राथना को फिर सुना अनसुना कर दिया। तुर्किस्तान के ज़ारशाही गवनर-जनरल काउफमन ने किसी प्रकार वचनबद्ध हुए बिना दोस्ताना उत्तर दे दिया।

ग्वालियर और जयपुर के महाराजाओ ने भी १८७९ और १८८० मे तुर्किस्तान मे रूसी अधिकारियो के पास दूत मडल भेजे थे। ग्वालियर के शासक के ब्राह्मण दूत हीरालाल से ज़रफशान के गवनर न० अ० इवानोव ने समरकन्द मे भेंट की। इवानोव न शाहज़ादे इब्राहीम शाह से भी भेंट की, जो जयपुर के महाराजा का पत्र लाये थे। सोवियत

---

*उज़्बेक सो० स० जनतत्र का राजकीय अभिलेखागार, फाइल १। मिशा के बारे म पढिये पी० सी० राय द्वारा लेख, 'प्रास्नेमी वोस्तोकोवेदेनिया', १९५९, अक ४ पृष्ठ ७७-८१। (रूसी सस्करण)

इतिहासकार इ० अ० रुस्तामोव ने १८६१ मे हुजा के शासक के दूत मडल की यात्रा का उल्लेख किया है। १६०३ मे बम्बई म रूसी कौनसल व० ओ० क्लेम ने रूसी विदेश मन्त्रालय को सूचना दी कि उनके पास गुमनाम चिट्ठिया आ रही है जिनमे अग्रेजो के प्रति घणा तथा यह आशा व्यक्त की जाती है कि रूस शीघ्र ही भारत की धरती पर प्रकट होगा।

अग्रेजो को इन सम्पर्का का पता चल गया था। इसलिए उन्होंने रूसी अधिकारियो से मिलने मध्य एशिया जानेवाले भारतीय प्रतिनिधियो का पीछा करने का पक्का प्रबध किया। इस काम मे उन्ह गुलाब खान नामक एक हिन्दुस्तानी से सहायता मिली। उसने भारत तक गुरु चरण सिह का पीछा किया और उन्ह गिरफ्तार करा दिया। गुलाब खान अपनी पत्नी सहित कत्ता कुर्गान मे बस गया था, जहा उसने दवा की दुकान खोल ली थी। उसे ब्रिटिश इडियन सेना के एक भगाडे सैयन खान से, जो जरफशान के रूसी गवनर का सहायक बन गया था, और दो यहूदियो रिउबेन तथा इसहाक से, जो क्रमश पुलिस अधिकारी और जरफशान के गवनर का दुभाषिया थे, सूचना मिली थी। गुलाब खान ने अपने एजटो ताजिक मुल्ला इनाम और गुलाम मुहिउद्दीन के जरिये भारत मे अग्रेज अधिकारियो को सवाद भेजा। ये दोनो कत्ता-कुर्गान के रहनेवाले थे। गुलाब खान की भेजी हुई सूचना भारत के राष्ट्रीय पुरालेख सग्रहालय म मौजूद है और उससे कश्मीर के महाराजा तथा नामधारी सिखो के भावी सम्पर्कों पर दिलचस्प प्रकाश पडता है। इन सम्पर्कों के बारे मे उल्लिखित रूसी स्रोतो से कुछ पता नही चलता। राष्ट्रीय पुरालेख-सग्रहालय म गुलाब खान के जो पत्र है, उनसे हमे ज्ञात होता है कि जम्मू और कश्मीर राज्य के गुप्तचर विभाग के प्रधान अफ्फर सिह ने १८७० म कम प्रकाश के दूत मडल के तुरत बाद एक और व्यक्ति गगा रास डोगरा को महाराजा का सन्देश देकर भेजा। गुलाब खान की सूचना के अनुसार गगा राम समरकन्द मे चार साल तक रहा और रूसी स्कूल मे पढकर अच्छी रूसी सीख ली। जम्मू लौटने के बाद उसे तहसीलदार बना दिया गया। गुलाब खान ने एक और कश्मीरी अधिकारी शेर सिह का भी उल्लेख किया है जिसे कश्मीर के शासक ने १८७२ मे तुर्किस्तान भेजा था।

ब्रिटिश एजेंट की सूचना के अनुसार वह ताशकन्द में जनरल काउफमन से मिला। गुलाब खान ने लिखा है कि रूसियों ने १८८० में युसूफजई के एक व्यक्ति अब्दुल को कश्मीर भेजा, जो एक और कश्मीरी प्रणिधि जीवन मान डोगरा को साथ लेकर ताशकन्द लौटा। अन्य नामधारी प्रणिधियों में गुलाब खान ने पटियाला के एक ब्राह्मण जस राम और इलाही बख्शमीरासी का उल्लेख किया है, जिन्होंने समरकन्द के रूसी गवर्नर के समक्ष अपने आप को पेश किया। कहा जाता है कि उसने उन्हें अपने सहायक सैयद खान के पास भेज दिया, जिसने उनके कागज फाडकर उन्हें निकाल दिया। गुलाब खान ने गुरु चरण सिंह के बारे में भी लिखा है (जो उस समय कैद थे) कि उन्होंने शिकारपुर के निवासी शम्भू के जरिये बुखारा से रूसी गवनर के नाम एक पत्र जनवरी १८८२ में डाक में डलवाया। इस पत्र के मिलने पर गवनर अब्रामोव ने जस राम को ढूढने का आदेश दिया। वह बुखारा में मिला और वहां से लाया गया। गुलाब खान की सूचना के अनुसार जनवरी १८८२ में जस राम को गुलाम रसूल के साथ, जिसे वह रूसी एजेंट कहता है, भेंट-उपहार देकर जम्मू में भेजा गया। उनको जो पत्र दिया गया था, वह एक कश्मीरी युवक मन्सूख की सहायता से डोगरी में लिखवाया गया था। मन्सूख कत्ता-कुर्गान में रहता और रूसी पढ रहा था।

रूसी अधिकारियों के पास इन दूत-मंडलों के भेजने से भारत के राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन को कोई लाभ नहीं हुआ। परन्तु इनसे इतना अवश्य प्रकट हुआ कि भारतीय जनगण को अंग्रेजों के विरुद्ध अपने संघर्ष में रूसी सहायता की बडी आशा थी। १८७६ में बम्बई में रूसी युद्ध-पोता के आने के समाचार पाकर लोग शहर की ओर यह देखने को दौड पडे कि वे सचमुच वहां आये हैं। रूसी सहायता के संबंध में भारतीय देशभक्तों की आशाओं का एक उल्लेखनीय परिचय इस बात से मिलता है कि तिलक ने बम्बई स्थित रूसी कौनसल चेकिन तथा क्लेम से वार्तालाप किया था। उनसे उन्होंने रूसी फर्मों से परिचय कराने का अनुरोध किया ताकि भारत में फैक्टरियों की स्थापना के लिए मशीनरी खरीदी जाय, और सैनिक प्रशिक्षण के लिए भारतीय नवयुवकों को रूस भेजने में सहायता

मागी। जारशाही रुसी सरकार हिन्दुस्तानी जनगण को सहायता देने की कोई इच्छा नही रखती थी। इस तथ्य से *"भारत को रुसी खतरे" के मिथ्या* प्रचार का भाडा फट जाता है। इससे स्पष्ट है कि यह खतरा अग्रेजो की मनगढत था, जिससे वे मध्य एशिया म अपने निर्दिष्ट आक्रमण पर परदा डालना चाहते थे।

१६१७ की महान अक्तूबर समाजवादी क्राति द्वारा मध्य एशिया के आजाद होने के बाद यह इलाका भारतीय स्वाधीनता के अनेक सेनानियो के लिए आकषण का केन्द्र बन गया, जिन्होने ताशकन्द को अपनी क्रातिकारी सरगमियो का एक मरकज बनाया। पश्चिम मे लन्दन, पेरिस, बलिन स्टाकहोम, न्यूयाक, सान फ्रासिस्को और कैलीफानिया मे तथा पूव मे टोकियो मे भारतीय क्रातिकारियो के कायकलाप से लोग भली भाति परिचित है, परन्तु महान अक्तूबर क्राति के तुरत बाद के दौर म सोवियत एशिया मे उनकी सरगमियो का ज्ञान कम लोगो को है।

प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान अनेक राष्ट्रीय क्रातिकारी ब्रिटेन की विरोधी वैदेशिक शक्तियो से सहायता मागने के लिए भारत से विदेश चले गये थे। चूकि जारशाही रूस ब्रिटेन का मित्र था, इसलिए उससे सहायता मिलन का कोई सवाल ही नही था। *१६१५ मे बलिन स्थित भारतीय क्रातिकारी* समिति ने हेटिग मिशन मे राजा महेन्द्र प्रताप और बरकतुल्लाह को शामिल कराया। यह मिशन ब्रिटेन के विरुद्ध अमीर को अपने साथ मिलाने के लिए साम्राज्यवादी जमनी द्वारा अफगानिस्तान भेजा जा रहा था। काबुल मे राजा महेन्द्र प्रताप ने "भारत की अस्थायी सरकार" की स्थापना की, जिसके वे स्वय अध्यक्ष बन, और बरकतुल्लाह का प्रधान मत्री तथा उबैदुल्लाह सिधी को गृह मत्री बनाया। अपने जमन सलाहकार हटिग की सलाह के बावजूद राजा महेन्द्र प्रताप ने जारशाही रूस से भी सहायता मागने का प्रयत्न किया। उन्हे इस क्षेत्र मे आग्ल रूसी प्रतिद्वद्विता के कारण कुछ आशा थी। मगर शीघ्र ही उन्हे निराश होना पडा। ताशकन्द म जारशाही रूस के अधिकारियो ने जार के नाम उनके 'स्वण थाल पत्र" का कोई उत्तर नही दिया और दूसरी बार उन्होने जिन दो दूतो को

ताशकन्द भेजा, उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और ईरान में अंग्रेजों के हवाले कर दिया गया। अंग्रेजों ने उन्हें गोली मार दी।

परन्तु जारशाही रूस ने भारतीय क्रांतिकारियों द्वारा सम्पर्क स्थापित करने के सभी प्रयासों को अगर अस्वीकार कर दिया, तो सोवियत सरकार ने उन लोगों का स्वागत किया, जो भारत की स्वाधीनता के लिए काम करना चाहते थे। उसने खुल्लमखुल्ला पूर्व की सभी दलित जातियों के लक्ष्य का समर्थन किया। भारतीय संवैधानिक सुधारों के संबंध में माटेंगु–चेल्म्सफोर्ड रिपोर्ट (१९१८) ने स्पष्टतः स्वीकार किया कि रूस की क्रांति से "भारतीय राजनीतिक आकांक्षाओं को प्रेरणा मिली है"। मध्य एशिया के विभिन्न नगरों में कई हजार हिन्दुस्तानी बसे हुए थे, जो भारत के एक निकटवर्ती इलाके से ब्रिटिश विरोधी कार्यकलाप के लिए अच्छे आधार का काम दे रहे थे। दूसरे, सुनसान पहाड़ी दर्रों से होकर इस इलाके में भाग आना समुद्र के रास्ते यूरोप जाने की तुलना में अधिक सुरक्षित था। इसलिए अक्तूबर समाजवादी क्रांति के पीछे-पीछे सोवियत एशिया में भारतीय देशभक्तों की स्थायी धारा-सी बहने लगी।

१९१८ से १९२० तक हिन्दुस्तानियों के कई दल भारत की स्वाधीनता के लिए सोवियत सहायता की आशा में मध्य एशिया पहुंचे। फ़रवरी १९१८ में महेन्द्र प्रताप तुर्किस्तान सोवियत अधिकारियों के निमंत्रण पर ताशकन्द आये और वहां से पेत्रोग्राद के लिए रवाना हुए, जहां उच्च सरकारी नेताओं ने उनसे भेंट की। पेत्रोग्राद से महेन्द्र प्रताप बर्लिन गये। उनके बाद "भारत की अस्थायी सरकार" के कई प्रतिनिधि काबुल से सोवियत संघ आये। ताशकन्द और बुखारा के मध्य एशियाई नगरों के अलावा वे मास्को और कज़ान में भी रहते और काम करते थे और अफ़गानिस्तान से सम्पर्क स्थापित करने में उन्होंने नवजात सोवियत राज्य की विशेष सहायता की।

अमानुल्लाह खान के अमीर बनने के बाद मार्च १९१९ में बरकतुल्लाह ताशकन्द के रास्ते मास्को पहुंचे। नये अमीर ने उन्हें यह जिम्मेदारी सौंपी थी कि सोवियत रूस से स्थायी राजनयिक संबंध स्थापित करें। ७ मई, १९१९ को वे लेनिन से मिले। महेन्द्र प्रताप उस समय जर्मनी में

थे। ब्रिटेन और अफगानिस्तान की लडाई का समाचार पाते ही उन्होंने मास्को होते हुए अफगानिस्तान लौटने का निश्चय किया। सोवियत इतिहासकार म० अ० पेसित्स के अनुसार महेन्द्र प्रताप जुलाई १६१६ म मास्को लौटे। उनके साथ अब्दुरब और प्रतिवादी आचार्य भी थे। वहा उनसे बरकतुल्लाह मिले। महेन्द्र प्रताप के आने के शीघ्र ही बाद उनके नेतृत्व मे प्रतिनिधि मडल ने, जिसमे बकतुल्लाह, अब्दुरब प्रतिवादी आचार्य, दलीप सिंह गिल और पजाब का एक किसान इब्राहीम भी था, लेनिन से भेंट की। सोवियत वैदेशिक कमिसारियत से अपने वार्तालाप मे महेन्द्र प्रताप ने माग की कि सोवियत सरकार काबुल स्थित उनकी "भारत की अस्थायी सरकार' को भारत की क्रातिकारी शक्तियो के एकमात्र केन्द्र के रूप मे मान्यता प्रदान करे। उन्होंने भारत को आजाद कराने के लिए सोवियत अफगान सैनिक कारवाई की भी योजना पेश की।

काबुल स्थित "भारत की अस्थायी सरकार" का एक विशेष मडल, जिसमे मोहम्मद अली और शफीक अहमद थे, ३१ मार्च, १६२० को ताशकन्द पहुचा। बाद मे इब्राहीम और अब्दुल मजीद भी उनमे आ मिले। इन लोगो ने बकतुल्लाह से मिलकर "अस्थायी सरकार" का दल स्थापित किया। इस दल ने अंग्रेजो को भारत से निकालने के लिए वैदेशिक सैनिक अभियान पर जोर दिया, यद्यपि वह राष्ट्रीय सेना सगठित करने की बात भी करता था। बरकतुल्लाह ने तुर्की युद्ध-बन्दियो म तथा वोल्गा क्षेत्र और मध्य एशिया के मुसलमानो मे सोवियत सत्ता के समर्थन म प्रचार किया और अनेक पुस्तिकाए लिखी, जिनमे बाल्शेविज्म को इस्लाम का मित्र साबित किया गया था और दोनो के सामाजिक आदर्शों और सिद्धातो की समानता को पेश किया गया था। बरकतुल्लाह दल के विचारशील लोगो का विकास वामपक्षी तथा समाजवादी विचारो की दिशा म हुआ और उसके कई सदस्य अन्तर्राष्ट्रीय प्रचार की सोवियत के लिए सक्रिय रूप म काम करने लगे, जिसकी स्थापना केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के तुर्की आयोग द्वारा दिसम्बर १६१६ म ताशकन्द म हुई थी। इस सगठन का काम सोवियत तुर्किस्तान म काम करनेवाले अनेक क्रातिकारी

सगठना को पडोसी देशो मे काम करनेवाले सगठनो से एकताबद्ध करना था। "सोविन्तेरप्राप" (अतर्राष्ट्रीय प्रचार की सोवियत) के भारतीय विभाग ने कुछ हिंदुस्तानियो को ब्रिटिश इडियन सेना के सिपाहियो म काम करने काबुल और ईरान भेजा और सीमावर्ती कबीलो म काम करने पामीर भेजा। इसने अनेक पैंफलेट और पुस्तिकाए भी प्रकाशित की। इसके साप्ताहिक पत्र "जमीदार" का एक अक ताशकन्द से प्रकाशित हुआ।

सगठित भारतीय राष्ट्रीय क्रातिकारियो का एक नया और बडा दल २ जुलाई १९२० का काबुल से ताशकन्द पहुचा। इसके नेता अब्दुरब थे और इसके सदस्यो की सख्या २८ थी। उन्होने काबुल म ही भारतीय क्रातिकारी सस्था के रूप म अपने को सगठित कर लिया था। सस्था न काबुल से लेनिन के नाम एक अभिनन्दन सवाद भेजा था, जिसका उन्होंने बडा उत्साहवधक उत्तर भेजा था। ताशकन्द मे इन लोगो के सम्मान मे एक सार्वजनिक सभा की गयी, जिसम व० व० कूइबिशेव तथा म० व० फ्रूजे जैसे प्रमुख सोवियत नेता भी उपस्थित थे। भारतीय क्रातिकारी सस्था के सदस्यो मे १०-१२ ब्रिटिश सेना के भागे हुए लोग भी थे। अब्दुरब के साथ जो लोग ताशकन्द आये उनमे दो नसीर खान भाई भी थे जो स्वतन्त्र बलूच कबीलो के नेता थे जिन्होंने १९१७-१९१८ मे अग्रेजो के खिलाफ विद्रोह किया था। प्रतिवादी आचाय भी इस दल के साथ थे। भारतीय क्रातिकारी सस्था के सात सदस्य उन १४ भारतीय प्रतिनिधियो म थे, जिन्होंने सितम्बर १९२० म पूव की जातियो की बाकू काग्रेस म भाग लिया था। सस्था के सदस्यो की धारणा थी कि स्वतत्र कबायली सीमावर्ती लोगो के समथन से भारत को सोवियत रूस द्वारा स्वाधीन कराया जाय। अवश्य ही सोवियत पक्ष इस प्रकार के दुस्साहसिकतावादी सैनिक दृष्टिकोण से सहमत नही हो सकता था। फिर भारतीय क्रातिकारी सस्था तथा अतर्राष्ट्रीय प्रचार की सोवियत के भारतीय विभाग मे तीव्र अन्तर्द्वंद्व पदा हो गया और इससे भी ताशकन्द मे भारत की स्वाधीनता के क्रातिकारी काम की प्रगति मे बाधा हुई।

सितम्बर अक्तूबर १९२० मे हिन्दुस्तानी मुहाजिरीन का एक दल कठिन यात्रा के बाद ताशकन्द पहुचा। ये लोग भारतीय राष्ट्रीय स्वाधीनता

आदोलन के मुस्लिम अग के प्रतिनिधि थे, जिन्होंने खिलाफत आन्दोलन के दौरान खिलाफत की बहाली की खातिर अग्रेजो से लडने के लिए देश को त्याग किया था। अफगान सरकार ने सोवियत मध्य एशिया स होकर उनके तुर्की जाने का विरोध किया। उस विरोध को दूर करने के बाद हिंदुस्तानी मुहाजिरीन दो जत्था म तेरमीज की ओर रवाना हुए। हर जत्थे मे ८० आदमी थे। पहले जत्थे के नेता थे मोहम्मद अक्बर खान। इसमे अनेक शिक्षित नौजवान मुसलमन थे। इसको तुक्मान क्रातिविरोधिया ने पकड लिया और उनके साथ बुरा व्यवहार किया। लाल सेना ने उन्हे उनके हाथा मारे जाने से बचा लिया। बाद मे इस जत्थे के कुछ लोगो ने किरकी किले पर क्रातिविरोधियो के हमले का परास्त करने मे सोवियत सेना की सशस्त्र सहायता भी की। अत इन मुस्लिम नौजवानो के दल ने तुर्की जाने का इरादा छोड दिया और ताशकद जाने पर राजी हो गया। जो बहुतेरे तुर्की गये, बाद म ताशकद लौट आये, क्योकि कमालपाशा का तुर्की अब उन्हे लेना नही चाहता था। वे जिस खिलाफत की रक्षा करने निकले थे, उसे तुर्की ने मिटा दिया था। नवम्बर १९२० तक ताशकद मे अग्रेजी साम्राज्यवाद के खिलाफ कोई १०० हिंदुस्तानी सेनानी जमा हो गये थे। दिसम्बर १९२० तक उनकी सख्या लगभग २०० हो गयी। कोमिटन के तुर्क-ब्यूरो ने केंद्रीय कार्यकारिणी समिति को अधिकाधिक खिलाफती मुहाजिरा के आने की सूचना दी। बुखारा मे १९२० के अन तथा १९२१ के प्रारम्भ म अनेक हिंदुस्तानी मुहाजिर आये जिनमे कोई २० बगाली भी थे।

एम० एन० राय और अबनि मुखर्जी अक्तूबर १९२० म ताशकद पहुचे। वे खिलाफती मुहाजिरीन के बडी सख्या म आने की खबर सुनकर मध्य एशिया पहुचे थे। उन्होने सोचा कि यह स्वाधीनता सेना का केंद्रीय दस्ता बनाने का अच्छा अवसर है। इस सेना का सगठन अफगानिस्तान म भारत के सीमावर्ती कबायलिया का लेकर करना था, जिनम ब्रिटिश विरोधी भावना तगडी थी। ताशकद आने से पहले राय मास्को म ही अखिल भारतीय अस्थायी केंद्रीय क्रातिकारी समिति की स्थापना कर चुके थे, जिसम कोमिटन की दूसरी काग्रेस मे भाग लेनवाले हिंदुस्तानी शरीक थे। यद्यपि

राय साम्राज्यवाद विरोधी शक्तियो का सयुक्त मोरचा बनाने की लेनिनवादी लाइन को, जिसे दूसरी कांग्रेस मे स्वीकार किया गया था, मानने का दावा करते थे, परन्तु उन्होने न केवल राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग से, बल्कि राष्ट्रीय क्रांतिकारी सगठनो से भी सहयोग के प्रति अपना नकारात्मक दृष्टिकोण नही त्यागा था। उनकी क्रांतिकारी समिति का तुरत ही भारतीय क्रांतिकारी सस्था से, जिसके नेता अब्दुरब और आचाय थे, झगडा हो गया। दिसम्बर के शुरू मे अब्दुरब को, जिन्हे क्रांतिकारी समिति का सदस्य बना लिया गया था, सगठन से निकाल दिया गया। राय और अब्दुरब के मतभेद इतने तेज हो गये कि तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी के तुर्क-ब्यूरो ने ३१ दिसम्बर, १९२० का एक सयुक्त बैठक मे उसके समाधान के लिए उन्हे मास्को जाने की सलाह दी।

ताशकन्द मे अपने सक्षिप्त निवासकाल म राय को पूव म कम्युनिस्ट आन्दोलन सगठित करने की व्यावहारिक कठिनाइयो का सामना करना पडा। उस समय तक उन्हे इन समस्याओ का कोई परिचय नही था। वे समझते थे कि ब्रिटिश शासन से मुक्ति पाने के राष्ट्रीय सग्राम पर सर्वहारा का अधिनायकत्व स्थापित करना यथार्थिक काम है। परन्तु वह खिलाफती मुहाजिरीन की बडी सख्या को ताशकन्द मे राजनीतिक और विचारधारात्मक प्रशिक्षण पाने पर राजी नही कर सके। इससे उन्हे एक सबक मिला। सैनिक प्रशिक्षण के आकर्षण से भी उन्हे अपने अनुयायी बनाने म सफलता नही हुई। ताशकन्द के सैनिक स्कूल मे १९२० के अत तक केवल २५ हिन्दुस्तानी मुहाजिरीन शामिल हुए और उनकी अधिक से अधिक सख्या माच १९२१ म ३९ तक पहुची और उसके बाद घटने लगी। मई १९२१ म यह स्कूल बन्द कर दिया गया और उसम प्रशिक्षण पानेवाले भारतीयो को पूव के श्रमजीवियो के कम्युनिस्ट विश्वविद्यालय म शिक्षा पाने के लिए मास्को भेज दिया गया। बाद म भारत लौटने पर अंग्रेजो ने उनमे से कुछ को गिरफ्तार कर लिया। उनपर पेशावर साजिश मुकदमा चलाया गया और विभिन्न अवधि के लिए सजाए दी गयी। ताशकन्द म भारतीय मुक्ति सेना सगठित करने की योजना को धक्का इस बात से भी लगा कि अफगान सरकार ने इसे अपने इलाके से होकर भारत जाने

की आज्ञा देने से इनकार कर दिया। वैसे भी भारत म मुख्यतया बाहरी सैनिक अभियान के जरिये सामाजिक राजनीतिक क्राति करने की योजना अत्यत अव्यावहारिक थी। इससे निम्न पूजीवादी क्रातिवाद की व आती था। इसमे स देह नही कि गहयुद्ध म लाल सेना की शानदार विजय के कारण बहुतेरे भारतीय देशभक्तो के मन मे क्रातिकारी सघप के सैनिक उपायो की श्रेष्ठता का सिक्का जम गया था। परतु वे यह भलने लगे थे कि लाल सेना को क्रातिकारी जनता का व्यापक समथन प्राप्त था। इस जनता को बोल्शेविको ने सगठनात्मक तथा विचारधारात्मक रूप से अच्छी तरह तैयार किया था।

सिक्याग मे अग्रेजो की साजिशें

काशगर को अपने प्रभाव क्षेत्र मे लाने के लिए अग्रेजो का प्रयास १६वी सदी के प्रारम्भिक वर्षो मे ही शुरू हो गया था। ईस्ट इडिया कम्पनी के अस्तबल का अधीक्षक विलियम मरक्राफ्ट १८२१ मे लेह गया जहा उसन लदाख से होकर चीनी और उज्बेक तुक व्यापारियो के आने जाने के बारे मे एक समझौता किया। उसने चीनी अधिकारियो स काशगर जाने की आज्ञा भी मागी, जिसे अस्वीकार कर दिया गया। मरक्राफ्ट न काशगर के रास्ते रूसी हमले का हौआ उस समय खडा किया, जबकि रूस ने अभी कजाख स्तेपी पर भी कब्जा नही किया था। आगा मेहदी नामक एक रूसी एजेंट के लदाख के शासक तथा रणजीत सिंह से भेट करन आने के सबध मे जो अफवाहे फैली हुई थी, मरक्राफ्ट को उनपर विश्वास था। लदाख मे उसने रणजीत सिंह के विरुद्ध षडयत्र म भाग लिया।*

मूरक्राफ्ट के बाद अय यूरोपीय "खोज-यात्री", जसे गेराड बिरादरान, हेडरसन, फालकनर और विगने लदाख, कश्मीर और

*दे० ग० ज० ऐलडर, उपराक्त पुस्तक, पृष्ट १८।

बलूचिस्तान मे सक्रिय रहे।* अग्रेजो की सहमति से ही गुलाब सिंह ने, जो रणजीत सिंह का जागीरदार था, १८३४ में लदाख पर अधिकार कर लिया। सिखो की पराजय के बाद अग्रेजो ने गुलाब सिंह को कश्मीर, जम्मू और लदाख का महाराजा बना दिया। उसे आदेश था कि सीमा में कोई हेरफेर करने से पहले अग्रेजो की अनुमति ले और पडोसियो से सारे झगडे निबटाने के लिए अग्रेजो के पास ले जाये। १८४९ मे रहा-सहा सिख राज्य भी समाप्त हो गया और ब्रिटिश भारत की सीमाए गुलाब सिंह के इलाके से और अप्रत्यक्ष रूप से स्वय सिक्याग से आ मिली।

सिक्याग मे अब अग्रेजो की दिलचस्पी बढने लगी। जून १८६१ में सिक्याग से व्यापार के बारे मे एक छपी हुई प्रश्नावली पजाब के लेफ्टिनेंट-गवरनर द्वारा पजाब के अधिकारियो के पास भेजी गई। इस प्रश्नावली के आधार पर पजाब की सरकार के सचिव र० ह० डेवीस ने एक विस्तारित रिपोर्ट तैयार की। डेवीस इस नतीजे पर पहुचा था कि मध्य एशिया की मडियो मे भारतीय व्यापार रूसी व्यापार का सफलतापूर्वक मुकाबला कर सकता है।**

पजाब के उत्साही अधिकारियो के लिए भारत और सिक्याग के बीच कारवानी रास्ते की भौतिक कठिनाइया व्यापार में उतनी बाधक नही थी जितना हुआ क्वायलिया के हमले, राजनीतिक अव्यवस्था और चीनी अधिकारियो की उदासीनता। उन्होने कश्मीरी अधिकारियो की अवरोधक व्यापार-नीति का भी कुछ दोष ठहराया। पजाब के लेफ्टिनेंट गवरनर सर राबर्ट माटगोमरी ने हिमालय पार के व्यापार के विकास मे बडी दिलचस्पी ली। १८६४ मे कश्मीर के महाराजा को आयात और परिवहन कर में कमी करने पर राजी कर लिया गया।

---

*इन खोज-यात्राओ के सबध मे द० S A Hedin, *Southern Tibet*, Chapter VII—*History of Exploration in the Kara Koran Mountains*, Stockholm 1922 ईश्वरी प्रसाद इन "खोज-यात्रियो" को "साम्राज्यवाद के मार्ग शोधक" कहते है (*History of Modern India* 1951, p 167)।

** National Archives F D S P, Aug 1874, Nos 205 07

सिक्याग की राजनीतिक स्थिति बिल्कुल बदल गई, जब १८६६ में कोकान के याकूब बेग न सत्ता सभाली। याकूब बेग ने व्यापारिक सबध कायम करने के लिए पजाबी अधिकारियो के उत्साह का प्रतिदान किया और अपने शासन के प्रथम वष मे एक व्यापार मडल कश्मीर भेजा।* उसने किगिज्ञ और हज्ञा लुटेरो का चाय के कारवान लटने से रोकने का और लेह के व्यापार के रास्तो की रक्षा करने का वायदा किया। सिक्याग से चीनियो के निकाले जाने से भारतीयो को सुनहरा अवसर मिल गया। कागडा के चाय के नये बागानो को, जो कुलू के रास्ते पर थे, इसमे बहुत लाभ होने की आशा थी।

डा० कली न, जो लेह मे ब्रिटिश कमिश्नर थे, काशगर के रास्ते को बेहतर बनाने के बडे प्रयत्न किये और यारकन्द के व्यापारियो का भारत से व्यापार करने के लिए प्रोत्साहित किया। चाग चेमो माग की खोज करने का श्रेय उन्ही को दिया जाता है। शो और हेवड ने बाद मे यही रास्ता लिया। डा० केली ने याकूब बेग से मत्री-सधि करने के लिए एक प्रतिनिधि मडल काशगर भेजने का प्रस्ताव रखा। पजाब के लेफ्टिनेंट गवरनर ने इस प्रस्ताव का समथन किया।** लेह मे व्यापारियो के जरिये जो सूचनाए मिल रही थी, उससे डा० केली ने यह अनुमान लगाया कि अमीर अग्रेजो से दोस्ती रखना चाहता है। इसकी पुष्टि शो की रिपोट से भी हुई, जो १८६८ मे व्यक्तिगत रूप स यारकन्द गया था। याकूब बेग के राज मे मैत्रीपूण सबधो की शुरुआत उस समय हुई, जब १८६८ की गमियो के प्रारम्भ मे उसके प्रतिनिधि माहम्मद नजीर ने पजाब के लेफ्टिनेंट गवरनर से भेंट की। शा ने इस प्रतिनिधि से अपनी काशगर जाने की इच्छा प्रकट की और प्रतिनिधि ने इस विचार का स्वागत किया। दिसम्बर १८६८ म शो काशगर रवाना हुआ जहा उसका मैत्रीपूण स्वागत किया गया। उसके बाद लेफ्टिनेंट हेवड को भी देश मे आने की आज्ञा दी गई। शा ने अमीर से 'तुर्की के सुलतान मुसलमानो के खलीफा के प्रति

---

* *Letters from India and Madras* vol I, p 845

** National Archives F D S P Aug 1871 Nos 205 07

इगलड की दोस्ती" की चर्चा की।* उसने यारकद के रास्तो के सबध म "स्मृति पत्र" लिखा, जिसम उसने मध्य एशिया के इलाको तक अबाध व्यापारिक रास्तो के लिए कश्मीर से बातचीत का सुझाव दिया। उसने कराकुरम के बदले चाग-चेमो के रास्ते को ज्यादा पसन्द किया, क्योकि इसमे दर्रे और नदिया कम पार करनी होती थी और घास, इधन, सामान आदि आसानी से मिल जाता था। लदाख के लिए वह कागडा, कश्मीर के रास्ते के मुकाबले मे कुल लाहुल रास्ते को ज्यादा पसन्द करता था।** अगले दस वर्ष तक दोनो व्यापारिक रास्तो पर वाद-विवाद जारी रहा। १८७४ मे लेह के ब्रिटिश जॉइंट कमिश्नर कप्तान इ० मोलोय ने कुलू रास्ते के मुकाबले मे कश्मीर रास्ते का ज्यादा पसन्द किया, 'क्योकि वह ३५ मील कम था और कम से कम साल के नौ महीने चालू रह सकता था, जबकि कुलू का रास्ता छह महीने बन्द रहता था।" मोलोय ने घोडो के बजाय ऊटो के इस्तेमाल की सिफारिश की, क्योकि रूसी भी यही कर रहे हैं और यातायात के खर्च मे कमी कर रहे हैं। उसने यह भी शिकायत की कि अग्रेजी सामान तुर्कों को पसन्द का नही होता, जबकि रूसी सामान "अपनी चमक-दमक और भडकीले रगो और बहुत मजबूत होने की वजह से" पसन्द किये जाते हैं।*** मोलोय काशगर के लिए कुगियार के रास्ते को तरजीह देता था, जबकि जलधर डिवीजन के कमिश्नर फोरसाइथ की राय म चाग चेमो का रास्ता ज्यादा अच्छा था। शो ने भारत और सिक्याग के बीच व्यापार की बडी रगीन तसवीर खीची है। इसको प्रोत्साहित करने के लिए यारकन्द ट्रेडिग कम्पनी की स्थापना की गई।

---

* National Archives Pol A, July 1870, Nos 73 76 D C Boulger, *The Life of Yakoob Beg* London, 1878, pp 214—215

** National Archives Memorandum by Shaw Foreign Department, Sec, July 1876 No 30

*** National Archives, Pol A May 1874, Nos 37 39, E Molloy to the Secretary, Punjab Government

सिक्याग से व्यापार के लिए उत्साह की यह लहर अनेक "पयवेक्षणो" का नतीजा थी, जिसका प्रारम्भ १८५५ मे हुआ था। छह वर्षों के दौरान भारत के महान त्रिकोणमितीय सर्वेक्षण के सर्वेक्षको ने अपना काम लदाख और कश्मीर तक फैला दिया था। १८६८ तक इस इलाके के नये नक्शे तैयार कर लिए गये। काशगर मे लारेस द्वारा अपनाया गई "अहस्तक्षेप" की सावधानीपूर्ण नीति के बारे में बहुत बात का बतगड बनाया गया है। इस सबध मे यह उल्लेखनीय है कि कराकुरम के उत्तर की भूमि के बारे मे अग्रेजो का ज्ञान उस समय तक अस्पष्ट था। एकमात्र यूरोपीय जिसके बारे मे मालूम था कि उसने कराकुरम को पार किया है, अलेक्साद्र गाडनर था। उसने इस पहाड के रास्ते लदाख मे प्रवेश किया था। तीन श्लागिटवैट बिरादर ने १८५४ और १८५८ के बीच कम्पनी की ओर से इस इलाके की छानबीन की। यारकन्द मे अडोल्फ श्लागिन्टवैट की हत्या से इस क्षेत्र मे प्रवेश करने का यूरोपीय उत्साह कुछ ठडा पड़ गया। मगर काम बिल्कुल बद नही हुआ और देशी एजेंटो के हवाले कर दिया गया। देशी एजेंटो का प्रयोग कोई नया नही था। मरक्राफ्ट ने अपने कर्मचारी मीर इज्जतुल्लाह को १८१२ मे काशगर भेजा था।* १८५२ मे अहमद शाह नक्शबन्दी और १८५८ मे मोहम्मद अमीन को वहा भेजा गया था। जब कप्तान माटगोमरी कश्मीर का सर्वेक्षण कर रहा था, तो उसने इस इलाके के बारे मे सूचना प्राप्त करने के लिए देशी कर्मचारियो को प्रशिक्षित किया था। ऐलडर लिखता है

'१८६३ से असाधारण व्यक्तियो का ताता लगा हुआ था, जो मिथ्या या सक्षिप्त नाम रखकर, भेस बदलकर और खोखले प्राथना चक्र या दशम की जपमाला लेकर ताकि चरणो की गिनती आसानी से की जा सके, पूरे उत्तर पश्चिम सीमा-क्षेत्र मे फैल गये थे।"**

---

* *Calcutta Quarterly Oriental Magazine and Register*, III and IV (1825)

** ग० ज० ऐलडर उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ ३१। देशी "सर्वेक्षको" के बारे मे द० K Mason *Abode of Snow* London 1955

एक आदमी से सरकार"। और अंत मे उसने लिखा "और यह बहुत जरूरी कील कुएन लुएन पर्वतमाला के उस पार आसानी से मिल सकती है।"*

फोरसाइथ, शो और हेवड ने काशगर से रूसी आक्रमण का हौआ खडा किया। फोरसाइथ को जब यह अंदाजा हुआ कि पहाडी रेगिस्तानी भूमि पर कुछ सौ घोडसवारो को भी रखना कितना कठिन है, तो उसने अपना विचार बदल दिया। मगर शो और हेवड यह झूठा डर फलाते रहे।

लार्ड मेयो काशगर को ब्रिटेन के उचित प्रभाव क्षेत्र का भाग मानता था। वह ब्रिटन के राजनीतिक प्रभुत्व मे एक "दरमियानी" राज्य का निर्माण करके अपना उद्देश्य पूरा करना चाहता था। उसने व्यापार के विकास को अपने राजनीतिक उद्देश्यो की पूर्ति के लिए इस्तेमाल किया। मेयो ने कश्मीर के प्रति दृढ रुख अपनाया। एक विशेष प्रतिनिधि कप्तान ग्रे को महाराजा से समझौते की बातचीत करने वहा भेजा गया। फोरसाइथ ने बाद मे (१८७० मे) ग्रे की खीची हुई सीमा रेखाओ के अनुसार एक संधि संपन्न की। संधि मे तमाम रास्ता का सर्वेक्षण करने की बात थी जिसके बाद उनमे से एक को सभी यात्रियो और व्यापारियो के लिए 'हमेशा के लिए खुला मार्ग' घोषित कर दिया जायेगा। इस मार्ग की देखभाल करने और झगडे चुकाने के लिए दो जॉइंट कमिश्नर होगे, हर पक्ष से एक। महाराजा ने यह मान लिया कि कश्मीर होकर जानेवाले सामान पर वह कोई परिवहन कर नही लगायेगा। डा० केली को लेह मे पहला ब्रिटिश जाइंट कमिश्नर नियुक्त किया गया।

शो की प्रथम गैरसरकारी काशगर यात्रा के फलस्वरूप याकूब बेग ने १८६९ १८७० के जाडो मे अपने प्रतिनिधि मिर्जा शादी को भारत भेजा। फोरसाइथ और दल इसी प्रतिनिधि के साथ काशगर गया।** मेयो ने इस दल मे किसी सैनिक को शामिल नही किया और इस बात से इनकार

---

* National Archives Foreign Department, Nov 1868 Pol A, Nos 1-3

** National Archives Sec July 1876 No 30

किया कि इसका कोई राजनीतिक उद्देश्य है। परन्तु फोरसाइथ को पड़ोसी देश की राजनीतिक और आर्थिक स्थितियों के बारे में जानकारी प्राप्त करने का आदेश दिया गया। उसे यह भी कहा गया कि अमीर को अपनी उत्तरी सीमाओं पर आक्रामक कारवाइया करने से मना करे। ब्रिटिश जानते थे कि ऐसा किया गया, तो रूसी काशगर की इंट से इंट बजा देंगे और इसी के साथ उसपर एक दिन अपना प्रभुत्व कायम करने का अंग्रेजो का स्वप्न भी चूर चूर हो जायेगा। फोरसाइथ की पहली यात्रा असफल रही और उसे अतालीक याने याकूब बेग से मिले बिना ही लौट आना पड़ा। दो सौ जानवर, जो उसके दल के साथ थे, रास्ते में मर गये।*

१८७० की फ़ारसाइथ की यात्रा ने रूसियों को चौकन्ना कर दिया और उन्होंने मुज़आत दर्रे पर दखल कर लिया। यह देखकर कि याकूब बेग ईली घाटी पर अधिकार करना चाहता है, रूसियों ने १८७१ मे उसपर क़ब्ज़ा कर लिया, ताकि वह अंग्रेजो का अधीन राज्य न बनने पाये।

१८७१-१८७२ के जाड़ो मे काशगर का एक और प्रतिनिधि अहरार खान नियुरा भारत आया। वह केवल वाइसराय ही नही, महारानी विक्टोरिया के नाम भी पत्र लाया था। १८७२ में रूसी राजनयज्ञ काउलबास काशगर पहुचा और उसने बहुत ही लाभदायक व्यापारिक संधि कर ली। १८७३ में सैयद याकूब खान कुस्तुनतुनिया जाते हुए भारत आया। इस बीच लार्ड मेयो की हत्या हो चुकी थी और उसके स्थान पर लार्ड नार्थब्रुक आ गया था। उसने इसका प्रबंध किया कि सैयद याकूब खान के तुर्की से लौटने पर एक ब्रिटिश मंडल उसके साथ जायेगा। कुस्तुनतुनिया में काशगर के प्रतिनिधि ने काशगरिया के नये राजतंत्र को खलीफा के अधिराजत्व मे दे दिया। अंग्रेजो ने सर्व इस्लामवाद और सर्व तुर्कवाद का प्रयोग अपने रूसी प्रतिद्वंद्वियों के विरुद्ध बड़ी चतुराई से किया। उन्होंने अमीर याकूब बेग को तुर्की के सुलतान से गहरा संबंध स्थापित करने पर प्रोत्साहित किया। बाद मे लार्ड लिटन के समय, जब निकट पूर्व मे ब्रिटेन और रूस मे टक्कर होने की सम्भावना थी, ब्रिटिश कूटनीति

* National Archives Foreign Department, July 1875, No 30

ने मध्य एशिया मे रूस के विरुद्ध इस "मुस्लिम सघ" का प्रयोग करने की तत्परता दिखाई। परन्तु १८७५ मे जब काशगर के प्रतिनिधि न फारसाय्थ और ब्रिटिश विदेश मत्री से भेट के दौरान अफगानिस्तान से मत्रीपूर्ण सबध स्थापित का सवाल उठाया, तो उसे चेताया गया कि ऐसा करना ठीक नही क्योकि इससे रूस नाराज हो जायेगा।* परन्तु दरअसल अग्रेज़ो को इसलाम के अतर्राष्ट्रीय मोरचे के नतीजा का डर था, क्योकि उनके अपने साम्राज्य मे मुसलमान प्रजा की बडी सख्या थी।

फोरसाइथ के नेतृत्व मे एक मडल १८७३ मे काशगर भेजा गया और उसे १८७२ की रूसी सधि के समरूप व्यापार सधि करने का आदेश दिया गया। सदा की तरह इस दूसरे फोरसाइथ मडल का प्रत्यक्ष उद्देश व्यापार था, मगर असल मे वह इससे व्यापक था। याकूब बेग के रा को ब्रिटिश नीति की परिधि मे ले आना था और उसे रूस और चान के विरुद्ध ब्रिटिश आक्रमण का अड्डा बनाना था। अग्रेजो को कोकान की अव्यवस्था का ज्ञान था और वे इस बात से कि याकूब बेग कोकान का रहनवाला था, फायदा उठाना और उसको कठपुतली बनाकर उस इलाके म अपना नियत्रण स्थापित करना चाहते थे। मडल मे जिस तरह के लोग रखे गये, उनका उसके घोषित उद्देश्य—व्यापारिक सबधो को प्रोत्साहित करने स कोई लगाव नही था। इसमे गुप्तचर अधिकारी और स्थलरूपरेखीय विभाग के छिपे एजेट थे। इस मडल के सदस्या म सेना के कप्तान बिडडुल्फ, कप्तान चैपमैन, कप्तान ट्राटर और लेफ्टिनेट कनल गाडन थे। एक वैज्ञानिक डा० स्टोलिच्का और एक चिकित्सक डा० बेलो और इनके अलावा अनेक देशी अधिकारी और चाकर थे। सब मिलाकर ३०० व्यक्ति और ४०० जानवर थे। यह छोटी-सी सेना लगती थी। ब्रिटिश मडल के सदस्या का काशगर के अमीर ने सम्मानपूर्वक स्वागत किया और तीन महीने से अधिक उनका आतिथि सत्कार किया। २ फरवरी, १८७४ को अमीर के साथ एक सधि सम्पन्न की गई, जो अग्रेजो के लिए उतनी ही लाभदायक थी जितनी १८७२ की सधि रूस के लिए थी। इसके अनुसार

* National Archives Sec May 1875, No 119

ब्रिटिश प्रजा को अपरदेशीय अधिकार मिल गये और अंग्रेज़ो को अमीर के दरबार मे एक स्थायी प्रतिनिधि नियुक्त करने का अधिकार मिल गया। इस मडल ने सिक्यांग तथा पडोसी देशो की स्थिति, साधन, इतिहास, भूगोल और व्यापार के सबध मे बहुत बहुमूल्य जानकारी इकट्ठा की। लेफ्टिनेंट-कर्नल गार्डन ने तियानशान पठार की यात्रा की, कप्तान टाटर और डा० स्टालिच्का ने तक्ले रेवात दर्रे के रास्ते का और रूसी इलाके मे गदुर-कल झील का सर्वेक्षण किया। काउफमन ने रूसी युद्ध मत्री मित्यूतिन को फोरसाइथ मडल के वास्तविक उद्देश्यो के बारे मे लिखा। ऐसे प्रमाण है, जिनसे पता चलता है कि १८७३ मे कोकान पर रूसी कब्जे का कारण काशगर आधारित ब्रिटिश षडयत्र का भय था। कोकान पर रूसियो का कब्जा हो जाने से सैनिक दृष्टि से काशगर रूस का आश्रित हो गया।

फोरसाइथ का दल जो सूचना लाया, उससे सिक्यांग का व्यापारिक महत्त्व सन्देहजनक हो गया। मडल ने पामीर के पार और सुगम दर्रों के रास्ते हुजा, यासिन और चित्राल तक रूस के बढ आने के खतरे की ओर सकेत किया। पामीर के बारे मे गार्डन की रिपोर्ट ने काशगर को एक नई सामरिक रोशनी मे पेश किया कि वह "और अधिक पश्चिमी बढाव के बाज मे समृद्ध सप्लाई-केन्द्र है"।

फोरसाइथ को भारत से "काशगर राज की राजनीतिक सीमाए निश्चित करने" का आदेश दिया गया था, मगर उसने पाया कि "यह कोई आसान काम नही है", क्योकि स्वय अमीर को भी इन सीमाओ का पता नही था। फोरसाइथ ने अपनी रिपोर्ट मे उनका निर्धारण इस तरह किया

"दक्षिण-पूर्वी कोने से शुरू होने पर इसमे कोई सन्देह ही नही है कि कुएन लुएन पर्वतमाला यारकन्द का इलाका है और हमेशा रहा है, और चूकि निचली कराकाश घाटी मे नेफ्राइट की खान म चीनी गत १५० वर्षों से काम करते आये ह, इसलिए मान लिया जा सकता है कि घाटी ही सीमा है जहा तक मैं स्वय यारकन्दियो से पता लगा सका, कराकाश नदी के दक्षिण मे किसी इलाके पर दावा नही किया जाता, और यारकन्द

नदी पर वे कूफीलोग से आगे नही जाते। परन्तु सुविधा के लिए मैं सामा को आक-ताग पर निर्धारित करूगा। और अपना सामान ले जाने म मन व्यवहार मे उसी को अपना अतिम बिन्दु बनाया। तो रेखा कुएन लएन के पूर्वी कोने (भोगाश ८१) से नीचे, कराकाश नदी तक (भोगाश लगभग ७८ ५, अक्षाश ३५ ५६) जायेगी, वहा से यारकन्द नदी क रास्ते कुजूत तक। कुजूत यारकन्द के इलाके से बाहर है।"*

१८७६ मे लाड नाथब्रुक की जगह लाड लिटन को वाइसराय नियक्त किया गया। नाथब्रुक के शासन काल मे "काशगर मे ब्रिटिश प्रभाव उच्चतम शिखर" पर पहुच गया था, जिसका प्रमाण १८७४ की सधि है। परन्तु लिटन इससे सतुष्ट नही था। सितम्बर १८७६ म उसने अपनी नई काशगर नीति रेखाकित की। जब मैयद याकूब खान दूसरी बार भारत आया, तो लिटन कश्मीर के महाराजा रणवीर सिंघ से मधोपुर मे एक समझौते के बारे मे बातचीत कर रहा था, जिसके अनुसार उसे अपने इलाके को यासिन तक विस्तारित करना और गिलगित मे एक ब्रिटिश एजेंट की नियुक्ति का अनुमति देनी थी। लिटन ने उन तीन दर्रों तक, जिन्ह फोरसाइथ मडल के सदस्यो ने "सुगम" बताया था, ब्रिटिश नियत्रण विस्तारित करने की अपनी योजना जारी रखी, यद्यपि कप्तान बिड्डुल्फ ने इन दर्रों के सुगम होन के बारे मे अपनी पहली राय बदल दी थी। जब लिटन को यह सूचना मिली कि ग्लेशियर के कारण उनमे से एक तथाकथित सुगम दर्रा बन्द हो गया है, तो उसने स्वीकार किया कि उसे "निराशा" हुई। ऐलडर ने कहा "आश्चयजनक प्रतिक्रिया है, अगर उन दर्रों तक कश्मीर के और इसलिए ब्रिटिश प्रभाव के भी विस्तार का उद्देश्य केवल प्रतिरक्षात्मक था"** १८७७ के प्रारम्भ मे लिटन ने निजी रूप से सुझाव दिया कि रूस से कहा जाये कि "वह बलूचिस्तान और

---

* National Archives Confidential Report Yarkand Mission Aug 1875 Sec, No 68

** ग० ज० ऐलडर, उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ ६१।

काशगर और अफगानिस्तान मे भी हस्तक्षेप या रूस से प्रतियोगिता नही करे"।

ब्रिटिश प्रतिनिधि भेजने के फैसले को औपचारिक अनुमति अप्रैल १८७७ तक नही मिली। इस काम के लिए स्वाभाविक रूप से शो चुना गया जा जुलाई मे भारत जाने की तैयारी कर रहा था। इस निश्चय को अनुमति देने मे हिचकिचाहट का कारण किसी हद तक यह था कि शो १८७४ की सधि का अनुसमथन प्राप्त करने म असफल रहा था। याकूब ेग १८७४ की सधि की धारा ६ को, जिसका सबध स्थायी प्रतिनिधि से ा उस समय तक अमली रूप नही देना चाहता था जब तक तुर्की के सुलतान की अनुमति न मिल जाये। वह रूस को नाराज़ करना नही चाहता था और डरता था कि वह भी अपने लिए एसी माग करेगा। जब जुलाई १८७५ म शो को वापस लौटने का आदेश मिला, तो वह अपने साथ एक पत्र लाया जिसपर अमीर की मोहर थी। मगर शो जिस कागज़ को अनु समथन की दस्तावेज समझ रहा था, वह वाइसराय के नाम केवल धयवाद का पत्र निकला।

अग्रेजो को विश्वास था कि काशगर म याकूब बेग का शासन स्थायी रहेगा। उहे विश्वास था कि चीनियो की यह स्थिति नही कि सिक्याग पर पुन अधिकार कर सक। केवल १८७६ मे ही पेकिंग स्थित ब्रिटिश मत्री को विश्वास हुआ कि चीनी वास्तव मे सिक्यिाग को अपने अधिकार मे लाने की बात गम्भीरतापूवक सोच रहे हैं। सेट पीटसबग म ब्रिटिश राजदूत लाड आगस्टस लाफटस की राय थी कि अग्रेज और रूसी मिलकर मध्यस्थता का प्रयास करे। परन्तु पेकिंग म टामस वेड ने इसका विरोध किया। उसने अकेले यह पहलकदमी की। अग्रज मचू सम्राटो को ऋण देने के बावजूद याकूब बेग की सत्ता को बचाये रखना चाहते थे, जा उनके प्रति अत्यत मैत्रीपूण था। इसलिए उन्होंने उस और मच सरकार म मध्यस्थता कराने का प्रयास किया।

१८७६ म फोरसाइथ पेकिंग गया और काशगर और चीन म मध्यस्थता कराने म भाग लिया। टामस वेड पहले ही से पेकिंग म चीनियो के साथ यह सवाल उठा रहा था। उसके प्रयत्न से ली-हुग चाग और फोरसाइथ

नदी पर वे कफीलोग से आगे नही जाते। परन्तु सुविधा के लिए मैं सीमा को आक-ताग पर निर्धारित करूगा। और अपना सामान ले जाने म मन व्यवहार मे उसी को अपना अतिम बिन्दु बनाया। तो रेखा कुएन-लुएन के पूर्वी कोने (भोगाश ८१) से नीचे, कराकाश नदी तक (भोगाश लगभग ७८ ५, अक्षाश ३५ ५६) जायेगी, वहा से यारक द नदी के रास्त कुजूत तक। कुजत यारक द के इलाके से बाहर है।"*

१८७६ मे लार्ड नाथब्रुक की जगह लार्ड लिटन को वाइसराय नियुक्त किया गया। नाथब्रुक के शासन काल मे "काशग़र मे ब्रिटिश प्रभाव उच्चतम शिखर" पर पहुच गया था, जिसका प्रमाण १८७४ की सधि है। परन्तु लिटन इससे सतुष्ट नही था। सितम्बर १८७६ मे उसने अपनी नई काशगर नीति रेखांकित की। जब सैयद याकूब खान दूसरी बार भारत आया, तो लिटन कश्मीर के महाराजा रणवीर सिघ से मधोपुर मे एक समझौते के बारे मे बातचीत कर रहा था, जिसके अनुसार उसे अपने इलाके को यासिन तक विस्तारित करना और गिलगित मे एक ब्रिटिश एजेंट की नियुक्ति की अनुमति देनी थी। लिटन ने उन तीन दर्रो तक, जि ह फोरसाइथ मन्डल के सदस्यो ने "सुगम" बताया था, ब्रिटिश नियत्रण विस्तारित करने की अपनी योजना जारी रखी, यद्यपि कप्तान विड्डुल्फ ने इन दर्रो के सुगम होने के बारे मे अपनी पहली राय बदल दी थी। जब लिटन को यह सूचना मिली कि ग्लेशियर के कारण उनमे से एक तथाकथित सुगम दर्रा बन्द हो गया है, तो उसने स्वीकार किया कि उसे "निराशा" हुई। ऐलडर ने कहा "आश्चयजनक प्रतिक्रिया है, अगर उन दर्रों तक कश्मीर के और इसलिए ब्रिटिश प्रभाव के भी विस्तार का उद्देश्य केवल प्रतिरक्षात्मक था"** १८७७ के प्रारम्भ मे लिटन ने निजी रूप से सुझाव दिया कि रूस से कहा जाये कि 'वह बलूचिस्तान और

* National Archives Confidential Report, Yarkand Mission, Aug 1875, Sec No 68

** गा० ज० ऐलडर, उपरोक्त पुस्तक पृष्ठ ६१।

काशगर और अफगानिस्तान मे भी हस्तक्षेप या हम से प्रतियोगिता नही करे"।

ब्रिटिश प्रतिनिधि भेजने के फैसले को औपचारिक अनुमति अप्रैल १८७७ तक नही मिली। इस काम के लिए स्वाभाविक रूप से शो चुना गया, जो जुलाई मे भारत जाने की तैयारी कर रहा था। इस निश्चय को अनुमति देने मे हिचकिचाहट का कारण किसी हद तक यह था कि शा १८७४ की सधि का अनुसमर्थन प्राप्त करने मे असफल रहा था। याकूब ोग १८७४ की सधि की धारा ६ को, जिसका सबध स्थायी प्रतिनिधि से ा उस समय तक अमली रूप नही देना चाहता था जब तक तुर्की के ोलतान की अनुमति न मिल जाये। वह रूस को नाराज़ करना नही चाहता था और डरता था कि वह भी अपने लिए ऐसी माग करेगा। जब जुलाई १८७५ मे शो को वापस लौटने का आदेश मिला, तो वह अपने साथ एक पत्र लाया जिसपर अमीर की मोहर थी। मगर शो जिस कागज को अनुसमर्थन की दस्तावेज़ समझ रहा था, वह वाइसराय के नाम केवल धन्यवाद का पत्र निकला।

अंग्रेजो को विश्वास था कि काशगर मे याकूब बेग का शासन स्थायी रहेगा। उन्हें विश्वास था कि चीनियो की यह स्थिति नही कि सिक्याग पर पुन अधिकार कर सके। केवल १८७६ मे ही पेकिंग स्थित ब्रिटिश मत्री को विश्वास हुआ कि चीनी वास्तव मे सिंक्याग को अपने अधिकार मे लाने की बात गम्भीरतापूर्वक सोच रहे हैं। सेंट पीटसबर्ग मे ब्रिटिश राजदूत लार्ड आगस्टस लाफ्टस की राय थी कि अग्रेज और रूसी मिलकर मध्यस्थता का प्रयास करे। परन्तु पेकिंग मे टामस वेड ने इसका विरोध किया। उसने अकेले यह पहलकदमी की। अंग्रेज मचू सम्राटो को ऋण देने के बावजूद याकूब बेग की सत्ता को बचाये रखना चाहते थे जो उनके प्रति अत्यत मैत्रीपूर्ण था। इसलिए उन्होंने उस और मचू सरकार म मध्यस्थता कराने का प्रयास किया।

१८७६ म फोरसाइथ पेकिंग गया और काशगर और चीन म मध्यस्थता कराने मे भाग लिया। टामस वेड पहले ही से पेकिंग मे चीनियो के साथ यह सवाल उठा रहा था। उसके प्रयत्न से ली-हुंग चाग और फारसाइथ

तथा मेयस का सम्मेलन आयोजित किया गया। ली-हुग चाग ने याकूब बेग द्वारा बिना शर्त आत्मसमर्पण और चीनियो की अधीनता स्वीकार करने पर जोर दिया। यह पूछे जाने पर कि काशगर द्वारा भेजे गये प्रतिनिधि का स्वागत पेकिंग मे किस प्रकार किया जायेगा, ली-हुग चाग ने उत्तर दिया कि काशगर के मामलो का सारा प्रबध जनरल त्सो-त्सुग ताग के जिम्मे कर दिया गया है, ठीक उसी तरह जैसे भारत के सारे मामले वाइसराय के जिम्मे है, और याकूब बेग को जनरल त्सो से बात करनी चाहिए।*

परंतु याकूब बेग और चीनियो मे सफलतापूर्वक निबटारे की आशाएं फिर जाग उठी जब पेकिंग मे ब्रिटिश अस्थायी कार्यदूत ने सर्वोच्च समिति मे काशगरिया के विरुद्ध सैनिक कारवाइयो पर विचार विमर्श म मतभेद की रिपोर्ट भेजी।** १८७७ के पूरे साल पेकिंग मे ब्रिटिश अस्थायी कार्यदूत काशगर के मुकाबले म चीनियो के कदम पीछे हटाने की बाबत लिखता रहा। कैनटन के वाइसराय से सर ब्रूक राबटसन की बातचीत के स्मृतिपत्र से पता चलता था कि ली हुग चाग ने फोरसाइथ से अपनी बातो म याकूब बेग द्वारा अधीनता स्वीकार करने की जो माग की थी, उसे अब बदल दिया गया है। नया प्रस्ताव यह था कि काशगर का चीन से सबध वही होना चाहिए, जो नेपाल और बर्मा का है।*** यह सुनने पर वाइसराय लाट लिटन ने भारत के लिए सेक्रेटरी आफ स्टेट लार्ड सोल्सबेरी को १६ जुलाई, १८७७ को लिखा

"अगर कैनटन के गवरनर द्वारा काशगरिया के बारे म सर बी० राबटसन से प्रकट किये गये विचार किसी प्रकार भी चीनी सरकार के विचारो का प्रतिबिम्बित करते हैं, तो हमारी राय है कि वे पूर्व म ब्रिटिश हितो के अनुकूल हैं और हमे विश्वास है कि इगलैंड म यारकद के प्रतिनिधि

* National Archives Foreign Department Sec, Jan 1877 No 120

**वही, अक्तूबर १८७७ अक १६३।

***वही, अक १६५ १६७।

की उपस्थिति से हर मजेस्टी की सरकार को उस समझौते को प्रोत्साहित करने का मौका मिल सकता है, जो प्रत्यक्ष रूप म चीनी सरकार यारकद से करना चाहती है।'*

लाड सोल्सबेरी ने सैयद याकूब खान से भेंट की, जो उन दिना लदन मे था। अब कारवाई का क्षेत्र पेकिंग से लदन आ गया और लाड डरबी, लाड सोल्सबेरी और टामस वेड ने चीनी राजदूत की सेवाय सुनिश्चित करने का प्रयत्न किया। वे इसम सफल हुए और जुलाई १८७७ को टामस वेड के घर पर चीनी राजदूत और अमीर के विशेष प्रतिनिधि मे भेंट का प्रबध किया गया। मगर उसी दिन काशगर के अमीर याकूब बेग के मरन का समाचार आया और काशगर और चीन मे समझौता कराने के इन प्रयत्ना का कोई नतीजा नही निकला।** चीनियो ने दिसम्बर १८७७ मे काशगर पर कब्जा कर लिया।

याकूब बेग की मत्यु के बाद काशगर मे जो गडबड मची रही उससे मजबूर होकर भारत सरकार को शो की यात्रा स्थगित करनी पडी। इस बीच नये शासक बेग कुली बेग ने ब्रिटिश प्रतिनिधि के आने की इच्छा प्रकट की। लेह म ब्रिटिश जाइट कमिश्नर नै इलियास ने सुझाव दिया के ब्रिटिश प्रतिनिधि काशगर भेजा जाये ताकि चीनिया से सम्मानपूर्ण समझौता" करने म नये शासक को ब्रिटिश नैतिक समथन ...प्त हो।

लाड लिटन ने इस सुझाव को स्वीकार करने का समथन किया। स्थायी प्रतिनिधि के लिए लदन की अनुमति प्राप्त करने से पहले उसने इलियास को काशगर जाने की आज्ञा दे दी। इलियास काशगर के लिए रवाना हुआ, मगर वह वहा पहुचा नही क्योंकि बेग कुली बेग राज छोडकर भाग चुका था।

चीनिया के लौट आने के बाद कुछ दिना तक शक्ति-सतुलन ब्रिटेन के पक्ष म रहा। ईली घाटी को वापस लेने का सवाल उठ गया था जिसपर

*वही अक १९७।
**वही, अक २१९-२२५।

रूसिया ने १८७१ मे इस शर्त पर कब्जा किया था कि उस इलाके मे स्थिति सामान्य हो जाने के बाद उसे लौटा दिया जायेगा। आठ महीने की कडी सौदेबाजी के बाद लिवादिया मे जिस सधि पर हस्ताक्षर हुए, उसे चीनी वैदेशिक कार्यालय ने अस्वीकार कर दिया और चीनी रूसी सबध, जिनमे पहले ही तनाव पैदा हो चुका था, बहुत खराब हो गये। लगता था कि युद्ध होनेवाला है, मगर फरवरी १८८१ मे सेट पीटसबर्ग की सधि की बदौलत वह टल गया और सकट का अत हो गया।

१८७८-१८८१ की अवधि मे, जब चीनी रूसी सबध खराब हो गये थे, अग्रेजो ने इससे फायदा उठाकर सिक्याग मे अपना प्रभाव बढा लिया। सिक्याग से उनका व्यापार १८७९-१८८० मे बराबर बहाल होता गया और १८८१ मे वह १८७६ के उच्च स्तर पर पहुच गया था।* भारतीय चाय पर चीनियो का प्रतिबध कारगर नही था। एक अग्रेज व्यापारी ऐंड्र्यू डालगीश ने काफी मुनाफा कमाया। इसके विपरीत चीनी रूसी व्यापार को दोनो शक्तियो के तनाव से बडा धक्का पहुचा। इलियास जिसे १८८० मे यारकद मे वापस भेज दिया गया था, यारकद के गवरनर से मिला और ऐसी "व्यवस्था" पर जोर दिया जिसमे "ब्रिटिश और चीनियो के बीच रूसिया के कार्यकलाप के बारे मे गुप्त सूचना का आदान प्रदान किया जा सके'।** पेकिंग मे चीनी वैदेशिक कार्यालय ने काशगर मे अग्रेजी उपदूतावास खोलने तथा व्यापार का नियत्रण करने के लिए करारनामे के ब्रिटिश अनुरोध को अस्वीकार कर दिया। परन्तु उसने ब्रिटिश एजटो को सिक्याग मे यात्रा करने की आज्ञा दे दी। यात्रा की इन सुविधाओ से फायदा उठाकर डालगीश सिक्याग के अपने व्यापक दौरे पर रवाना हुआ। परन्तु स्थानीय चीनी अधिकारियो की ओर से उसे बहुतरी बाधाओ का सामना करना पडा। सेट पीटर्सबर्ग की सधि से भारतीय व्यापार को, जो कुछ दिनो से बढ गया था, १८८१

---

*ग० ज० ऐलडर, उपरोक्त पुस्तक पृष्ठ ७७।

**वही।

मे, जो १८८४ मे तैयार की गई थी, यह प्रबध था कि मध्य एशिया के खान प्रशासित प्रदेशो और तुर्कमानिस्तान म गडबड कराने के लिए ग्रामी भेजे जाये। यह बात दिलचस्प है कि इस योजना मे "चीन से तुरत पुन मैत्री" करने पर ज़ोर दिया गया था।* रिपन को आक्रामक वर्तेशिक नीति के लिए जिम्मेदारी से मुक्त करना वास्तविक तथ्यो पर परदा डालना है। अफगानिस्तान म उसने जो समझौता कराया, वह इस माना म "रूढिवादी समझौता' था कि वह गडामक सधि के "बहुत निकट" था। यह भी रिपन ही के शासन काल की बात थी कि अफगान सरकार ने अग्रेज़ो के दबाव से १८८३ मे रूशान और शुगनान पर कब्जा कर लिया और यह बात अफगानिस्तान की उत्तरी सीमा के सबध मे ब्रिटेन और रूस के १८७३ के समझौते के विपरीत थी।

लार्ड डफरिन (१८८४ १८८८) ने एक व्यापारिक करारनामा और सिक्याग म उपदूतावास खुलवाने का निश्चय किया। उसने काशगर म एक मडल भेजने का निर्णय किया। चीनी वैदेशिक कार्यालय ने इलियास से बातचीत करने अपना प्रतिनिधि भेजने से यह कहकर इनकार कर दिया कि ब्रिटिश भारत व्यापार कोई इतनी बडी चीज नही कि इसके लिए विशेष व्यापार करारनामा किया जाय। चीनिया ने इलियास स अमत्रीपूर्ण व्यवहार किया और उसने इस असफलता के लिए पेकिंग मे ब्रिटिश अस्थायी कार्यदूत ओ कोनोर पर दोष मढा। भारत से एक व्यापार उपसधि का मसवदा ओ कोनोर के पास भेजा गया था। परन्तु पेकिंग म चीनी अधिकारिया द्वारा इसकी स्वीकृति की दिशा म कोई प्रगति नही हुई और चीन के साथ सबधा मे अनेक उलझन पैदा होते रहे जैसे तिब्बत का व्यापार, बर्मा का झगडा, सिक्किम का वार्तालाप, आदि। ओ कोनोर ने सिक्याग के शहरो मे टियेंटसिन की सधि की सबसे अनुगृहीत राष्ट्र की

*मकग्रगर, "भारत की सुरक्षा', भाग १–'एशिया विषयक भौगोलिक, स्थलरूपरखीय तथा सांख्यिकीय सामग्रिया का सग्रह', अक ४३, सेंट पीटर्सबर्ग, १८६१, पृष्ठ २०७, खालफिन, उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ ३६७।

धारा के आधार पर अंग्रेज़ो के लिए उपदूतावासीय अधिकारो की माग की। परन्तु चीनियो को इससे पहले काशगर मे रूसी उपदूत का बहुत कटु अनुभव हो चुका था (रूसी उपदूत पेत्रोव्स्की ने उससे अधिक राजनीतिक प्रभाव कायम कर लिया था जितना चीनी देना चाहते थे)। अत अब वे कोई और उपदूत नही चाहते थे। उपदूतीय प्रतिनिधि की अंग्रेज़ो की माग को बदलकर राजनीतिक एजेंसी की माग कर दी गई, क्योकि ब्रिटिश भारत व्यापार बहुत कम हो गया था। ब्रिटिश भारत सरकार पेकिंग म वालशम को कुरेदती रही कि वह इस मामले मे चीनी विदेश मत्रालय पर दबाव डाले, परन्तु चीनियो के हठ के कारण इसका कोई नतीजा नही निकला।

१८६१ मे ब्रिटिश भारत सरकार ने मकाटनी को सिक्याग मे अनिश्चित काल तक रखने का निश्चय किया, अगरचे चीनियो द्वारा उसे कोई सरकारी मान्यता प्राप्त नही थी। उसने अंग्रेज़ो की अच्छी सेवा की। चीनियो से वह उनका "सम्पर्क" कायम रखनेवाला व्यक्ति भी था और रूसिया पर निगाह रखनेवाला उनका गुप्तचर एजेंट भी। १८६१ मे हुजा पर अंग्रेज़ो के कब्ज़े स चीनी नाराज़ हो गये। उनका दावा था कि उसके शासक उन्हे नज़राना दिया करते थे और इसलिए उसपर उनका कभी का अस्पष्ट अधिराजत्व का अधिकार था।

१८६३ १८६५ की अवधि मे लन्दन चीनिया की मैत्री बनाये रखना चाहता था ताकि पामीर के विरुद्ध आक्रामक कारवाइया कर सके। भारत को रूस के "खतरे" का पुराना बहाना बनाकर अंग्रेज़ इस इलाके सनिय घुसपैठ की नीति पर अमल कर रहे थे। इसलिए अब वे काशगर उपदूतावास की माग पर ज़ोर देना नही चाहते थे। अधिक व्यापक साम्राज्यवादी नीति के हित म अंग्रेजो ने १८६३ म चीन के प्रति तुष्टीकरण की नीति अपनायी। इसका उद्देश्य यह था कि वे चीनी सागर तट पर तथा प्रधान भूमि के कुछ इलाका मे अपनी स्थिति सुदृढ करना चाहते थे जिन्हे उन्होने चीन के मचू शासको के साथ असमान सधिया करके अर्द्ध-औपनिवेशिक पराधीनता की स्थिति मे पहुचा दिया था। जनवरी १८६३ मे भारत सरकार ने इगलैंड मे अपनी सरकार को सूचना दी कि चीनी

अधिकारियो ने कराकुरम दर्रे पर सीमा चिन्ह लगा दिए हैं।* पेकिंग में ओ'कोनोर ने इस मामले मे चीनी रवैये पर किसी आपत्ति का विरोध किया। ब्रिटिश सरकार ने उसका समथन किया। विदेश मन्त्री लार्ड किम्बरले ने सुझाव दिया

"पेकिंग मे चीनी सरकार को उन रिपोर्टो के सारतत्व की सूचना दे देनी चाहिए, जो हर मैजेस्टी की सरकार को प्राप्त हुई है और उन्हें बता देना चाहिए कि कश्मीर राज्य की ओर से भारतीय अधिकारी काशगरिया मे चीनी अधिकारियो के साथ लेह से काशगर तक की सड़क पर सीमा निर्धारण करने मे सहर्ष सहयोग करेंगे। परन्तु इस सड़क पर काशगरी अधिकारियो द्वारा लदाख राज्य के सीमा निर्धारण का कोई प्रयास हर मैजेस्टी की सरकार की पूर्वानुमति के बिना किया गया, तो वह ऐसा नही करने देगी।'**

ओ कोनोर को पता लगा कि पेकिंग के सरकारी क्षेत्रो मे "पामीर मे रूस की आक्रामक नीति" के कारण लाग "खीजे" हुए हैं और इसलिए उसने कराकुरम मे चीनियो द्वारा चिन्ह लगाने का विरोध नही करने की सलाह दी।

यद्यपि वतमान पेकिंग शासक भारत को दोष देते नहीं थकते कि उसको ब्रिटिश साम्राज्यवादियो द्वारा एकपक्षीय तौर पर स्थापित सीमाए विरासत मे मिली है, परन्तु वस्तुस्थिति यह है कि अंग्रेजो ने हमेशा ऐसा रुख नहीं अपनाया, जो भारत के हितो के अनुकूल हो। इसकी एक मिसाल अक्साई चीन के मामले मे अंग्रेजो की गडबड है। काशगर म ब्रिटिश प्रतिनिधि मकार्टनी ने दिसम्बर १८६५ मे चीनी प्रातीय गवरनर को कुछ पुस्तकें और गणितीय यन्त्र भेंट किये। गवरनर ने काशगर के ताओ-ताई से आग्रह किया कि वह उसकी ओर से इन चीजो के लिए धन्यवाद दे दे। इन पुस्तकों

---

* National Archives Foreign Department, K W Sec F, April 1888 Nos 282—283

** National Archives Foreign Department, Enclosures to 1894, Aug, Sec F Nos 26—33

छठा अध्याय

सोवियत सत्ता की स्थापना

प्रारम्भिक सोवियत आज्ञप्तियां

सोवियत सघ ने अपनी प्राथमिक आज्ञप्तियो म से एक – "शाति क बारे म आज्ञप्ति" म अपनी वैदेशिक नीति के एक मौलिक सिद्धान्त के रूप मे राष्ट्रीय आत्मनिणय के अधिकार की घोषणा की। आगे चलकर इस सिद्धात की अभिव्यक्ति रूसी सघ तथा अन्य सोवियत जनतत्रो की अन्य अनेक आज्ञप्तियो ('रूस की जनताओ के अधिकारो का घोषणापत्र", "मेहनतकश और शोपित जनता के अधिकारो का घोषणापत्र", "रूस और पूव के मेहनतकश मुसलमानो के नाम जन कमिसार परिषद की अपील", अनेक राजनयिक नोट, वक्तव्य आदि) मे हुई।

"शाति के बारे मे आज्ञप्ति", जो लेनिन द्वारा लिखी गई थी, महान अतर्राष्ट्रीय महत्त्व की एक असाधारण दस्तावेज़ है। इसने समस्त जातियो और राष्ट्रो के अधिकारो की समानता के आधार पर न्यायोचित और जनवादी शाति की स्थापना की माग की। इसने वैदेशिक भूमि पर सभी कब्जो की निदा की। आज्ञप्ति ने न केवल राष्ट्रो के आत्मनिणय के अधिकार का निरूपण किया बल्कि इस बात की विस्तारपूवक व्याख्या भी की कि कब्ज़ा करना क्या होता है। आज्ञप्ति मे कहा गया "जब भी कोई छोटा या कमजोर राष्ट्र उस राष्ट्र की सुस्पष्ट शब्दो म, साफ-साफ तथा स्वेच्छापूवक व्यक्त की गयी अनुमति या इच्छा के बिना किसी बडे

या शक्तिशाली राज्य में शामिल कर लिया जाता है, तो इस बात का कोई लिहाज किये बगैर कि इस प्रकार बलात कब्जा किस समय किया गया या इस बात का कोई लिहाज किये बगैर कि वह राष्ट्र, जिसे किसी दूसरे राज्य में बलात शामिल कर लिया गया है या जिसे जबरदस्ती किसी दूसरे राज्य की सीमाओं के भीतर रखा जा रहा है, कितना उन्नत या पिछड़ा हुआ है और अंत में इस बात का कोई लिहाज किये बगैर कि वह राष्ट्र, जिस पर अधिकार किया गया है, यूरोप में है या समुद्र-पार का कोई सुदूर देश है, यह सरकार उसे आम तौर से पूरे जनवाद और खास तौर से मेहनतकश जनता की न्यायभावना के अनुरूप संयोजन या कब्जा समझती है।'*

आज्ञप्ति के इस भाग में आत्मनिर्णय के सिद्धांत के सार, अंतर्य और कार्य-क्षेत्र की व्याख्या की गई है। आज्ञप्ति ने घोषणा की कि यह सिद्धांत न केवल श्रमजीवी जनगण के न्याय-बोध के, बल्कि "आम तौर पर जनवादियों के न्याय-बोध" के अनुकूल है। वास्तव में आत्मनिर्णय का नारा पूंजीवादी-जनवादी कार्यक्रम का अंग था। आज्ञप्ति से यह भी नतीजा निकलता था कि किसी राष्ट्र के राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास के स्तर को बहाना बनाकर उसे अपने मामलों का प्रबंध करने के अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता। इस प्रकार आज्ञप्ति ने उपनिवेशवादियों के इस दावे पर निर्णायक प्रहार किया कि उन्होंने अन्य राष्ट्रों को अपनी गुलामी में इसलिए लिया है कि उनमें अपना प्रशासन स्वयं करने की क्षमता नहीं थी।

"शांति के बारे में आज्ञप्ति" ने जहां राष्ट्रीय आत्मनिर्णय के सिद्धांत की घोषणा मुख्यतया अंतर्राष्ट्रीय कानून के रूप में की वहां इसका "मेहनतकश और शोषित जनता के अधिकारों का घोषणापत्र" में सोवियत राज्य के राष्ट्रीय विकास के सिद्धांत के रूप में किया गया। "रूस की जनताओं के अधिकारों के घोषणापत्र' में कहा गया था कि सोवियत

---

*व्ला० इ० लेनिन संकलित रचनाएं, प्रगति प्रकाशन, मास्को, १९६८, खण्ड २, भाग २, पृष्ठ १७। (हिन्दी संस्करण)

कांग्रेस से सम्बोधन किया, "उलेमा" की कांग्रेस थी जिसे मुसलमान मेहनतकशों के नाम पर बोलने का कोई अधिकार नहीं।* रहीमबायेव ने घोषणा की कि मुसलमान मजदूर रूसी मजदूरों का साथ देंगे।

कई दिनों की लम्बी बहस के बाद सोवियतों की तीसरी कांग्रेस ने पूंजीपतियों और पूंजीवादी राष्ट्रवादियों के संग सत्ता में शरीक होने के लिए मशविकों और दक्षिण-पंथी समाजवादी क्रांतिकारियों के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। बोल्शेविकों और "पराकाष्ठावादियों" द्वारा प्रस्तावित घोषणापत्र ने तुर्किस्तान में सोवियत सत्ता की विजय का एलान किया और वर्तमान केन्द्रीय सत्ता और उसके संगठन के रूपों को स्वीकार किया। उसने स्पष्टतः "मुसलमानों" (यानी पूंजीवादी राष्ट्रवादियों और प्रतिक्रियावादी धर्मावलम्बियों) और समझौतावादी रूसियों के साथ सत्ता में शरीक होने से इनकार कर दिया जो अस्थायी सरकार का समर्थन करते, क्रांति के विरुद्ध लड़ते तथा क्रांतिकारी जनवाद से विश्वासघात करते थे।**

इस प्रकार सोवियतों की तीसरी क्षेत्रीय कांग्रेस ने तुर्किस्तान में सत्ता के संगठन के महत्वपूर्ण सवाल को क्रांतिकारी ढंग से हल किया। इसकी अक्सर यह आलोचना की गई है कि उसने स्वायत्त शासन की समस्या को नजरअन्दाज़ किया और सत्ता की उच्चतर संस्थाओं में मुसलमानों की शिरकत के बारे में नकारात्मक रवैया अपनाया। परन्तु कांग्रेस की कारवाई की अगर पूरी छानबीन की जाये, तो इस आलोचना का कोई आधार नहीं रह जाता।

जब १५-२२ नवम्बर, १९१७ को कांग्रेस का अधिवेशन हुआ, तो उस समय तुर्किस्तान के क्षेत्र का केवल एक छोटा भाग सोवियत नियंत्रण में था। ताशकन्द के अलावा यह फरगाना और समरकन्द इलाकों के केवल बड़े शहरों तक सीमित था। जेतीसुव और अधिकांश ट्रांसकास्पियन इलाका

---

*'नाशा गजेता', अंक १३३, २३ नवम्बर, १९१७ और 'तुर्किस्तानस्कीये वेदोमोस्ती', २१ नवम्बर, १९१७।

** नाशा गजेता, अंक १३३, २३ नवम्बर, १९१७।

अभी तक अस्थायी सरकार की सस्थाओ तथा पूजीवादी राष्ट्रवादी समितियों के हाथो मे था। ऐसी परिस्थितियां मे स्वभावत समाजवादी क्रांति तथा सत्ता के क्रांतिकारी सगठन के सवाल को कांग्रेस की कार्य-सूची म स्वायत शासन के सवाल के मुकाबले मे प्राथमिकता प्राप्त थी।

तीसरी कांग्रेस मे बोल्शेविको और "पराकाष्ठावादियो" के घोषणापत्र की तीव्र आलोचना इसलिए भी की गई है कि उसने मुसलमानो को क्रांतिकारी सत्ता की उच्चतम सस्थाओ से अलग रखा। मुसलमानो को अलग रखने तथा सोवियत सत्ता के प्रति उनके रवैये की अनिश्चितता का उल्लेख किसी हद तक भ्रामक है। इतना तो मानना ही पडेगा कि घोषणापत्र के इस भाग की शब्दावली ठीक नही है और इसमे आलेखन की अनेक गलतियां हैं। परन्तु अगर घोषणापत्र को उसकी पूर्णता म लिया जाये और उसे पूजीवादी राष्ट्रवादियो की इस माग के प्रसग म पढा जाय कि मजदूर महान कुर्बानियो के बाद हासिल की हुई सत्ता का छोड दें, तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि "मुसलमान" शब्द वर्गीय अर्थ मे इस्तेमाल किया गया है। घोषणापत्र ने सत्ता की सस्थाओ से मुसलमानो को ही नही, बल्कि रूसी समूह के उन प्रतिनिधियो को भी अलग रखा, जो क्रांति के विरुद्ध लडे थे। अगर घोषणापत्र को पूरा पढा जाये, तो उसके लेखको का आशय साफ हो जाता है। उसमे जोर दिया गया था कि "सक्रिय सार्वजनिक कार्य मे हिस्सा लेने से व्यापक जनता को अलग नही रखना है और स्थानीय प्रतिनिधियो को लेकर जिससे मुसलमान अलग नही किये जायेंगे, सोवियतो की कांग्रेसें" आयोजित की जायेंगी, ताकि अर्थतत्र और राजकीय ढाचे के सवालो पर विचार किया जाये।* इसके अतिम शब्द ये थे

"इस प्रकार न तो स्थानीय आबादी और न स्थानीय बुद्धिजीवियो को इस क्षेत्र के जीवन के सुधार के लिए सक्रिय काम करने के अवसर से वचित किया जाता है। इसके विपरीत इस काम के लिए उनका स्वागत किया जाता है।"**

---

*पूरे का पूरा घोषणापत्र 'नाशा गजेता' म २३ नवम्बर, १९१७ को प्रकाशित किया गया था।

**वही।

सोवियतो की तीसरी कांग्रेस ने तुर्किस्तान की सरकार की उच्च संस्था के रूप म १८ सदस्यो की जन-कमिसार परिषद स्थापित की। सोवियत कृतियो मे भी इस बात की ओर उचित ध्यान नही दिया गया है कि कांग्रेस ने जन-कमिसार परिषद मे तीन स्थान मुस्लिम मजदूरो के प्रतिनिधियो के लिए सुरक्षित कर दिये थे। 'नाशा गजेता' के २३ नवम्बर, १९१७ के अक मे जन-कमिसार परिषद मे मुसलमान मजदूरो के प्रतिनिधियो के लिए स्थान सुरक्षित रखने का स्पष्ट उल्लेख है।* इसकी पुष्टि हमे पुन २५ जनवरी, १९१८ को सोवियतो की चौथी क्षेत्रीय कांग्रेस मे बोल्शेविक दल के नेता तोबोलिन के भाषण म मिलती है।** तोबोलिन ने कहा था कि जन-कमिसार परिषद म १८ सदस्य होगे। १५ सदस्यो का निर्वाचन सोवियतो की तीसरी कांग्रेस कर चुकी है और तीन स्थान मुसलमान मजदूरो के प्रतिनिधियो के लिए खाली छोड दिये गय हैं। सोवियतो की चौथी क्षेत्रीय कांग्रेस ने बोल्शेविको के आग्रह पर इस सुझाव का समर्थन किया।

जन-कमिसार परिषद के निदेशन के लिए सोवियतो की तीसरी कांग्रेस द्वारा स्वीकृत आदेश से कोई सन्देह नही रह जाता कि सोवियत सत्ता की उच्च संस्थाओ में मुसलमानो की शिरकत के खिलाफ कही कोई भावना नही थी। आदेश की धारा ३ मे मुसलमानो को इस बात का आश्वासन दिया गया है कि जन-कमिसार परिषद की रचना मे मुस्लिम सर्वहारा और श्रमजीवी जनगण के प्रतिनिधियो को शामिल किया जायेगा और उन्हें "(आनुपातिक रूप से) उचित स्थान दिये जायेंगे"।*

---

*'स्वोबोदनी समरकन्द' (रूसी संस्करण) जैसे गैर-बोल्शेविक अखबार ने भी (अक १२७, २९ नवम्बर, १९१७) इसकी पुष्टि की थी।

**'नाशा गजेता', अक २२, २७ जनवरी, १९१८।

***'नाशा गजेता', अक १३३ २३ नवम्बर, १९१७। "आनुपातिक" शब्द आदेश के मूलपाठ से किसी तरह निकल गया था, जब वह "तुर्किस्तान मे महान अक्तूबर समाजवादी क्रांति की विजय, दस्तावेज संग्रह" मे (ताशकन्द, १९४७, पृष्ठ ९३–९५, रूसी संस्करण) प्रकाशित किया गया था और कुछ समय बाद "उज्बेकिस्तान म अक्तूबर क्रांति की विजय" नामक दस्तावेज-संग्रह मे (ताशकन्द, १९६३, पृष्ठ ५७२–५७३, रूसी संस्करण) प्रकाशित हुआ।

आदेश की धारा ८ ने जन कमिसार परिषद को केवल तुर्किस्तान के मजदूरों, सैनिकों और किसानों के प्रतिनिधियों की सोवियतो के सामने ही नहीं, बल्कि मुस्लिम मवहारा तथा मेहनतकश जन संगठनों के सामने भी जवाबदेह बनाया।

ऊपर की बातों से स्पष्ट है कि तुर्किस्तान के प्रारम्भिक बोल्शेविकों का मुस्लिम जनता के प्रतिनिधियों को प्रशासन में भाग लेने से अलग करने का कोई इरादा नहीं था। घोषणापत्र में अवश्य आलेखन की कुछ गलतियां थीं। परन्तु इसी कारण इसके लेखकों पर स्थानीय मुसलमानों के प्रति शत्रुता की भावना का दोष नहीं मढ़ा जा सकता। निम्न पूंजीवादी अखबार तुर्किस्तान के बोल्शेविकों का मजाक उड़ाया करते थे कि वे सभाओं की विज्ञप्तियां आदि भी ठीक से नहीं लिख पाते। 'स्वाबोन्नी समरकन्द' अखबार ने तिरस्कारपूर्वक इस बात का उल्लेख किया है कि तुर्किस्तान की जन कमिसार परिषद में क्लर्क, कम्पाजीटर तथा चिकनाई करनेवाले मजदूर हैं। उसने वित्त-कमिसार द्वारा लिखी हुई एक नोटिस की नकल भी यह दिखाने के लिए छापी कि साक्षरता का स्तर कितना नीचा है।*

सोवियतों की तीसरी कांग्रेस ने स्थानीय सत्ता-संगठन पर भी एक प्रस्ताव स्वीकृत किया। स्थानीय क्षेत्रों में सारी सत्ता मजदूरों, सैनिकों और किसानों के प्रतिनिधियों की सोवियतों के हाथ में होगी। स्थानीय सोवियतों से आग्रह किया गया था कि जहां कहीं मुस्लिम मजदूरों के प्रतिनिधियों की सोवियतें नहीं हैं, वहां वे उनका संगठन करें। जहां ऐसी सोवियतें हैं, वहां उन्हें आत्मशासित रहने दिया जाय।**

नवम्बर १९१७ के अंत में पूंजीवादी राष्ट्रवादियों ने सोवियत सत्ता का खुलेआम विरोध किया। तीसरी कांग्रेस द्वारा सत्ता उनके हवाले करने से साफ इनकार के फलस्वरूप २७ नवम्बर को कोकंद में तथाकथित क्षेत्रीय मुस्लिम कांग्रेस बुलायी गयी थी। कोकंद कांग्रेस में उज्बेक, कजाख,

---

*'स्वाबोन्नी समरकन्द', अंक १२७, २६ नवम्बर, १९१७।
**'तुर्किस्तान में महान अक्तूबर समाजवादी क्रांति की विजय", पृष्ठ ६८।

ताजिक और विशिष्ट पूंजीवादी राष्ट्रवादियों ने भाग लिया, जो "शूरा-ए इसलामिया", "उलेमा" और "आलश ओरदा" जैसी राजनीतिक पार्टियों में संगठित थे। मुस्लिम मेहनतकशों के कम ही प्रतिनिधि थे। कांग्रेस ने दो सवालों पर विचार किया, एक था तुर्किस्तान के "दक्षिण पूर्वी संघ" में जिसका प्रधान प्रतिक्रांतिकारी नेता दूतोव था, शामिल होने का सवाल और तुर्किस्तान की स्वायत्तता का सवाल। पहला सवाल उसने तुर्किस्तान की भावी सरकार के लिए छोड़ दिया और तुर्किस्तान की क्षेत्रीय स्वायत्तता की घोषणा कर दी। उसने तुर्किस्तान की अस्थायी परिषद का निर्वाचन किया, जिसके ५४ सदस्य थे जिनमें से एक तिहाई रूसी पूंजीपतियों के प्रतिनिधि थे। कोकान की तथाकथित स्वायत्त सरकार का प्रधान पहले कज़ाख सर्व-तुर्कवादी मोहम्मदजन तिनिशबायेव था, जिसका स्थान जल्दी ही "शूरा ए इसलामिया" के मुस्तफा चोकायेव ने ले लिया। प्रतिरक्षा मंत्री का पद एक सफेद गार्ड रूसी जनरल को दिया गया। कोकान स्वायत्ततावादियों का घनिष्ठ संबंध दूतोव से, काशगर में ब्रिटिश कौंसल से तथा मेंशेविक और समाजवादी-क्रांतिकारी संगठनों से था। उन्होंने स्वायत्तता का नारा केवल अपने प्रतिक्रांतिकारी उद्देश्यों पर परदा डालने के लिए दिया था।

कोकान स्वायत्तता रूसियों के विरुद्ध मुसलमानों का कोई राष्ट्रीय आन्दोलन नहीं था, जैसा कि कुछ लेखकों का कहना है। वास्तव में यह वर्ग-संघर्ष था, जिसमें एक ओर मुस्लिम सम्पत्तिवान वर्ग थे जो रूसी पूंजीपति वर्ग और वैदेशिक साम्राज्यवादियों से मिले हुए थे, और दूसरी ओर रूसी सर्वहारा था, जिसे मुस्लिम मेहनतकश जनता का समर्थन प्राप्त था। वास्तव में यह तुर्किस्तान में प्रतिक्रांतिकारी तथा क्रांतिकारी शक्तियों का संघर्ष था। अ० लटिमोर ने खुलासा करते हुए सही कहा है कि "क्रांति ज्यों ज्यों गहरी होकर राजनीतिक संघर्ष से वर्ग-संघर्ष का रूप धारण करती गई, विभाजन की रेखाओं ने अधिकाधिक सम्पत्तिवान रूसियों और गैर-रूसियों को एक ओर कर दिया, जो इसलिए लड़ रहे थे कि पुरानी व्यवस्था में से जो कुछ हो सके उसे बचायें, और सम्पत्तिहीन

रूसियो और गैर-रूसियो को दूसरी ओर, जो नई व्यवस्था को पूर्ण अपने हाथो मे लेना चाहते थे।"*

कुछ लेखको ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि बाल्शेविक स्वायत्तता के कट्टर विरोधी थे और पूजीवादी राष्ट्रवादी इसके पक्के समर्थक। यह कहना वस्तुस्थिति के विपरीत है। पूजीवादी राष्ट्रवादी तत्व, जो सोवियत सत्ता की स्थापना के बाद स्वायत्तता के ध्येय के समर्थन म गला फाड फाड कर चीखने लगे, अस्थायी सरकार तथा उसकी तुर्किस्तान समिति के प्रति अपनी अटूट वफादारी जतलाने म एक दूसरे पर बाजी ल जाने का प्रयत्न करते थे, हालाकि उन सबको मालूम था कि वह स्वायत्तता की धारणा का विरोधी है। अस्थायी सरकार चाहती थी कि तुर्किस्तान को ब्रिटिश और फ्रासीसी उपनिवेशो के नमूने पर स्वशासन की दिशा म विकसित करे और वह स्वायत्तता की समर्थक नही थी।

जातीय सवाल के सबध मे पूजीवादी राष्ट्रवादियो का कोई सुसगत कार्यक्रम नही था। उनकी स्वायत्तता की धारणा बेहद उलझी हुई, अतविरोधी और बडी हद तक धम से प्रभावित थी। कुछ लेखको ने उन्हे "राष्ट्रीय क्षेत्रीय स्वायत्तता' की वैज्ञानिक धारणा का श्रेय दने का प्रयत्न किया है।** पर यह भ्रामक है। पजीवादी राष्ट्रवादियो म कई प्रकार की राय थी। एक तो सव इसलामवादी थे, जिनके विचार से रूस क सभी मुसलमान एक कौम थे और उन्हे उसी प्रकार व्यवहार करना चाहिए था। वे मुसलमानो म कोई वग भेद नही देखत थे और सबो के हितो को एक और समान मानते थे। सव-तुर्कवादी तातारो, आजरबैजानियो, उजबेको, कजाखो, तुर्कमानो और किरगिजो को मिलाकर कृत्रिम रूप से एक तुर्की कौम का निर्माण करना चाहते थे। वे तातार पूजीपति वग के हितो का प्रतिनिधित्व करते थ जिनकी इच्छा थी कि वे तुर्की भाषा-बोलनेवाल मूल स सबध रखनेवाले रूस के सभी मुसलमानो पर अपना वर्गीय नेतत्व कायम करें।

---

* O Lattimore *Pivot of Asia* Boston 1950 p 204

S A Zenkovsky *Pan Turkism and Islam in Russia* Cambridge Mass 1960 pp 147—149

मध्य एशिया के जदीदों भिन्न गिरोहों का पचमेल थे, वे कभी सब-इसलामवादियों की ओर झुकते और कभी सब-तुर्कवादियों की ओर और कभी स्वयं अपने पूंजीवादी राष्ट्रीयतावाद की ओर। तथाकथित अखिल-रूसी मुस्लिम कांग्रेसों में पूंजीवादी राष्ट्रवादियों की यह उलझन और सिद्धांतहीनता पूरी तरह झलकती है। पहली अखिल रूसी मुस्लिम कांग्रेस मास्को में मई १९१७ में हुई। इसने "एक संघीय आधार पर संगठित जनवादी जनतंत्र" के भीतर "राष्ट्रीय क्षेत्रीय स्वायत्तता" का प्रस्ताव स्वीकार किया।* परन्तु दूसरी अखिल रूसी मुस्लिम कांग्रेस की कार्यसूची में जो कज़ान में जुलाई १९१७ में हुई, "राष्ट्रीय सांस्कृतिक स्वायत्तता" का सवाल निहित था।** दूसरी अखिल रूसी मुस्लिम कांग्रेस के साथ-साथ कज़ान में मुस्लिम मुल्लाओं और सैनिकों की कांग्रेस भी हुई। तीनों कांग्रेसों के एक संयुक्त अधिवेशन में रूस की सभी तुर्क-तातार कौमों की सांस्कृतिक स्वायत्तता का" कार्यान्वित करने का निश्चय किया गया।***

पूंजीवादी राष्ट्रवादियों के इस अंतर्विरोधी मत की रोशनी में प्रथम अखिल रूसी मुस्लिम कांग्रेस के प्रस्ताव में उल्लिखित "राष्ट्रीय क्षेत्रीय स्वायत्तता को कोई महत्त्व नहीं दिया जा सकता। इससे यह नतीजा निकालना कि पूंजीवादी राष्ट्रवादियों के कार्यक्रम में राष्ट्रीय क्षेत्रीय स्वायत्तता की स्पष्ट मांग थी, बात का बतंगड़ बनाना है। इस प्रसंग में यह कहा जा सकता है कि प्रथम अखिल रूसी मुस्लिम कांग्रेस ने भूमि-सुधारों पर प्रतिक्रांतिकारी प्रस्ताव स्वीकार किया था। उसने मांग की थी कि सभी प्रकार की ज़मीनें "समस्त जनगण की सम्पत्ति" घोषित कर दी जायें और "भूमि के हर प्रकार के निजी स्वामित्व को बिल्कुल मिटा दिया जाये"। किसानों को बिना उजरती के श्रम का प्रयोग किये भूमि को इस्तेमाल करने का अधिकार प्रदान करना था। मुस्लिम कांग्रेस द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव ने संविधान सभा द्वारा समस्या के समाधान की प्रतीक्षा किये बिना तुरंत

---

* 'उलुग तुर्किस्तान', अंक ५, १३ मई, १९१७ और 'नाशा गज़ेता', अंक १८, १६ मई, १९१७।

** 'उलुग तुर्किस्तान', अंक २०, ४ अगस्त, १९१७।

*** वही, अंक १८, २७ जुलाई, १९१७।

भूमि-सुधार की माग की थी।* यह देखा जा सकता है कि प्रथम प्रांति रूसी मुस्लिम काग्रेस का भमि कायनम भूमि के सबध म वाल्शेविक काग्र की प्रतिध्वनि मात्र था। यहा तक कि उसने भमि के राष्ट्रीयकरण की लेनिनवादी आज्ञप्ति को भी प्रस्तुत कर लिया था। परन्तु क्या इसके आधार पर कोई यह कह सकता है कि पूजीवादी राष्ट्रवादी वास्तव मे भूमि की समस्या का क्रातिकारी समाधान चाहते थे? जाहिर है कि बहुत सी बाते जनता को भरमाने के लिए कही गई थी। वे जानते थे कि बोल्शेविको द्वारा प्रचारित राष्ट्रीय क्षेत्रीय स्वायत्तता तथा भमि के राष्ट्रीयकरण का विचार मुस्लिम श्रमजीवी जनता म बहुत जनप्रिय हो रहा था। इसलिए उन्हान इन सिद्धातो से अपनी अनुमति जल्दी ही प्रकट की।

यह सही है कि कभी-कभी पूजीवादी राष्ट्रवादिया न धम के प्रभाव से निकलन तथा अपनी अलहदा राष्ट्रीय आकाक्षाओ का अभिव्यक्त करने की प्रवृत्ति प्रदर्शित की। परतु वे अपने आप को उसके प्रभाव से पूरी तरह मुक्त नही कर सके। उनके लिए इसलाम और राष्ट मूलत एक ही चीज थी। सितम्बर १९१७ मे हुई दूसरी असाधारण क्षेत्रीय मुस्लिम काग्रेस ने प्रस्ताव किया कि स्वायत्त तुर्किस्तान जनतत्र का ससद द्विसदनी होना चाहिए, जिसकी उच्च सभा धर्मावलम्बियो की सिनट हो। उसका कायभार यह देखना हागा कि ससद द्वारा स्वीकृत सभी कानून शरीअत क अनुरूप हो। धर्मावलम्बिया की इस सिनेट को सर्वोच्च न्यायालय का भी काम करना था।** इन सब बाता से यही स्पष्ट होता है कि स्वायत्तता की उनकी धारणा ज्यादा धार्मिक और सास्कृतिक थी, राष्ट्रीय क्षेत्रीय नही। जदीदिया न (यह बात जेकाव्स्की भी स्वीकार करता है) मध्य एशिया की स्वायत्तता को वायरूप दन के लिए कोई कदम नहा उठाया।*** वे "उलमा' की प्रतिष्ठा स बहुत डर हुए थे जिनके आगे उन्होंने घास-घार घुटन टेक दिय। उलेमा" का न स्वायत्तता स कोई दिलचस्पी थी और

*'नाशा गजेता', अक २०, १७ मई, १९१७।
** तुर्किस्तानस्की कुर्येर, अक २८३, ११ नवम्बर, १९१७। (रूसी सस्करण)
***ग० जेकाव्स्की, उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ २२८-२२९।

न स्वतत्ता से। वह केवल मध्य एशिया के मुसलमानो पर धर्मावलम्बियो का प्रभाव कायम रखना चाहती थी।

अनेक पश्चिमी लेखको ने तुर्किस्तान के पहले बाल्शेविको का स्वायत्तता के कट्टर शत्रु के रूप मे वर्णन किया।* कुछ सोवियत लेखको ने भी उन्हे अप्रैल १९१८ मे सोवियतो की पाचवी क्षेत्रीय काग्रेस से पहले तक स्वायत्तता के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण का दोषी ठहराया है। परन्तु इस विचार से सहमत होना कठिन है। स्थानीय बाल्शेविको पर तुर्किस्तान की स्वायत्तता के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण का आरोप लगाने का कोई उचित आधार नही है।

ताशकन्द के पुराने शहर मे १३ दिसम्बर, १९१७ को स्वायत्तता की माग के पक्ष मे प्रदर्शन की तैयारी के सबध मे एक सभा हुई, जिसमे ताशकन्द नगर सोवियत का एक प्रतिनिधि उपस्थित था।** इस प्रदर्शन मे जन-कमिसार परिषद के अध्यक्ष कोलेसोव तथा अन्य कमिसार उपस्थित थे। कोलेसोव ने प्रदर्शनकारियो के समक्ष भाषण दिया और तुर्किस्तान की स्वायत्तता का समर्थन किया।*** प्रतिक्रियावादी रूसियो ने उसको टोकना चाहा, मगर मुस्लिम प्रदर्शनकारी धीरज के साथ उसकी बाते सुनते रहे। प्रदर्शन शातिपूर्ण ढग से सम्पन्न हो जाता, अगर कुछ प्रतिक्रियावादी रूसियो ने मुसलमानो को हिंसा पर न उकसाया होता और दोरेर जेल से प्रतिक्रातिकारियो को जेल से छुडा न लिया होता। अत कुछ प्रतिक्रातिकारी रूसियो के उकसाव का नतीजा था कि प्रदर्शन पर गोली चलायी गई और कुछ निरपराध लोग मारे गये।

'नाशा गज़ेता' ने, जो ताशकन्द सोवियत का मुखपत्र था, १३ दिसम्बर के सम्पादकीय मे लिखा कि बोल्शेविक "स्वायत्तता के सिद्धान्त" विरोधी नही हैं, मगर वे अवश्य "एक छोटे समूह द्वारा स्वायत्तता के नाम पर पिछडी हुई मुस्लिम जनता का शोषण करने और उसको गुलाम

---

* R Pipes *The Formation of the Soviet Union* p 179, A G Park, *Bolshevism in Turkestan*, pp 14—21

** 'नाशा गज़ेता', अक १४६, ९ दिसम्बर, १९१७।

*** वही, अक १५२, १५ दिसम्बर, १९१७।

बनाने के प्रयत्नो" के विरोधी है। ऐसी झूठी स्वायत्तता के विपरीत सच्ची वास्तविक स्वायत्तता के पक्षपाती थे जिसकी घोषणा सार्वजनिक रूप से निर्वाचित सविधान सभा (अर्थात सोवियतो की काग्रेस) द्वारा की जाय।

सोवियतो की चौथी काग्रेस न, जो ताशकन्द मे १९ से २६ जनवरी १९१८ तक हुई, क्राति के बाद के पहले कुछ महीनो मे सोवियत सत्ता के निर्माण तथा सामाजिक और राजनीतिक ढाचे मे क्रातिकारी परिवर्तन मे हुई प्रगति पर जोर दिया। स्वायत्तता के सवाल पर भी विचार किया गया। इस सबध म बाल्शेविक नेता तोबोलिन का भाषण, जिसपर अक्सर तुर्किस्तान की स्वायत्तता का विरोध करने का आरोप लगाया जाता है, इस के योग्य है कि उसका लम्बा उद्धरण दिया जाये। ताबोलिन न चौथी काग्रेस मे घोषणा की

"इस देश के असली मालिक, जिसकी स्वायत्तता की हम बात करते ह, हमारे अनुसार इस देश के जनगण हैं। हम आत्मनिणय की केवल बात नही करते, बल्कि इस विचार को हर तरह कार्यान्वित भी करते हैं। हम हथियार लेकर प्रतिक्राति के विरुद्ध लडते है चाहे उसका स्रोत कुछ भी हो, देशी पजीपति या रूसी। इसी के साथ हम न केवल इस देश के लोगो का स्वायत्तता का अधिकार स्वीकार करते, बल्कि उनके इस अधिकार की भी रक्षा करते हैं कि अगर वे चाहे तो बिल्कुल अलग हो जाये। हम कहते ह कि तुर्किस्तान के इलाके पर बलपूर्वक कब्ज़ा किया गया था और बलपूर्वक रखा गया था और अगर आम मतदान द्वारा व्यक्त जनमत रूस स अलग होना चाहे तो हम अलग होने के इस अधिकार की रक्षा करेंगे।"*

परतु तोबोलिन का विचार था कि यकायक और तुरत स्वायत्तता को कार्यान्वित करना सम्भव नही था, क्योंकि क्राति की उपलब्धियो को प्रतिक्राति से खतरा था और देश म युद्ध की स्थिति थी। मगर तोबोलिन की राय म स्वायत्तता या आत्मनिणय के लिए भी तयारी का काम शुरू कर दिया गया था। उन्होंने विश्वास दिलाया

*'नाशा गज़ेता', अक २०, २५ जनवरी, १९१८।

"हम अपनी माग ठीक ठीक निरूपित करेंगे और मुसलमानो के बीच मजदूरो के प्रतिनिधियो की सोवियत सगठित करके हम सत्ता के उस सात का निर्माण कर रहे है जो तुर्किस्तान के भावी स्वतन्त्र देश के लिए जरूरी होगा।"*

तोबोलिन के भाषण के विपरीत मशेविक अतर्राष्ट्रीयतावादी पावलुचेको का भाषण था जिसने बोल्शेविको द्वारा देशी लोगो को देश का "मालिक" कहने पर आपत्ति की। उसने कहा

'हम अपने आपको क्राति के अगुआ दस्ते के रूप म देखते है और अपना कतव्य यह समझते हैं कि राजनीतिक दृष्टि स अपरिपक्व मुस्लिम श्रमजीवी जनगण को सही रास्ते पर ले चल। हम मुसलमानो को सही रास्ते पर ले चलने के सिवा और कुछ नही देने जा रहे।'**

मशविको का सुझाव था कि स्वायत्तता स्थापित करने के लिए, जिसकी घोषणा सविधान सभा द्वारा की जानेवाली थी, तयारी के रूप म शहरी और स्थानीय स्वशासन स्थापित किया जाये।

बोल्शेविक प्रतिनिधियो ने चौथी काग्रेस के सामने अपने प्रस्ताव म, ो भारी बहुमत से स्वीकृत हुआ, घोषणा की कि स्वायत्तता का प्रश्न म तौर से राष्ट्रीय सवाल से जुडा हुआ है जिसे रूसी क्राति ने इस र म सामने कर दिया था और जिसपर केवल क्रातिकारी दृष्टि से विचार करना चाहिए। इसम यह भी घोषणा की गई कि आत्मनिणय के सिद्धात को समाजवाद के ध्येय के अधीन करना चाहिए और उस केवल श्रमजीवी जनगण का आत्मनिणय समझना चाहिए। बोल्शेविक प्रस्ताव के अनुसार सारी सत्ता सोवियतो के हाथ म होनी चाहिए। उसने केवल मजदूरो, सनिको, किसानो तथा मुस्लिम मजदूरो के प्रतिनिधियो की सोवियतो की सत्ता को स्वीकार किया और सत्ता म साझे के सारे सुझावो को ठुकरा दिया। अत मे प्रस्ताव ने मुट्ठी भर रूसी और मुसलमान प्रतिक्रियावादियो द्वारा पूजीवादी स्वायत्तता के विरुद्ध निरतर सघर्ष का आवाहन किया

*वही।
**वही।

और कहा कि सामाजिक जनवादियों की पार्टी उस क्षेत्र के लिए सर्वहारा स्वायत्तता स्थापित करने का प्रयास करेगी।*

ऊपर उद्धत प्रस्ताव से स्पष्ट है कि बोल्शेविक स्वायत्तता के विरोधी नही थे, बल्कि केवल पूजीवादी स्वायत्तता के विरोधी थे। उन्होंने भी ही पूजीवादी स्वायत्तता के मुकाबले मे सर्वहारा स्वायत्तता को पेश किया। यह आरोप लगाने का कोई आधार नही है कि उनमे स्थानीय मुसलमान जनता के प्रति शत्रुता की भावना थी। उन्होंने सोवियत प्रशासन म श्रमजीवी मुसलमान जनता की शिरकत का स्वागत किया और सोवनारकाम (जन कमिसार परिषद) म उनके लिए तीन स्थान रिक्त रखे।

परन्तु इस सबके बावजूद पहले बोल्शेविक ऐसी जातीय स्वायत्तता का निर्माण करने मे असफल रहे। जहा उनकी पूजीवादी स्वायत्तता के विपरीत सर्वहारा स्वायत्तता की माग बिल्कुल सही थी, वहा शुरू मे अपनी सर्वहारा स्वायत्तता का जातीय रूप देने मे उनकी असफलता के कई बुरे परिणाम हुए। पूजीवादी राष्ट्रवादियो ने इस स्थिति से पूरा फायदा उठाया, जिन्होंने जातीय स्वायत्तता के रूप मे अपनी पूजीवादी स्वायत्तता के विचार को जनता मे चालू करना चाहा। परन्तु सोवियतो की तीसरी और चौथी काग्रेसो के समय सोवनारकोम म मुसलमान प्रतिनिधियो के नहीं होने की जिम्मेदारी बोल्शेविको की केवल आंशिक है, क्योंकि उसमे १५ स्थानो म उन्हे केवल ५ स्थान प्राप्त थे ("पराकाष्ठावादियो" को २ तथा वामपंथी समाजवादी क्रांतिकारियो को ८)।

जनवरी १९१८ के अत मे सोवियत सत्ता न जाइत्सव और कज्जाकों की प्रतिक्रांतिकारी शक्तियो के विरुद्ध, जिन्होंने उससे बगावत कर दी थी, सैनिक कारवाई शुरू की। कोकान स्वायत्ततावादी और दूतोव के जाइत्सव स मिले हुए थे। ताशकन्द के लाल गार्ड ने जाइत्सव को १८ फरवरी १९१८ को समरकन्द के निकट परास्त कर दिया। समरकन्द के निकट सफेद कज्जाको की शिकस्त देने के बाद बोल्शेविको न बाकी स्वायत्ततावादियो के विरुद्ध अपना सार्वजनिक प्रचार आदोलन और तेज कर दिया।

---

*वही।

जनवरी ही मे शहरा और ग्रामो में गरीबा की सभायें सगठित की गई थी, जिनमे सावियत सत्ता के समथन म प्रस्ताव पास किये गये। इन सभाओ म बोल्शेविका न कोकान स्वायत्ततावादियों के वास्तविक इरादा का बेनकाब किया। ताशकन्द के पुराने भाग में एक बडी सावजनिक सभा म स्थानीय श्रमजीवी जनता न कोकान के मिथ्या स्वायत्ततावादिया के विरुद्ध अपना मत प्रकट किया। फरगाना और समरकन्द प्रदेशो ने श्रमजीवी जनगण न अनक सभाए की और तुर्किस्तान की जन-कमिसार परिषद का अभिनन्दन किया। अन्दीजान उयेज्द (जिले) के श्रमजीवी जनगण न ५ जनवरी, १९१८ को एक सभा म जिसमे १५ हजार मजदूर उपस्थित थे, एक प्रस्ताव स्वीकार करके सावियत सरकार मे अपना विश्वास प्रकट किया।*

३०-३१ जनवरी की रात, १९१८ को कोकान स्वायत्ततावादियो ने सावियत सत्ता की नगर-सस्था के विरुद्ध सनिक कारवाई शुरु की। उन्होंने कोकान किले को घेर लिया। इससे मजबूरन सावियत सरकार को उनके विरुद्ध जोरदार सनिक कदम उठाना पडा। समरकन्द के निकट सफेद कज्जाको की शिकस्त के बाद लाल गाड दाल कोकान की तरफ बढ गये। फरगाना और अन्दीजान के लाल गाड वाले भी कोकान की ओर बढे। उनकी पक्तिया मे बहुत से देशी लोग भी थे। सनिक कारवाई १९ फरवरी, १९१८ को शुरु हुई और २२ फरवरी, १९१८ तक जारी रही। कोकान के पजीवादी स्वायत्ततावादिया के विरुद्ध लडाई मे स्थानीय देहकानो और गरीबा ने प्रमुख भाग लिया। कोकान सरकार द्वारा लामबन्दी का आदेश मानने से उन्होंने इनकार कर दिया। २२ फरवरी, १९१८ का कोकान सरकार नष्ट कर दी गई। प्रतिक्रातिकारी स्वायत्ततावादियों का एक हिस्सा भाग कर बुखारा चला गया, जहा वे अमीर से मिलकर सोवियत सत्ता के विरुद्ध षडयन्त्र करते रहे। कोकान सरकार के विघटन के बाद पूजीवादी राष्ट्रवादी फरगाना घाटी मे **बासमची**** गिरोह सगठित करने लगे।

---

* "उज्बेक सोवियत समाजवादी जनतत्र का इतिहास", ताशकन्द, १९५७, खण्ड २, पृष्ठ ६१। (रूसी सस्करण)

** सोवियत सत्ता के प्रथम वर्षों म मध्य एशिया मे क्रातिविरोधी कारवाइया करनेवाले सशस्त्र दलो के सदस्यो को बासमची कहते थे। –अनु०।

मार्च १९१८ को सोवियत सरकार का असाधारण कमिसार तथा रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की केन्द्रीय समिति का प्रतिनिधि कोबोजेव ताशकन्द पहुंचा। उसे सोवियत सत्ता को सबल बनाने और तुर्किस्तान स्वायत्त सोवियत समाजवादी जनतंत्र की स्थापना करने में पार्टी और सोवियत सत्ता की स्थानीय संस्थाओं की व्यावहारिक सहायता करने के लिए भेजा गया था। अप्रैल १९१८ में तुर्किस्तान के मजदूरों, किसानों, सैनिकों तथा मुस्लिम देहकानों के प्रतिनिधियों की सोवियतों की पांचवीं क्षेत्रीय कांग्रेस हुई। पांचवीं कांग्रेस के प्रतिनिधियों में काफी बड़ा हिस्सा देशी आबादी के प्रतिनिधियों का था। प्रतिनिधियों के भाषणों का अनुवाद उज्बेक भाषा में किया जाता था। २२ अप्रैल को कांग्रेस के नाम लेनिन और स्तालिन का तार आया, जिसमें आश्वासन दिया गया था कि सोवनारकोम सोवियत के आधार पर क्षेत्र की स्वायत्तता का समर्थन करेगा। ३० अप्रैल, १९१८ को पांचवीं कांग्रेस ने "रूसी संघ के तुर्किस्तान सोवियत जनतंत्र की संविधि" का अनुमोदन किया। संविधि की धारा १ और २ में जनतंत्र के राजकीय ढांचे, इसकी क्षेत्रीय सीमाओं तथा रूसी सोवियत संघात्मक समाजवादी जनतंत्र से पारस्परिक वैधानिक संबंधों की व्याख्या की गई थी। तुर्किस्तान सोवियत संघात्मक जनतंत्र को स्वायत्तता एवं स्वशासित घोषित किया गया। परन्तु उसने केन्द्रीय सत्ता को स्वीकार किया और उसके साथ संबंध स्थापित किया। कांग्रेस द्वारा नियुक्त एक आयोग केन्द्र के साथ पारस्परिक संबंधों की व्याख्या करने मास्को भेजा गया।

पांचवीं कांग्रेस द्वारा स्वायत्तता की घोषणा कम्युनिस्ट पार्टी की लेनिनवादी जातीय नीति के मौलिक सिद्धांतों की विजय का परिचायक था। इससे तुर्किस्तान में सोवियत सत्ता के सुदृढ़ीकरण के लिए आवश्यक परिस्थितियां पैदा कीं। कांग्रेस ने तुर्किस्तान सोवियत जनतंत्र की उच्च संस्थाओं — त्साइक (केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति) और सोवनारकोम (जन-कमिसार परिषद) का निर्वाचन किया। स्थानीय लोगों के प्रतिनिधि राज्य की सर्वोच्च संस्थाओं में चुने गये। नयी जन-कमिसार परिषद में स्थानीय आबादी के चार प्रतिनिधि थे। पांचवीं कांग्रेस ने तुर्किस्तान इलाके की स्वायत्तता की घोषणा करके एक बड़ा ऐतिहासिक काम पूरा किया। तुर्किस्तान की सोवियत स्वायत्तता

मध्य एशिया मे राष्ट्रीय सोवियत जनतत्रो के निर्माण की दिशा मे महत्वपूर्ण कदम था।

१९१८ म एक और महत्वपूर्ण घटना हुई। जून म तुर्किस्तान के बोल्शेविक सगठनो की, जिन्होने सयुक्त होकर रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) के अभिन्न अग के रूप मे तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना की थी, पहली काग्रेस हुई। काग्रेस द्वारा स्वीकृत प्रस्तावो मे राज्य के प्रशासन म स्थानीय श्रमजीवी जनगण की व्यापक शिरकत, पार्टी प्रसारण को सबल बनाने, सभी ओब्लास्तो, उयेज्दो और स्थानीय सोवियतो मे राष्ट्रीय मामलो की कमिसारियत स्थापित करने, देशी भाषाओ मे काग्रेस की दस्तावेज़ें प्रकाशित करने, आदि की जरूरत पर जोर दिया गया।*

तुर्किस्तान मे सभी जातियो के श्रमजीवी जनगण सोवियत निर्माणकार्य म व्यापक पैमाने पर शरीक होने लगे। तुर्क केद्रीय कार्यकारिणी समिति के ११ जुलाई, १९१८ के निर्णय के अनुसार मध्य एशिया की जातियो की भाषाओ को रूसी के साथ समान स्तर पर राजकीय भाषाए घोषित किया गया।**

ताशकन्द मे २१ अप्रैल, १९१८ को तुर्किस्तान जन विश्वविद्यालय की स्थापना की गई।*** जुलाई १९१८ मे उजबेक भाषा मे "इश्तराकिऊन" (कम्युनिस्ट) अखबार का प्रकाशन शुरू हुआ।

अक्तूबर १९१८ मे सोवियतो की छठी काग्रेस ने तुर्किस्तान स्वायत्त सोवियत समाजवादी जनतत्र के प्रथम सविधान का अनुमोदन किया। तुर्किस्तान के लिए सोवियत स्वायत्तता की घोषणा और सविधान की स्वीकृति के साथ पार्टी की लेनिनवादी नीति को कार्यान्वित करने के सघर्ष की पहली मजिल पूरी हो गई। स्वायत्त तुर्किस्तान एक बहुजातीय जनतत्र था, जिसके भीतर सभी जातियो के समान अधिकारो की रक्षा की गई थी। राजनीतिक अधिकारो की समानता के सुरक्षित होने के बाद अब

---

* "तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी के प्रस्ताव और निर्णय", ताशकन्द, १९५८। (रूसी सस्करण)

** 'नाशा गजेता' अक १४४, १७ जुलाई, १९१८।

*** 'नाशा गजेता', २३ अप्रैल, १९१८।

समाजवादी विकास तथा समाजवादी जनतन्त्रो के निर्माण की तयारी करने का काम रह गया था।

तुर्किस्तान स्वायत्त सोवियत समाजवादी जनतन्त्र की स्थापना केन्द्र के सम्पूर्ण सहयोग के वातावरण मे हुई। किसी भी अवस्था म केन्द्रीय और क्षेत्रीय प्राधिकारियो मे उनके अपने अपने अधिकारो के सवाल पर कोई झगडा नही हुआ। कुछ पश्चिमी लेखको न यह दिखाने का प्रयास किया है कि दोनो मे इस सवाल पर फूट थी। उनके लिखने का आशय यह होता है मानो तुर्किस्तानी प्राधिकारी ज्यादा अधिकार चाहते थे और केन्द्र देना नही चाहता था। इसके सबूत मे वे कहते है कि तुर्किस्तान स्वा० सो० स० जनतन्त्र के निर्माण की आज्ञप्ति जारी करने म केन्द्र ने "असाधारण" तौर पर बडी देर की। यह आज्ञप्ति, उनका कहना है, अखिल रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति द्वारा ११ अप्रैल, १९२१ को जारी की गई। उनका कहना है कि यह तभी किया गया, जब ताशकन्द "अवज्ञाकारी" नही रहा और सितम्बर १९२० म सोवियतो की क्षत्रीय काग्रेस म नया सविधान स्वीकार करके, जो "अपरत मास्को की स्वायत्तता की धारणा के अनुकूल था" पर्याप्त मात्रा म मास्को का आज्ञाकारी बन गया।*

परन्तु इस विचार म तनिक भी सत्य नही है। इसके विपरीत वास्तविकता यह है कि अक्तूबर १९१८ तक मास्को और ताशकन्द के परस्पर सबधो का सवाल तय हो चुका था और केन्द्र ने तुर्किस्तान स्वा० सो० स० जनतन्त्र को पूर्णत स्वीकार कर लिया था। अगर इस सबध म कोई आज्ञप्ति जारी नही की गई तो इसका कारण यह था कि तुर्किस्तान स्वा० सो० स० जनतन्त्र के सविधान का अनुमोदन करने के लिए किसी आज्ञप्ति की जरूरत नही थी। नया सोवियत राज्य, रू० सो० स० स० जनतन्त्र एक स्वेच्छापूर्वक सघ था जिसका निर्माण इसम शामिल होनेवाले स्वायत्त जनतन्त्रो के वार्तालाप के जरिये हुआ था। जुलाई १९१८ म सोवियतो की पाचवी अखिल रूसी काग्रेस द्वारा स्वीकृत रू० सो० स० स०

---

* A G Park *Bolshevism in Turkestan* pp 65—70

जनतन्त्र के सविधान म इसकी गुजाइश ही नही थी कि इसम शामिल होने वाले स्वायत्त जनतन्त्रो के सविधान का अनुमोदन केद्र द्वारा किया जाये, न ही सविधान ने इसका अधिकार केद्रीय कायकारिणी समिति को दिया था।*

हम यह भी जानते है कि तुर्किस्तान केद्रीय कायकारिणी समिति का प्रतिनिधि मडल जिसम क्लाईत्सकी, युसूपोव, तेग्रोदोरोविच तथा दो और व्यक्ति थे, पारस्परिक सबधो पर वार्तालाप करने मास्को गया था। प्रतिनिधि मडल लेनिन और स्वेदलोव से मिला और इसके सदस्यो ने तुर्किस्तान स्वा० सो० स० जनतन्त्र के प्रतिनिधियो की हैसियत से सोवियतो की पाचवी अखिल रूसी काग्रेस म भाग लिया। पारस्परिक सबधो के सवाल पर विचार करने के लिए राष्ट्रपति स्वेदलोव ने एक आयोग नियुक्त किया जिसमे रोज्नेगोल्त्स, यनुकीद्जे, ख्मेलनीत्स्की तथा दो और थे। कई बठको के दौरान मे, जो जुलाई १९१८ मे केद्रीय आयोग और तुर्किस्तान प्रतिनिधि मडल के बीच हुइ, बडी प्रगति हासिल की गयी थी और तुर्किस्तान स्वा० सो० स० जनतन्त्र की सीमाओ, इसकी सत्ता-सस्थाओ तथा प्रतिरक्षा और वैदेशिक मामलो आदि के सबध म कुछ सवालो पर स्थानीय अधिकारियो के नियत्रण के सवालो को सतोषजनक रूप मे हल कर लिया गया। केद्र और तुर्किस्तान के प्रतिनिधियो की तीसरी बैठक की कारवाई की जो रिपोट ४ अक्तूबर, १९१८ के "नाशा गजेता" मे छपी, उससे यह लग सकता है कि बातचीत सरल ढग से नही चल रही थी। उसमे सकेत है कि तुर्किस्तान की कायकारिणी सस्था के लिए **सोवनारकोम** का नाम सवसम्मति से नही स्वीकार किया गया और कायकारिणी समिति सगठित करने का सवाल अखिल रूसी केद्रीय कायकारिणी समिति के हवाले कर दिया गया। यह भी खबर थी कि तुर्किस्तान की "असाधारण घटनाओ" के कारण चौथी बैठक स्थगित कर दी गई और आयोग का काम वहा सामान्य स्थिति लौट आने तक के लिए रोक दिया गया। यह भी कहा गया कि तुर्किस्तान का प्रतिनिधि मडल वापस लौट रहा है।

---

*"सोवियतो की काग्रेसो की दस्तावेज़े १९१७–१९३६", मास्को, १९५९, खण्ड १, पृष्ठ ७७–७९। (रूसी सस्करण)

परन्तु प्रतिनिधि मडल तुर्किस्तान वापस नही गया। यह भी "नाश गज़ेता" के उसी अंक से मालूम हो जाता है। अक्तूबर म वह अभी मास्को मे ही था और २ अक्तूबर, १६१८ को त्रोईत्स्की और युसूपोव ने रू और तुर्किस्तान के परस्पर सबधो को तय करने के सवाल पर हुई प्रगति के बारे मे एक सदेश केंद्र से भेजा था। उन्होने इस सदेश पर तुर्किस्तान के पूर्णाधिकारी दूतो की हैसियत से हस्ताक्षर किये थे। ऐसा लगता है कि शुरू की बैठको मे, जो जुलाई १६१८ मे हुई थी, मतभेद कुछ तकनीकी बातो पर हुआ था। जनवरी १६१८ मे स्वीकृत रू० सो० स० स० जनतंत्र के सविधान मे स्वायत्त जनतत्रो के निर्माण की बात नही सोची गई थी। इसमे केवल "स्वायत्त श्रोब्लास्त सघो" की गुजाइश रखी गई थी।[1] परन्तु जीवन ने तुर्किस्तान के स्वायत्त जनतत्र को जन्म दिया था और लेनिन तथा स्वेर्दलोव ने इसकी उत्पत्ति का स्वागत किया। तुर्किस्तान के प्रतिनिधियो ने सकेत किया है कि उन्होने लेनिन, स्वेर्दलोव तथा जन कमिसार परिषद के अन्य सदस्यो की ओर से तुर्किस्तान जनतत्र मे पूर्ण विश्वास पाया। उन्होने आशा प्रकट की कि जब आयोग अपना काम पुन शुरू करेगा, तो तुर्किस्तान केंद्रीय कार्यकारिणी समिति तथा सोवनारकोम के अधिकारो तथा सगठन के सबध मे सब कुछ तय हो जायेगा। उन्होने यह भी लिखा था कि "लेनिन से निजी बातचीत के अनुसार तुर्क केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति को अधिकार था कि आज्ञप्ति मे कुछ बातो को बदल दे, जो उस क्षेत्र के लोगो की जीवन स्थितियो के बिलकुल प्रतिकूल थी।'[2]

अत इसमे कोई सदेह नही कि अक्तूबर १६१८ म सोवियतो की इस क्षेत्रीय कांग्रेस म स्वीकृत तुर्किस्तान स्व० सो० स० जनतत्र के सविधान को केंद्र की पूरी मजूरी प्राप्त थी और उसमे कोई आपत्तिजनक बात नही थी। वास्तव म इस सविधान ने और सितम्बर १६२० म सोवियतो की नवी क्षेत्रीय कांग्रेस म स्वीकृत सविधान दोनो ने केंद्रीय सबध, प्रतिरक्षा,

---

[1] 'सोवियतो की कांग्रेसो की दस्तावेज", पृष्ठ ७३।
[2] 'नाश गजेता' अक २०६, ८ अक्तूबर १६१८।

वित्त रेलवे डाक-तार सघीय सरकार के हवाले कर दिया था।* परन्तु १९१८ के सविधान म इन विषयो पर कुछ अधिकारक्षेत्रीय प्रतिबध थे जिनको १९२० के सविधान म हटा दिया गया। इन प्रतिबधो की जरूरत तुर्किस्तान म १९१८ की असाधारण स्थिति के कारण थी, जब केन्द्र से कोई स्थायी सम्पर्क नही था। परन्तु १९२० म यह स्थिति बदल चुकी थी।

तुर्किस्तान जनतत्र १९१८ म अपने जन्म के समय ही समाजवादी राज्य बन गया। १९१८ से १९२४ तक लगभग हर जगह ग्रामीण सोवियत और जन न्यायालय स्थापित किये गये, जिनमे देशी भाषाओ, रीति रिवाज और परम्पराओ का ध्यान रखनेवाले स्थानीय जातियो के लोग थे। अब प्रशासकीय सस्थाओ म बहुमत स्थानीय आबादी के प्रतिनिधियो का था। सोवियत सत्ता इस प्रकार सचमुच जनगण की अपनी सत्ता बन गई।

सोवियत प्रशासकीय सस्थाए और न्यायालय स्थापित करने म सोवियत सरकार ने स्थानीय विशेषताओ का ध्यान रखा और कुछ हालतो म पुराने रिवाजो को रहने दिया। मिसाल के लिए सोवियत न्यायालयो के साथ साथ जहा नये कानूनो के अनुसार न्याय किया जाता था, पुरानी मुस्लिम अदालत भी थी जिनके लोग आदी थे और जिनमे काज़ी लोग शरीअत (धार्मिक कानून) के अनुसार न्याय करते थे। अगर किसी व्यक्ति को काज़ी के फसले से सतोष नही होता, तो वह सोवियत न्यायालय म जा सकता था। लोग थोडे ही दिनो म अपने अनुभव से सोवियत कानूनो की श्रेष्ठता के कायल हो गये, जो शोषितो की सुरक्षा करते थे और काज़ी की अदालतो का काम धीरे धीरे पच फैसला करना हो गया और फिर वे बिल्कुल लुप्त हो गइ।

खीवा और बुखारा मे सोवियत जनतत्रो का निर्माण

प्रथम विश्व युद्ध के दौरान खीवा के लोगो की आर्थिक स्थिति तेजी से बिगडने लगी। रूस से खाद्यान्न के आयात म आधे से भी ज्यादा की

---

*"सोवियतो की काग्रेसो की दस्तावेजे", पृष्ठ २७९, ४५०।

कमी हो गई तथा अन्य निर्मित सामानो के आयात मे भी कमी हुई। इससे लोगों की कठिनाइयां बहुत बढ गईं। खाद्य पदार्थो का बडा अभाव हो गया। किसान करों के भारी बोझ मे त्राहि त्राहि कर रहे थे, जो १९१८ और १९२० के बीच और बढ गया। उन दिनों खीवा पर जुनैद खान का प्रभुत्व था। खान के अधिकारी और डाकू दोनों जनता को लूटा करते। खान शासित प्रदेश मे अनेक जातियो के लोग थे, जैसे उज्बेक, तुर्कमान, कराकल्पाक और कजाख। शायद ही कभी ऐसा होता हो कि उनमे आपस मे शांति बनी रहती हो। अक्तूबर क्रांति से पहले के दशक मे राष्ट्रीय सवाल बहुत तीव्र हो उठा था। उज्बेक अभिजात वर्ग के लोग उज्बेक श्रमजीवियों का शोषण तो करते ही थे, वे तुर्कमानों और कराकल्पाकों का भी दमन करते थे।

पूंजीवादी अस्थायी सरकार ने जिसे फरवरी क्रांति के फलस्वरूप सत्ता मिली थी, उज्बेकों, तुर्कमानों, कराकल्पाक देहकानो तथा शहरी गरीबों के विद्रोहों के विरुद्ध अपनी सेनाओं के जरिये खान के निरंकुश राज का समर्थन किया। खान राज मे रहनेवाले किसान और कारीगर स्वतःस्फूर्त ढंग से ही खान के अधिकारियों के निरंकुश शासन और सामंती बाई लोगों और मुल्लाओं के शोषण के विरुद्ध विद्रोह किया करते। वे बाई और बड़े लोगों की संपत्ति जला देते और उनके मवेशी और खाद्यान्न लूट ले जाते। २२ मई, १९१७ को खान राज की राजधानी खीवा के दरिद्र लोगों ने आटा और चावल लूट लिया। खीवा स्थित कज्जाक पलटन ने "भूख के बलवे" को कडाई से कुचल दिया।

मई-जून १९१७ मे देहकानो ने कुनिया उरगेंच इलाके मे सशस्त्र विद्रोह शुरू किया। आंदोलन इतना प्रबल हो उठा कि खान को अस्थायी सरकार की सहायता लेनी पडी। उसने जाइत्सेव की कमान मे कज्जाक टुकड़ी भेजी। उसने जुनैद खान के नेतृत्व मे तुर्कमान और बाई फौजी टुकड़िया संगठित करने मे भी सहायता की। २० सितम्बर, १९१७ को जाइत्सेव और जुनैद खान के बीच एक समझौता हुआ कि वे ख्वारज्म के जनसाधारण मे क्रांतिकारी आंदोलन के विरुद्ध मिलकर संघर्ष करेंगे।

रूस और तुर्किस्तान मे अक्तूबर क्रांति की विजय खीवा के खान के

विरुद्ध जनता के क्रांतिकारी संघर्ष व भावी विकास के लिए बहुत महत्वपूर्ण थी। खान शासित प्रदेश अब उपनिवेश नहीं रहा और जनगण को अब खान के निरंकुश राज से मुक्ति प्राप्त करने के काम में नये प्रशासन की पूरी सहानुभूति और समर्थन का विश्वास था। जुनैद खान के सैनिकों और कज्जाकों के आतंक के बावजूद शहरों और किश्लाकों (गावों) के श्रमजीवी जनगण निरंकुश शासन और दमन के विरुद्ध उठ खड़े हुए। जन-संघर्ष की इन स्थितियों में खीवा की कम्युनिस्ट पार्टी का जन्म हुआ, जिसने जनगण को खान प्रशासन की निरंकुशता के विरुद्ध संगठित करना शुरू किया।

सोवियत सरकार ने प्रारम्भ में ही घोषित कर दिया कि वह खीवा की स्वाधीनता और प्रभुसत्ता को स्वीकार करती है। रूसी सो० स० जनतंत्र तथा तुर्किस्तान स्वा० सो० स० जनतंत्र ने अपनी ओर से खीवा से अच्छे पड़ोसियों जैसे संबंध विकसित करने की इच्छा प्रकट की। परन्तु खीवा के प्रतिक्रियावादी शासक हल्के सोवियत सत्ता से अपनी अन्धी घृणा तथा खीवा के लोगों पर उसके बढ़ते प्रभाव के डर के कारण, साम्राज्यवादी खेमे में जा मिले।

शुरू ही से खीवा मध्य एशिया में सोवियत विरोधी प्रतिक्रांतिकारी केन्द्र बन गया, जहां सफेद गार्ड वाले, मेंशेविक, समाजवादी क्रांतिकारी, पूंजीवादी राष्ट्रवादी तथा अन्य प्रतिक्रांतिकारी तत्व चारों ओर से जमा कर आने लगे। यहां ब्रिटिश साम्राज्यवाद के एजेंट उनसे आ मिले और उनके सहयोग से सोवियत मध्य एशिया पर हमले की तैयारी करने लगे। उनकी सोवियत-विरोधी योजनाओं में जाइत्सेव को महत्वपूर्ण भूमिका सौंपी गई। जाइत्सेव कोकान स्वायत्ततावादियों तथा आक्रामक कज्जाक नेता दूतोव से भेंट करने के बाद सोवियत सत्ता के विरुद्ध सशस्त्र आक्रमण में जुनैद खान का साथ देने पर राजी हो गया। उनकी योजना यह थी कि चारजुई पर कब्जा किया जाय और तब रेल लाइन के किनारे बाजार कुर्ग और जिज्जाक पर कब्जा करके ... कोकान स्वायत्ततावादियों की सेनाएं उनसे आ मिलेंगी। ... स्वायत्त सो० स० जनतंत्र के आन्तरिक ... म ...

तख्ता उलटने का काम भी जुनैद खान के सुपुर्द किया गया। खीवा के प्रतिक्रांतिकारियों का स्थायी सम्पर्क ताशकन्द के गुप्त सोवियत विरोधी संगठन से था, जिसे तुर्किस्तान सैनिक संगठन कहा जाता था और जिसकी स्थापना अमरीकी कौंसल, फ्रांसीसी एजेंट कस्तान्ये और अंग्रेज कर्नल वेली की सक्रिय शिरकत से हुई थी। जुनैद खान की सेनाओं ने अश्काबाद में प्रतिक्रांतिकारी उलट फेर संगठित करने में सक्रिय भाग लिया।* १८ नवम्बर, १९१८ को जुनैद खान आमू दरिया क्षेत्र में सोवियत इलाके में घुस गया और लूट मार करने लगा। उसने किपचाक और चिम्बाई पर कब्जा कर लिया और तुर्तकुल (उस समय पेत्रो अलेक्सान्द्रोव्स्क) को घेर लिया। तुर्तकुल के वीर रक्षकों ने जुनैद खान को भारी क्षति पहुंचाई और उसे विवश होकर अपना ११ दिन का असफल घेरा उठा लेना पड़ा। जनवरी १९१९ में जुनैद खान ने फिर सोवियत क्षेत्र पर आक्रमण किया, मगर फिर उसे शिकस्त खानी पड़ी। अप्रैल १९१९ में उसने सोवियत सरकार से शांति का आग्रह किया। रू० सो० स० स० जनतंत्र तथा खीवा के प्रतिनिधियों के बीच ९ अप्रैल, १९१९ को तख्ता किले में एक समझौते पर हस्ताक्षर हुए, जिसका अनुमोदन तुर्किस्तान स्वा० सो० स० जनतंत्र की केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति और खान सैयद अब्दुल्लाह ने मई १९१९ में किया। इस समझौते के अनुसार जुनैद खान को रू० सो० स० स० जनतंत्र के विरुद्ध कोई सशस्त्र कारवाई नहीं करना था। समझौते में स्थल और जल मार्गों से व्यापार की स्वतंत्रता और सुरक्षा तथा राजनयिक प्रतिनिधि मंडलों की अदला-बदली का भी प्रबंध था।**

परन्तु खीवा ने इस समझौते का पालन कभी नहीं किया। सोवियत सरकार ने एक व्यापार संधि करने का कई बार आग्रह किया, मगर खीवा ने उसे अस्वीकार कर दिया। जुनैद खान ने सोवियत विरोधी हरकतें कभी नहीं छोड़ीं। जून १९१९ में उसने नई लामबन्दी का आदेश दिया और कोलचाक से संपर्क स्थापित किया। उसी महीने खीवा और बुखारा के बीच

---

* उज्बेक सोवियत समाजवादी जनतंत्र का इतिहास", खण्ड २ पृष्ठ १८१।

**वही, पृष्ठ १८३-१८४।

प्रतिनिधि मडलो का आदान प्रदान हुआ। अगस्त म उराल के कज्जाको ने सोवियत सरकार क विरुद्ध बगावत का झडा उठाया और बाई लोगो और कुलको की सहायता से चिम्बाई और नुकूस पर कब्जा कर लिया। आमू-दरिया की सरकार की स्थापना की गई जिसका प्रधान एक कुलक फेलिचेव था। जुनैद खान ने इसे तुरत मायता दे दी। ट्रासकास्पियन इलाके म सफेद गार्ड का १९१९ के अत म सफाया हो गया तो सभी समाजवादी क्रातिकारी और मशेविक अशकाबाद से भागकर खीवा पहुचे, जहा वे जुनैद खान के सलाहकार बन गये।

जब जुनैद खान इस प्रकार सोवियत सरकार क विरुद्ध षड्यत्र कर रहा था, तो खीवा म देहकानो का क्रातिकारी आदोलन बढता जा रहा था। देहकानो और भूमिहीन किसानो के विद्रोही दस्तो ने तुतकुल को अपना केद्र बनाया। मूजे और कूइबिशेव के नेतृत्व म तुर्क आयोग ने खीवा के कम्युनिस्टो रहमान प्रिमघतोव, अहमेजान इब्राहीमोव, कुर्बान बकनियाजोव, अब्दुल्लायेव, न० सलापाव आदि की सहायता की कि वे खीवा के क्रातिकारी आदोलन को सगठित कर। उन्होने खीवा नौजवान सगठन के दक्षिणपथियो का परदा फाश किया जो जुनैद खान की मदद करने लगे थे। वामपक्षी नौजवान खीवाई जैसे पहलवान नियाज़ युसूपोव, नजीर शालिकारोव, इत्यादि स्थानीय बुद्धिजीवियो तथा पूजीपतियो क मध्यम तबके के साथ-साथ सामती उत्पीडन और अत्याचार के विरुद्ध सघर्ष कर रहे थे। किसान और कारीगर नौजवान खीवाई इस आदोलन से अलग होकर खीवा की कम्युनिस्ट पार्टी म शामिल हो गये।

खीवा क कम्युनिस्ट सशस्त्र क्रातिकारी स्वयसेवको का सगठित करने म सक्रिय हो गये। उनके निदेशन म नवम्बर १९१९ मे कूनगिरात, ख्वाजैली इलिअलिस्क और दुनिया उरगच की जमीदारियो म सशस्त्र विद्रोह हुए। सोवियत सरकार ने खीवा क लोगो के आग्रह पर सफेद गार्ड के विरुद्ध सघर्ष म सहायता करने का फैसला किया। २२ दिसम्बर, १९१९ को सोवियत सेना ने खीवा म प्रवेश किया। २ फरवरी १९२० को खीवा म क्राति विजयी हुई। जुनैद खान की कठपुतली सैयद अब्दुल्लाह खान के प्रशासन का अत कर दिया गया। २ फरवरी, १९२० को खीवा की

कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा आयोजित एक विशाल सार्वजनिक सभा ने खान के अत्याचार के अंत तथा जन-सत्ता की स्थापना का अभिनन्दन किया। सभा ने खीवा के जनगण को खान और ब्रिटिश साम्राज्यवादियों के जुए से मुक्ति दिलाने में लाल सेना द्वारा दी गई सहायता के लिए कृतज्ञता प्रकट की। अस्थायी क्रांतिकारी सरकार ने कुरूलताई (जन प्रतिनिधियों की कांग्रेस) आयोजित करने की तैयारी की।

जन प्रतिनिधियों की प्रथम अखिल-ख्वारज्म कुरूलताई का अधिवेशन अप्रैल १९२० में हुआ और उसने भूतपूर्व खीवा खान प्रशासन को ख्वारज्म सोवियत जनवादी जनतंत्र घोषित किया। कांग्रेस ने केंद्रीय कार्यकारिणी समिति का निर्वाचन किया और सरकार बनायी, जिसे अवामी नाज़िरों की परिषद कहते थे। जन प्रतिनिधियों की पहली कुरूलताई ने ख्वारज्म सोवियत जनवादी जनतंत्र के प्रथम संविधान का अनुमोदन किया, जिसने केंद्रीय तथा स्थानीय क्षेत्रों में सारी सत्ता मेहनतकशों की सोवियतों के सुपुर्द कर दी। कुरूलताई सत्ता की सर्वोच्च संस्था थी। संविधान ने खीवा के जनगण के लिए भाषण, अखबार और सभा इत्यादि की स्वतंत्रता की गारंटी दी। खान और उसके उच्चाधिकारियों की सम्पत्ति, जो क्रांति के समय जब्त कर ली गई थी, सार्वजनिक सम्पत्ति घोषित कर दी गई। १८ वर्ष और उससे अधिक आयु के सभी लोगों को वोट का अधिकार दिया गया। इससे वंचित थे प्रतिक्रांतिकारी, खान और उसके रिश्तेदार, भूतपूर्व खान प्रशासन के उच्चाधिकारी और बड़े जमींदार। ख्वारज्म सोवियत जनवादी जनतंत्र के संविधान ने सभी जातियों के समान अधिकारों की घोषणा की।

खीवा की क्रांति की अपनी खास विशेषताएं थीं। औद्योगिक मजदूरों की संख्या बहुत कम थी और अधिकांश लोग देहकान थे। इसलिए पहली अवस्था में क्रांति समाजवादी नहीं, बल्कि जनवादी क्रांति था। उसने श्रमजीवी जनता का क्रांतिकारी जनवादी अधिनायकत्व स्थापित किया। पहली अवस्था की क्रांति को दूसरी समाजवादी अवस्था में संक्रमण का तैयारा करना थी। पूंजीवादी-जनवादी क्रांति का कार्यभार पूंजीपति वर्ग को नहीं बल्कि जनता के क्रांतिकारी अधिनायकत्व को पूरा करना था।

यह किसान जनता ने अपनी सोवियत सत्ता की संस्थाओं के जरिये किया।

क्रांति के बाद खीवा में युसूपोव के नेतृत्व में जो प्रथम सरकार बनी, उसपर भूतपूर्व नौजवान खीवाई तत्वों का कुछ रंग चढ़ा हुआ था, जो सोवियत सरकार के कार्यभारों के विरोधी थे। उसमें अनेक पूंजीवादी राष्ट्रवादी थे, जो ख्वारज्म को सोवियत रूस से अलग रखना और उसे अंग्रेजों का उपनिवेश बना देना चाहते थे। उन्होंने भूमि-सुधार में बाधाएं डालीं। खान की जब्त की हुई जमीनें बाई लोगों और साहूकारों के हवाले कर दी गईं। वक्फ की जमीनें ज्यों की त्यों रहने दी गईं और देहक़ानों ने जब उनपर कब्जा करना चाहा, तो उन्हें सज़ा दी गई। नई सरकार ने उज़्बेकों और तुर्कमानों में जातीय झगड़ा भी उठा दिया।

अतः खीवा की कम्युनिस्ट पार्टी के सामने एक गम्भीर कार्यभार था। और वह था भूमि और पानी की समस्या तथा जातीय संबंधों की समस्या का क्रांतिकारी समाधान ढूंढ़ने का कार्यभार। वह बैरी लोगों को निकाले बिना इस कार्यभार को पूरा नहीं कर सकती थी। रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) के तुर्क ब्यूरो तथा तुर्क आयोग की सहायता से इसका प्रयास शुरू हुआ। पार्टी में अधिकाधिक गरीब लोगों को शामिल किया गया और पूंजीवादी राष्ट्रवादियों के विरुद्ध संघर्ष छेड़ दिया गया। ६ मार्च, १९२१ को खीवा में मेहनतकश लोगों की आम सभा की गई, जिसने बैरी लोगों को सरकार से निकालने की मांग की। दूसरी क़ुरुलताई के अधिवेशन से पहले एक नई अस्थायी क्रांतिकारी सरकार बनायी गई।

मई १९२१ में दूसरी क़ुरुलताई का अधिवेशन हुआ। कुल ३४० प्रतिनिधियों में बड़ा बहुमत गरीब और मध्यम देहक़ानों का था। उसने वक्फ की जमीन को राज्य से अलग किया और भूमि के स्वामित्व की हदबन्दी उतने पर कर दी जितने पर स्वयं एक व्यक्ति काम कर सकता था। चौदह हज़ार तनाब भूमि देहक़ानों में वितरित की गई। दूसरी क़ुरुलताई ने बड़े उत्साह के साथ रू० सो० स० स० जनतंत्र के साथ सैनिक और राजनीतिक समझौते का अनुमोदन किया। रू० सो० स० स० जनतंत्र ने खीवा के श्रमजीवी जनगण के आर्थिक, राजनीतिक और

सास्कृतिक पिछडेपन को दूर करने मे उनकी बडी सहायता की। रू० स० स० स० जनतत्र ने खीवा जनतत्र की स्वाधीनता और प्रभुसत्ता को स्वीकार किया और भूतपूव खान शासित प्रदेश मे पहले की रूसी सरकारो को जो औपनिवेशिक अधिकार और सुविधाए प्राप्त थी, उन सब का त्याग करने की घोषणा की। फिर उसने खीवा मे अपनी सारी सम्पत्ति, कारखाने, जहाज और जहाज आदि जनतत्र की नई सरकार के हवाले कर दिया। सोवियत सरकार ने जनगण का आर्थिक तथा सास्कृतिक स्तर ऊचा करने म ख्वार सोवियत जनवादी जनतत्र की वडी सहायता की। उसे सोवियत सरकार से ५० करोड रूबल की सहायता एकमुश्त मिली। रूस से बडी सख्या मे प्रशिक्षक, इजीनियर, डाक्टर और शिक्षक आदि भी वहा भेजे गए थे।

खीवा की तरह बुखारा में भी सामती निरकुश राज था और वह जारशाही रूस का सरक्षित राज्य था। फ़रगाना के बाद जारशाही रूस के लिए वह कपास का दूसरा बडा स्रोत था। रूस को इसके कुल निर्यात मे ४० प्रतिशत कपास था। अपनी कपास का ६० प्रतिशत वह रूस को भेज दिया करता था। बुखारा मे पूजीवादी ढग का कोई बडा निमाण-उद्योग नही था। जो ५२ फैक्टरिया थी, उनमे २६ रूई शोधन का काम करती थी। आबादी का बहुत बडा हिस्सा किसान था जिनकी हालत दिनादिन बिगडती जा रही थी। बुखारा मे मुस्लिम धार्मिक नेताओ का बडा प्रभाव था। मकतबो और मदरसो म कोई २० हजार विद्यार्थी पढते थे।

प्रथम रूसी क्राति के विचारो के प्रभाव म बुखारा मे जदीदियन के नाम से एक प्रसिद्ध पूजीवादी राष्ट्रवादी आदोलन का विकास हुआ। परन्तु जदीदियो का काम सास्कृतिक तथा शैक्षणिक क्षेत्रो तक ही सीमित था। उन्होने विद्यमान व्यवस्था के खिलाफ लडने का बीडा कभी नहीं उठाया। उन्हे अमीर तथा उसके धर्मभीरु वजीरो की न्यायबुद्धि और विवेक पर बडा भरोसा था। रूस की फरवरी क्राति के बाद ही जदीदियो ने, ज

* 'उज़बेक सोवियत समाजवादी जनतत्र का इतिहास', खण्ड २, पृष्ठ १४१।

नौजवान तुर्कों की देखा देखी अपने को नौजवान बुखारी कहने लगे थे, आर्थिक सुधारों की माग की। उनकी माग थी कि कर ठीक-ठीक तय कर दिये जायें और मजलिस (ससद) का आयोजन किया जाये। अमीर ने ७ अप्रैल, १९१७ को कुछ सुधारो का वादा करते हुए जो घोषणापत्र जारी किया, उसे कभी पूरा नही किया। जदीदी क्राति का नही, सुधारो का समर्थन करते थे।

अक्तूबर क्राति की विजय ने बुखारा के लोगो को रूसी औपनिवेशिक शोषण से मुक्ति दिला दी। नवम्बर १९१७ मे बुखारा की सभी रूसी बस्तियो–नया बुखारा, चारजूए, केरकी और तेरमीज़–मे सत्ता सोवियतो के हाथ मे आ गई। बुखारा की धरती पर सोवियतो का जाल सा बिछ गया, जो बुखारा मे क्रातिकारी आदोलन के भावी विकास मे बहुत महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ।

शुरू ही से सोवियत सत्ता के प्रति अमीर का रुख शत्रुतापूर्ण था। नवम्बर १९१७ और मार्च १९१८ के बीच उसने तीन बार सेना के लिए लामबन्दी का आदेश दिया। उसने ओरेनबुर्ग कज्ज़ाकों के नेता दूतोव से तथा कोकान के पजीवादी राष्ट्रवादी स्वायत्ततावादियो से भी सम्पर्क स्थापित किया। उधर ईरान मे अग्रेज़ी सेना के कमाण्डर मैलेसन से भी उसका सबध था। अमीर की सेना मे कोई २,००० अफगान भाडे के सिपाही अग्रेज अफसरो की कमान मे काम करते थे। १९१८ के प्रारम्भ मे अमीर ने रेलवे लाइन के किनारे किनारे ३० हज़ार की सेना तैयार कर ली, जो तुर्किस्तान मे सोवियत सत्ता के लिए बडा खतरा बनी हुई थी। सोवियत सरकार ने अमीर से सामान्य सबध स्थापित करने का हर सम्भव प्रयत्न किया और इस उद्देश्य से दिसम्बर १९१७ मे एक राजनयिक मडल बुखारा भेजा। लेकिन अमीर ने उससे भेंट नही की।

६ दिसम्बर १९१७ को नौजवान बुखारियो का एक प्रतिनिधि मडल ताशकन्द पहुचा और उसने सोवियत अधिकारियो को बुखारा मे क्राति की तैयारियो की सूचना दी, जिसमे कोई ३० हज़ार सशस्त्र आदमियो के भाग लेने की आशा थी। बुखारा की जनता द्वारा क्रातिकारी कारवाई तैयारी की इन अतिशयोक्तिपूर्ण सूचनाओ से गुमराह होकर ५

जन-कमिसार परिषद ने बुखारा के जनगण को असामयिक सहायता दन का गलत फैसला किया। २८ फरवरी, १९१८ को तुर्किस्तान का जन कमिसार परिषद के अध्यक्ष कोलेसोव ५००–६०० लाल गार्ड वालों को लेकर बुखारा की ओर बढे। उन्होंने रूसी बस्तियो मे सोवियत सत्ता को मान्यता देने तथा नौजवान बुखारिया के प्रतिनिधियो को लेकर एक कायकारिणी समिति का निर्माण करन और इस तरह प्रशासन के जनवादीकरण की माग की। अमीर ने उनकी माग को अस्वीकार कर दिया, जिसके बाद २ माच, १९१८ को कोलेसोव ने अपनी सैनिक कारवाई शुरू कर दी। उनकी कमान मे कुल २,००० आदमी थे। अमीर ने समय लेने के लिए युद्ध विराम का प्रस्ताव किया और इस बाच युद्ध की तैयारी की। उसने समरकद से रेलवे लाइन काट दी और काफिरों के विरुद्ध "जेहाद" छेड दिया। कोलेसोव को समरकन्द की तरफ पीछे हटना पडा और तुर्किस्तान से ताजी कुमक पहुचने की बदौलत सर्वनाश से बच गये। अमीर को किजिल-तेपे मे २५ माच, १९१८ का समझौता पर हस्ताक्षर करने पडे। वह सेना की लामबन्दी को बद करने, तमाम रूसी प्रतिक्रातिकारियो का बुखारा के इलाके स निकालने, विनष्ट रेल लाइन की मरम्मत करने और बुखारा म एक सोवियत कमिसार रखने पर राजी हो गया। इस प्रकार अमीर के शासन का तख्ता उलटने का प्रथम प्रयास विफल हुआ। जनता ने नौजवान बुखारिया का साथ नहीं दिया। अभी वह बडी हद तक मुल्लाओं के प्रभाव मे थी। लेनिन ने माच १९१९ म रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की आठवी कांग्रेस म इसका चर्चा की और पिछडे हुए इलाकों मे क्रांतिकारी परिवतन लागू करने म सावधानी से काम लेने पर जोर दिया।*

किजिल-तेपे के समझौते से तुर्किस्तान को आवश्यक सुरक्षा प्राप्त नहीं हुई, क्योंकि अमीर माच की घटनाओं के बाद अंग्रेज साम्राज्यवादियों के और निकट हो गया। अप्रैल और मई १९१९ मे कई सौ ऊटों पर लदकर अंग्रेजी अस्त्रास्त्र अफगानिस्तान के रास्ते बुखारा पहुचाये गये। अन्य

* V I Lenin, *Collected Works* vol 29 p 195

म अमीर को २० हज़ार राइफ़ले मिली और मई म आठ हज़ार और।* १६१६ के वसत तक अमीर की सेना मे अंग्रेज प्रशिक्षको की सख्या ६०० तक पहुच गई थी।** १६१६ की गर्मियो मे अमीर न ट्रासकास्पियन के सफेद गाड वालो से मिलकर और अंग्रेजो की प्रत्यक्ष शिरकत से फेरगी पर सशस्त्र धावा किया।

इस असफल अभियान का नेतृत्व तुकिस्तान का भूतपूर्व बोल्शेविक युद्ध मत्री ग्रोसिपोव और अंग्रेज करनल लोमवाट कर रहे थे। अक्तूबर १६१६ म करनल बेली ताशकन्द से बुखारा पहुचा और सोवियत तुकिस्तान क विरुद्ध कारवाई की योजना तैयार करने लगा। स्वय अमीर ने लीग आफ नेशन्स के नाम एक स्मृतिपत्र म स्वीकार किया कि वह अफगानिस्तान, खीवा और अंग्रेजा से मिला हुआ है।***

अमीर के आक्रामक इरादो के विपरीत तुर्किस्तान के बोल्शेविक उसके प्रति शान्तिपूर्ण नीति पर अमल कर रहे थे। सोवियत सरकार ने हमेशा यही कोशिश की कि अमीर के बुखारा के साथ अच्छे पडोसियो जैसे सबध स्थापित हो। तुर्किस्तान की सोवियतो की पाचवी कांग्रेस ने बुखारा की स्वतत्रता की घोषणा की और आगे चलकर बुखारा को काफी भौतिक सहायता भी दी गई। सोवियत सरकार न अपनी अत्यत कठिनाई के दिनो मे भी १६१८ की पतझड म बुखारा का डेढ़ करोड रुबल कर्ज देकर वित्तीय तबाही से बचा लिया।**** परन्तु अमीर ने सोवियत सरकार के प्रति अपनी दुश्मनी नही छोडी। उसने ऊची दर पर ज़ारशाही मुद्रा खरीदी और उसे भारत की मडी म इस्तेमाल किया। इसी कारण सोवियत मुद्रा का भाव गिर गया और इससे बुखारा और सोवियत तुर्किस्तान के वित्तीय

---

*"उज़्बेक सोवियत समाजवादी जनतत्र का इतिहास' खण्ड २ पृष्ठ १६६।

**व० इ० इसकदारोव, "सोवियत तुर्किस्तान म हस्तक्षेप करने के लिए ब्रिटेन द्वारा बुखारा अड्डे की तैयारी", सोवियत विज्ञान अकादमी के ब्रावज़ान, १६५१, पृष्ठ ४३। (रूसी सस्करण)

***वही, पृष्ठ ४१, ४३।

****वही, पृष्ठ ५०।

सबधो मे उलझन पैदा हुई। अमीर के शत्रुतापूर्ण रवैये की वजह से बुखारा और सोवियत तुर्किस्तान के बीच व्यापार बन्द हो गया। सोवियत सरकार ने बुखारा के कपास के बदले मे कपास का तेल और चावल देने का प्रस्ताव किया, परन्तु बुखारा के शासक हल्कों ने इसे अस्वीकार कर दिया। ब्रिटेन तथा अन्य साम्राज्यवादी शक्तियां सोवियत देश की आर्थिक नाकाबंदी कर रही थी। इसमे उनकी सहायता करने के लिए अमीर ने सोवियत तुर्किस्तान से व्यापार करने से इनकार कर दिया और अपना माल, मुख्यत कपास और ऊन ब्रिटेन और अफगानिस्तान के हाथ हथियारों के बदले बेचा। अमीर के अधिकारियों ने बुखारा मे सोवियत प्रतिनिधियों के सामान्य कार्यकलाप मे बाधाएं डाली। उन्होने ट्रासकास्पियन इलाके के सशस्त्र गार्ड वालों को सभी आवश्यक रसद पहुचाई और उनके विरुद्ध सोवियत कार्रवाइयों मे बाधा डालने के लिए रेलवे लाइनें और तार के खम्भे उखाड़ फेंके और देहकानों को मना कर दिया कि वे सोवियत सैनिकों को खाना बेचने के लिए रेलवे लाइन के निकट नही आया करें।

तुर्क आयोग ने ताशकन्द पहुचकर बुखारा के मामले की ओर भी ध्यान दिया। ७ जनवरी १९२० को आयोग के सदस्य बुखारा गये और अमीर सैयद अलीम खान से मिले। उन्होंने उसे सोवियत रूस से घनिष्ठ सबध कायम करने की आवश्यकता समझाने की कोशिश की, जो एकमात्र बुखारा की पूर्ण स्वतत्रता तथा आर्थिक और सांस्कृतिक विकास की सामान्य स्थितियों की जमानत दे सकता था। फिर १४ मार्च, १९२० को कूज तुर्क आयोग के अन्य सदस्यों के सग बुखारा आये और अमीर से भेंट की। परन्तु अमीर-ए-बुखारा को सही रास्ते पर लाने के ये सारे प्रयास विफल हुए और सोवियत सरकार के सभी शान्तिपूर्ण प्रस्ताव अस्वीकार कर दिये गये। मुस्लिम मन्ताओं को बोल्शेविकों के विरुद्ध धर्मांधता की भावना उभारने की खुली छूट दे दी गई। अमीर ने मशहद मे अग्रेजों से घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित किया और अफगानिस्तान से सैनिक सधि की। अगस्त १९२० मे उसने ४० हजार की सेना तैयार की और बोल्शेविकों के विरुद्ध जेहाद का फतवा जारी किया।

ऐसी स्थिति मे बुखारा की आम जनता के सामने यह बात स्पष्ट हो

बहुत बढ़ गई। पार्टी की दूसरी कांग्रेस ताशकन्द मे २६-२७ जून, १९१९ को हुई। इसने पार्टी का आह्वान किया कि जनता मे अपने प्रचार आन्दोलन को और सबल बनाने और उसके दायरे मे जनता के विभिन्न हिस्सों को खीच लाने के लिए ज्यादा मुस्तैदी से कदम उठाये जायें। न० हुसनोव पार्टी की केन्द्रीय समिति के नये अध्यक्ष चुने गये। तीसरी पार्टी कांग्रेस के दिन तक, जो ताशकन्द मे २६-३१ दिसम्बर, १९१९ को हुई, पार्टी की ३३ शाखाए काम कर रही थी, उनमे २४ देहकानो और कारीगरो म थी और १३ सेना मे।* तीसरी पार्टी कांग्रेस न पार्टी प्रचार और आन्दोलन को तेज करने पर जोर दिया और इस उद्देश्य से "ताग" (सवेग) और "कुतुलूश" (आजादी) नामक की पत्रिकाए ताशकन्द और नये बुखारा से प्रकाशित की गईं। १९२० की गर्मियो तक बुखारा मे क्रान्तिकारी संकट परिपक्व हो चुका था। बुखारा के मजदूर, किसान और कारीगर अमीर के घृणित तथा अत्याचारी शासन का तख्ता उलटने को तैयार थे। उस समय तक ४३ पार्टी इकाइया काम कर रही थी और पार्टी सदस्यो की संख्या ५,००० तक पहुच गई थी। पार्टी हमदर्दों की संख्या २०,००० था। स्वय पुराने बुखारा मे २१ इकाइया थी जिनमे १,५०० सदस्य थ।** बुखारा के कम्युनिस्ट अमीर की सेना म भी सक्रिय थे। इरगाश मुसाबायेव न बड़ी सुयोग्यता से सेना मे पार्टी प्रचार किया। अमीर की सेना के भगोड़ो को लेकर समरकन्द मे एक सैयदल सगठित किया गया। पार्टी की चौथी कांग्रेस चारजूए म १६ स १९ अगस्त, १९२० को हुई। उसन अमीर की सत्ता के विरुद्ध सशस्त्र क्रातिकारी कार्रवाई करने का फैसला किया।

अभी तक नौजवान बुखारियो के साथ बुखारा की कम्युनिस्ट पार्टी के सबध की बाबत कुछ नही कहा गया है। मार्च १९१८ की असफलता के बाद नौजवान बुखारियो की पार्टी का सितारा कुछ दिनो के लिए डूब गया। परतु जनवरी १९२० म वह तुर्किस्तान की भूमि पर फिर उभरा। तुर्किस्तान म अतर्राष्ट्रीय प्रचार की परिषद न ६ फरवरी, १९२० को उस

* "उज़बेक सोवियत समाजवादी जनतत्र का इतिहास", खण्ड २ पृष्ठ १७०।

** वही, पृष्ठ १७२।

कायकलाप को मजूर किया और तुर्किस्तान आयोग ने इस मजूरी का अनुमोदन किया। पूव मे अतर्राष्ट्रीय प्रचार की परिषद की २५ माच, १९२० की बठक म बुखारा की कम्युनिस्ट पार्टी और नौजवान बुखारियो के सबध के सवाल पर भी विचार किया गया था। परिषद ने बुखारा के कम्युनिस्टो के लिए यह आवश्यक कर दिया था कि वे अमीर के खिलाफ सघष को नौजवान बुखारिया की सहमति स चलाए। परन्तु बुखारा की कम्युनिस्ट पार्टी इस फसले स खुश नही थी। उसकी राय म नौजवान बुखारी पार्टी पूजीवादी राष्ट्रवादिया की पार्टी थी और उसका दृष्टिकोण सोवियत विरोधी और सव इसलामवादी था। पूव म अतर्राष्ट्रीय प्रचार की परिषद और तुक आयोग क विदेशी मामला के विभाग का सयुक्त अधिवेशन १९ जून, १९२० को आयोजित हुआ। उसने नौजवान बुखारी पार्टी के बारे म बुखारा की कम्युनिस्ट पार्टी के इस मूल्याकन स सहमति प्रकट की। उसने इस बात का समथन किया कि नौजवान बुखारी पार्टी भग कर दी जाय और उसके अधिक प्रगतिशील सदस्य कम्युनिस्ट पार्टी म शामिल हो जायें। उसने नौजवान बुखारियो को वित्तीय सहायता केवल अतर्राष्ट्रीय प्रचार की परिषद के नियत्रण म प्रचार काय के लिए देने की स्वीकृति दी। तुक आयोग की ३० जून, १९२० की बठक म अमीर के अत्याचारी राज का तख्ता उलटने का फैसला किया गया। उसने नौजवान बुखारिया से सबध विच्छेद करने का नारा दिया और अतर्राष्ट्रीय प्रचार की परिषद को आदश दिया कि वह कवल बुखारा की कम्युनिस्ट पार्टी का समथन कर। आयोग न कहा कि नौजवान बुखारी फरवरी क्राति की पार्टी हैं और बुखारा के कम्युनिस्ट अक्तूबर क्राति की पार्टी हैं।*

परन्तु अतर्राष्ट्रीय प्रचार की परिषद सभी प्रगतिशील और जनवादी शक्तिया क व्यापक मोरचे का समथन करने के पक्ष म थी। उनकी राय म नौजवान बुखारिया की पूरी पार्टी न हाथ और सत्ता बुखारा की क्राति के लिए हानिकारक था। नौजवान बुखारी पार्टी न केन्द्रीय समिति न लेनिन क नाम भी एक पत्र [illegible] पार्टी क कायक्रम का आधा पर

*वही, पृष्ठ १७।

अनुरोध किया। रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) का सागठनिक ब्यूरा इस नतीजे पर पहुंचा कि नौजवान बुखारियों को उनके वर्तमान कार्यक्रम के आधार पर कम्युनिस्ट पार्टी में शामिल करना सम्भव नहीं है, मगर उसने अमीर की सत्ता के विरुद्ध क्रांतिकारी संघर्ष में उनसे सहयोग करने की सिफारिश की।

इस सिफारिश की रोशनी में तुर्किस्तान आयोग, अंतर्राष्ट्रीय प्रचार की परिषद नौजवान बुखारियों तथा बुखारा की कम्युनिस्ट पार्टी के प्रतिनिधियों की संयुक्त बैठक में दोनों पार्टियों के विलयन के सवाल पर विचार किया गया। नौजवान बुखारी पार्टी के प्रतिनिधियों ने इस बैठक में बताया कि कम्युनिस्ट पार्टी से उनकी पार्टी के कार्यक्रम का मतभेद केवल कार्यनीतिक था, जिसका उद्देश्य ऐसे लोगों को भी, जो कम्युनिस्ट कार्यक्रम से सहमत नहीं थे, अमीर के निरंकुश राज के खिलाफ क्रांतिकारी संघर्ष में साथ लाना था। उनका कहना था कि बुखारा में क्रांति की विजय के बाद नौजवान बुखारी पार्टी वाले कम्युनिस्ट पार्टी का नाम और कार्यक्रम अपना लेंगे। इसी आधार पर तुर्क आयोग ने नौजवान बुखारियों के समर्थन का निश्चय किया। उनसे कहा गया कि वे बुखारा के कम्युनिस्टों से मिलकर संयुक्त मोरचा बनाएं, उनके विरुद्ध संघर्ष न करें और भविष्य में दोनों पार्टियों के विलयन की हर तरह तैयारी करें। उनसे इन बातों की लिखित रूप में घोषणा करने को कहा गया, जो उन्होंने ६ अगस्त, १९२० को किया।* इसपर बुखारा के कम्युनिस्टों की चौथी पार्टी कांग्रेस ने भी नौजवान बुखारी पार्टी वालों से अस्थायी एकता की सम्भावना को स्वीकार किया। परन्तु यहां यह कह देना चाहिए कि नौजवान बुखारी पार्टी वालों के संबंध में बुखारा के कम्युनिस्टों में जो सन्देह था, वह पूरी तरह कभी दूर नहीं हुआ।

१ अगस्त १९२० को फ्रूंजे ने लेनिन को एक तार भेजकर बुखारा के सवाल पर आदेश मांगा। फ्रूंजे के सामने दो ही रास्ते थे अन्त...

---

*[illegible] समाजवादी जनतंत्र का [illegible], [illegible], पृष्ठ १०६-१०७।

क्रांतिकारी प्रक्रिया के विकास की आशा करना और इसकी प्रतीक्षा करना, या बाहरी सहायता से क्रांति संगठित करना। उनकी राय में पहला तरीका बहुत धीमा था और इसलिए वह इसके पक्ष में थे कि पहले को बढ़ावा देने के लिए हर उपाय करते हुए दूसरे पर अमल करना चाहिए। पोलिट-ब्यूरो ने इस तार पर विचार किया और निम्नलिखित कार्यपद्धति अपनाने की सिफारिश की

"बुखारा में और बुखारा की सीमा पर रूसी लोगों की रक्षा के लिए सभी आवश्यक कारवाई करना, बुखारा के इलाके और बुखारा की सैन्य शक्तियों पर हमला करने में कभी पहल नहीं करना, अंग्रेज एजेंटों तथा रूसी प्रतिक्रांतिकारियों की मिलीभगत से बुखारा द्वारा की जा रही प्रतिक्रांतिकारी हरकतों के विरुद्ध मुसलमानों में व्यापक प्रचार आंदोलन करना, इस आन्दोलन के दौरान में एक देशी सेना तैयार करना जिसमें बुखारा के कम्युनिस्ट भी शामिल हों, और इन प्रतिरक्षात्मक कारवाइयों को आक्रामक रूप तभी देना, जब जनप्रिय क्रांतिकारी केंद्र बुखारा में बन जाये और सहायता का अनुरोध करें।'*

यह बता देना उचित होगा कि सोवियत सरकार और पार्टी में जिम्मेदार लोग खीवा या बुखारा में क्रांति का निर्यात करने के सदा विरोधी थे। परन्तु इसका समर्थन नौजवान खीवाई और नौजवान बुखारी किया करते थे जिनके बारे में सोवियत अखबारों ने एक बार कहा था कि वे 'मध्य एशिया के दिसम्बरवादी हैं, जो इतिहास से कोई सबक नहीं सीखना चाहते।" उनके लिए जनता को क्रांतिकारी बनाने का मार्ग बहुत लम्बा था। इसलिए खीवा और बुखारा के उत्पीड़ित लोगों को बाहर से तुर्किस्तान की सर्वहारा लाल सेना की संगीनों के बल पर "मुक्ति" दिलानी चाहिए। सोवियत अखबारों ने इन "एशियाई दिसम्बरवादियों" की आलोचना करते हुए लिखा कि वे यह नहीं समझते कि "शोषित जनता अपनी अज्ञानता में 'मुक्ति' दिलानेवालों को कहीं वैदेशिक हमलावर न समझ बैठें'।**

---

* वही, पृष्ठ १७८-१७९।

** 'इज्वेस्तिया तुर्क त्सीका', ५ अगस्त, १९१९। (रूसी संस्करण)

यह याद दिला दिया जाय कि तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी चौथी कांग्रेस ने भी, खीवा और बुखारा के लोगों पर बाहर से श थोपने की धारणा का विरोध किया था। वर्तमान परिस्थिति के सं में प्रस्ताव में कहा गया था कि "हमें उस स्वाभाविक क्षण की प्रती करनी चाहिए जब खीवा और बुखारा के लोगों के भीतर स्वयं क्रांति उथल पुथल आये, लेकिन इस बात की इजाजत नहीं देनी चाहिए कि तुर्किस्तान सोवियत जनतंत्र के विरुद्ध ब्रिटिश सैन्य शक्ति द्वारा कारवा का अड्डा बन जायें।"*

बुखारा की कम्युनिस्ट पार्टी ने २८ अगस्त, १९२० को चारजूए मुक्त करके बुखारा में क्रांति शुरू की। उसकी अपील पर फ्रूंजे के नेत म सोवियत सेनाएं जन मुक्ति संग्राम में सहायता करने आयीं। भारी लड़ के बाद सोवियत सेना ने ६ सितम्बर, १९२० को निरंकुश राज के कि बुखारा पर अधिकार कर लिया। ५ अक्तूबर, १९२० को पहली कुरुलताई बुखारा में आयोजित हुई। उसने बुखारा को सोवियत जनवादी जनतं घोषित किया।** ३ नवम्बर १९२० को रूसी सो० स० म० जनतंत्र तथा

---

* 'तुर्किस्तानस्की कम्मुनिस्त', २० सितम्बर, १९१९। (रूसी में)

** अफगान अमीर ने खीवा और बुखारा को मान्यता प्रदान करने का प्रस्ताव रखा था जिसपर भारत के लिए राज्य मंत्री और भारत के वाइसराय में कुछ पत्र व्यवहार हुआ। भारत के लिए राज्य मंत्री ने अपने पी० नं० १७८४, दिनांकित ६ मई, १९२२ के तार में मान्यता नहीं प्रदान करने का पक्ष लिया। "जब तक वहां स्थायी अच्छी सरकार नहीं हो जाय हिज मैजेस्टी की सरकार किसी तरह भी खीवा और बुखारा की स्वाधीनता को मान्यता नहीं प्रदान कर सकती और फिर उस समय तक भी नहीं जब तक रूस के मुकाबले में उनकी स्वतंत्र हैसियत निश्चित हो जाय।" रूस में रूसी बैंक की तिजोरी से प्राप्त जो १६ लाख रुपया ब[illegible] के रूप में जमा था उसको मुहम्मद अमीर-ए-बुखारा ने उठा लिया। उन दिनों यह अफवाह फैली हुई थी कि अमीर भारत आकर रहना चाहते हैं। कुछ गैरसरकारी बुखारा एजेंट अमीर की पैरवी करने १९२३ में भारत आए थे। मगर उस समय तक वहां सोवियत सत्ता स्थिर हो चुकी थी [illegible] इसलिए [illegible] उचित नहीं समझा।

बुखारा जनतन्त्र के बीच एक सैनिक और राजनीतिक समझौते पर हस्ताक्षर हो गये। बुखारा के सोवियत जनवादी जनतन्त्र ने रू० सो० स० स० जनतन्त्र के साथ एक आर्थिक संधि भी की जिसके अनुसार दोनों राज्यों ने अपनी आर्थिक नीतियों और योजनाओं को समन्वित करने का फैसला किया। रू० सो० स० स० जनतन्त्र ने बुखारा के जनतन्त्र को पांच अरब रूबल अशोधनीय ऋण दिया। रू० सो० स० स० जनतन्त्र के साथ सहयोग की बदौलत बुखारा का तेज़ी से आर्थिक और सांस्कृतिक विकास सम्भव हुआ।

यह याद दिला दिया जाय कि तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की
की कांग्रेस ने भी खीवा और बुखारा के लोगों पर बाहर से क्रांति
लाने की धारणा का विरोध किया था। वर्तमान परिस्थिति के संबंध
प्रस्ताव में कहा गया था कि "हम उस स्वाभाविक क्षण की प्रतीक्षा
नी चाहिए जब खीवा और बुखारा के लोगों के भीतर स्वयं क्रांतिकारी
लन-पुयल आय, लेकिन इस बात की इजाज़त नहीं देनी चाहिए कि वे
स्तान सोवियत जनतंत्र के विरुद्ध ब्रिटिश सैन्य शक्ति द्वारा कारवाई
अड्डा बन जायें।"*

बुखारा की कम्युनिस्ट पार्टी ने २८ अगस्त, १९२० को चारजूए का
न करके बुखारा में क्रांति शुरू की। उसकी अपील पर फ़्रूंज़े के नेतृत्व
सोवियत सेनाएं जन मुक्ति संग्राम में सहायता करने आयीं। भारी लड़ाई
बाद सोवियत सेना ने ६ सितम्बर, १९२० को निरंकुश राज के क़िले
नगर पर अधिकार कर लिया। ५ अक्तूबर, १९२० को पहली कुरुलताई
नगर में आयोजित हुई। उसने बुखारा को सोवियत जनवादी जनतंत्र
घोषित किया।** ३ नवम्बर १९२० को रूसी सो० स० स० जनतंत्र तथा

---

*'तुर्किस्तानस्की कोम्मुनिस्त' २० सितम्बर, १९१९। (रूसी में)
अफगान अमीर ने खीवा और बुखारा की मान्यता प्रदान करने का
प्रस्ताव रखा था जिस पर भारत के लिए राज्य मंत्री और भारत के
वाइसराय में कुछ पत्र-व्यवहार हुआ। भारत के लिए राज्य मंत्री ने अपने
सं० १७८८, दिनांकित ६ मई, १९२२ के तार में मान्यता नहीं प्रदान
न करने पर जोर दिया। "जब तक वहां स्थायी प्रादेशिक सरकार नहीं हो
तब हिज मजेस्टी की सरकार किसी तरह भी खीवा और बुखारा की
स्वाधीनता को मान्यता नहीं प्रदान कर सकती और फिर उस समय तक
नहीं, जब तक रूस के मुकाबले में उनकी स्वतंत्र हैसियत निश्चित हो
जाए'। लन्दन में वकगूत की बिक्री से प्राप्त जो १६ लाख रुपया बम्बई
में जमा था, उसका मुकदमा अमीर ने बुखारा ने जीत लिया।
पिता सरकार पहले ही तय हुआ था कि अमीर भारत आकर रहना चाहें
कुछ नौजवान बुखारी एजेंट अमीर की पत्नी को १९२३ में भारत लाये
मगर उस समय तक वहां सोवियत सत्ता स्थिर हो चुकी थी, इसलिए
जाने देना उचित नहीं समझा।

बुखारा जनतन्त्र के बीच एक सैनिक और राजनीतिक समझौते पर हस्ताक्षर हो गये। बुखारा के सोवियत जनवादी जनतन्त्र ने रू० सो० स० स० जनतन्त्र के साथ एक आर्थिक संधि भी की जिसके अनुसार दोनों राज्यों ने अपनी आर्थिक नीतियों और योजनाओं को समन्वित करने का फैसला किया। रू० सो० स० स० जनतन्त्र ने बुखारा के जनतन्त्र को पांच अरब रूबल अशोधनीय ऋण दिया। रू० सो० स० स० जनतन्त्र के साथ सहयोग की बदौलत बुखारा का तेज़ी से आर्थिक और सांस्कृतिक विकास सम्भव हुआ।

गृहयुद्ध

प्रतिक्रांति तथा वदेशिक हस्तक्षेप के विरुद्ध सघष

१९१८ की गमिया म तुर्किस्तान म गृहयुद्ध और वैदेशिक सनिक हस्तक्षेप की शुरुआत हुई। कोकान "स्वायत्त" सरकार के विघटन क तुरत बाद ही फरगाना म बासमची आन्दोलन आरम्भ हुआ और तुर्किस्तान की हालत घिर हुए किले की हो गई जिसके चारो ओर मोरचा की माला सी बन गई थी। खीवा का खान शासित क्षेत्र और बुखारा का अमीर शासित क्षेत्र सोवियत तुर्किस्तान पर हमला करने के अड्डे बन गय। ट्रासकास्पिया इलाके म मशेविको ने समाजवादी क्रान्तिकारियो तथा मशेविको न षडयन्त्र करके सोवियत सत्ता का उलटने की कारवाई सगठित की। प्रतिक्रान्तिकारी अस्थायी ट्रासकास्पिया सरकार की स्थापना की गई। इस कारवाई के द्वारा ही ब्रिटिश सनिक हस्तक्षेप हुआ। सफेद जारव दूतोव न ओरनबुग पर कब्जा कर लिया और तुर्किस्तान का सबध रूस के मध्य भाग स विच्छेद हो गया। जेतीसु इलाके म प्रतिक्रान्तिकारी कुलक और सफेद कज्जाको न सोवियत सत्ता के विरुद्ध सिर उठा लिया। ताशकन्द म भी प्रतिक्रान्तिकारी तुर्किस्तान सनिक सगठन न जाल म बासमाची नाताओ क तानासधारा म स्थापित हो गई। इसी प्रकार म इस समझौता किया, जिसमें हथियार और धन देने का वादा किया। इसी बासमची प्रधान इरगाश फलार पञ्चगाम और खीवा के जुनद खा स सम्पक स्थापित किया।

सावियत तुर्किस्तान के लोगा ने इस कठिन स्थिति का मुकाबला बडे साहस के साथ किया और सोवियत सत्ता की प्रतिरक्षा म और अन्दरुनी तथा बाहरी सभी शत्रुओ के विरुद्ध वीरतापूवक सघष किया। ५ अक्तूबर, १९१८ का तुर्किस्तान की केन्द्रीय कायकारिणी समिति और सोवनारकोम तथा रेलवे मजदूरो की कायकारिणी समिति ने एक सयुक्त बैठक म असाधारण छानबीन आयाग नियुक्त करने का निश्चय किया जिसका काम राजनीतिक स्थिति पर नजर रखना और प्रतिक्रातिकारियो के विरुद्ध सघष करना था। इसी आयाग न तुर्किस्तान सैनिक सगठन के अस्तित्व का पता चलाया और अग्रेजो से उसके सबध का परदाफाश किया। इस सगठन के एक भाग का कुचल दिया गया, परन्तु शेष वामपक्षी समाजवादी-क्रातिकारियो की सहायता से जो सत्ता म बाल्शेविको के साझेदार थे, और युद्ध कमिसार ओसिपोव जसे गद्दारो की सहायता स बच गये। १८-१९ जनवरी १९१९ की रात ओसिपोव ने सावियत सत्ता के खिलाफ प्रतिक्रातिकारी बगावत की। सरकार के सभी महत्वपूण बोल्शेविक सदस्य तथा तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी के सभी नता गिरफ्तार किये गये और मार दिय गये। परतु ताशकन्द के मजदूर और सनिक सावियत सत्ता के समथन म डटे रहे। उजबेक स्वयसेवको न भी ओसिपोव के विरुद्ध सशस्त्र सघष म भाग लिया। ओसिपोव भागकर बासमचियो से जा मिला। जनगण ने सत्ता पर अधिकार करने के उसके प्रयासो को मिट्टी म मिला दिया।

साम्राज्यवादियो ने फरगाना म बासमची आन्दोलन से बडी उम्मीदें बाध रखी थी। यह जन विरोधी आन्दोलन था जिसका उद्देश्य तुर्किस्तान म मुल्लाओ सामतवादियो तथा पजीवादी राष्ट्रवादी तत्वो का शासन स्थापित करना था। चूकि श्रमजीवी जनता मे उसका कोई व्यापक आधार नही था, इसलिए उसे अधिकतर वैदेशिक साम्राज्यवादियो के समथन पर निभर करना पडता था। इसके अनुयायी मुख्यत जारशाही प्रशासन के भूतपूव पदाधिकारी थे, जैसे आकसकाल, मीरब तथा वोलास्त प्रशासक तथा मुल्लाओ मे से थे। बासमचियो की पक्तियो मे अगर स्पष्ट रूप से किसी की उपस्थिति दिखाई दती थी, ता व गरीब किसान और कारीगर

सातवां अध्याय

गृहयुद्ध

प्रतिक्रांति तथा विदेशी हस्तक्षेप के विरुद्ध संघर्ष

१९१८ की गर्मियों में तुर्किस्तान में गृहयुद्ध और विदेशी सैनिक हस्तक्षेप की शुरुआत हुई। ताशकंद 'स्वायत्त' सरकार के विघटन के तुरंत बाद ही फरगाना में बासमची आन्दोलन आरम्भ हुआ और तुर्किस्तान की हालत घिरे हुए किले की सी हो गई जिसके चारों ओर मोर्चा बाँध दिया गया था। खीवा का खान और बुखारा का अमीर शासित क्षेत्र सोवियत तुर्किस्तान पर हमला करने को बढ़े चले गए। ट्रांसकास्पियन इलाके में सफेद गार्डों ने समाजवादी क्रांतिकारियों तथा मेंशेविकों से सम्पर्क करके सोवियत सत्ता का उलटने की कार्रवाई संगठित की। प्रतिक्रांतिकारी अस्थायी ट्रांसकास्पियन सरकार की स्थापना की गई। इस कार्रवाई के साथ ही ब्रिटिश सैनिक हस्तक्षेप हुआ। सफेद आतमान दूतोव ने ओरेनबुर्ग पर कब्जा कर लिया और तुर्किस्तान का सम्बध रूस के मध्य भाग से विच्छेद हो गया। जेतीसुव इलाके में प्रतिक्रांतिकारी कुलक और सफेद कज़्ज़ाकों ने सोवियत सत्ता के विरुद्ध सिर उठा लिया। ताशकन्द में एक प्रतिक्रांतिकारी एजेंसी तुर्किस्तान सैनिक संगठन के नाम से ज़ारशाही जनरलों के तत्वावधान में स्थापित की गई। इसने अंग्रेजों से एक समझौता किया, जिन्होंने हथियार और धन देने का वादा किया। इसने बासमची प्रधान इरगाश, अमीर-ए-बुखारा और खीवा के जुनैद खान से सम्पर्क स्थापित किया।

सोवियत तुर्किस्तान के लोगों ने इस कठिन स्थिति का मुकाबला बडे साहस के साथ किया और सोवियत सत्ता की प्रतिरक्षा म और अन्दरूनी तथा बाहरी सभी शत्रुओं के विरुद्ध वीरतापूर्वक संघर्ष किया। ५ अक्तूबर, १६१८ को तुर्किस्तान की केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति और सोवनारकोम तथा रेलवे मजदूरों की कार्यकारिणी समिति ने एक संयुक्त बैठक मे असाधारण छानबीन आयोग नियुक्त करने का निश्चय किया जिसका काम राजनीतिक स्थिति पर नजर रखना और प्रतिक्रातिकारियो के विरुद्ध संघर्ष करना था। इसी आयोग ने तुर्किस्तान सैनिक संगठन के अस्तित्व का पता चलाया और अंग्रेजो से उसके संबंध का पर्दाफाश किया। इस संगठन के एक भाग को कुचल दिया गया, परन्तु शेष वामपक्षी समाजवादी क्रांतिकारियों की सहायता से जो सत्ता मे बोल्शेविकों के साझेदार थे, और युद्ध कमिसार ओसिपोव जैसे गद्दारों की सहायता से बच गये। १८-१६ जनवरी, १६१६ की रात ओसिपोव ने सोवियत सत्ता के खिलाफ प्रतिक्रांतिकारी बगावत की। सरकार के सभी महत्वपूर्ण बोल्शेविक सदस्य तथा तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी के सभी नेता गिरफ्तार किये गये और मार दिये गये। परन्तु ताशकन्द के मजदूर और सैनिक सोवियत सत्ता के समर्थन म डटे रहे। उजबेक स्वयसेवकों ने भी ओसिपोव के विरुद्ध सशस्त्र संघर्ष म भाग लिया। ओसिपोव भागकर बासमचियों स जा मिला। जनगण न सत्ता पर अधिकार करने के उसके प्रयासो को मिट्टी मे मिला दिया।

साम्राज्यवादियो ने फरगाना म बासमची आन्दोलन से बडी उम्मीद बाध रखी थी। यह जन विरोधी आदोलन था जिसका उद्देश्य तुर्किस्तान म मुल्लाओं, सामतवादियों तथा पजीवादी राष्ट्रवादी तत्वो का शासन स्थापित करना था। चूकि श्रमजीवी जनता म उसका कोई व्यापक आधार नहीं था, इसलिए उसे अधिकतर वैदेशिक साम्राज्यवादियो के समर्थन पर निर्भर करना पडता था। इसके अनुयायी मुख्यत जारशाही प्रशासन के भूतपूर्व पदाधिकारी थे, जसे आक्सकाल, मीरब तथा बोलोस्त प्रशासक तथा मुल्लाओं म से थे। बासमचियों की पक्तियो मे अगर स्पष्ट रूप से किसी की अनुपस्थिति दिखाई देती थी, तो वे गरीब किसान और कारीगर

ये, सिवा चद लोगो के, जो या ता अपने अत्यत पिछडेपन के कारण या भय से कुछ दिनो के लिए उनके साथ हो गये थे। ऐसे अपराधी, जो बाई लोगो और धनी व्यक्तियो के सरक्षण मे रहते ये और उनके इशारे पर हर तरह का पाप करते थे बडे शौक से इस आदोलन मे शामिल हो गये जिसम उनके लिए बडा मौका था। **बासमचियो** के अधिकार मे जो इलाके ये, वहा स्थिति पुराने खान प्रशासन के दिनो से कुछ अधिक भिन्न नही थी।

बासमचियो ने सोवियत सरकार के विरुद्ध जेहाद का एलान कर दिया। प्रारम्भ मे उन्हे कुछ सफलता मिली, क्योकि फरगाना मे किसानो का बहुमत शुरू मे **बासमचियो** के विरुद्ध सघष म तटस्थ था। फरगाना के किसानो की इस तटस्थता का कारण उनकी आर्थिक स्थिति का स्पष्टत खराब होना था। यह खराबी प्रथम विश्वयुद्ध के दिनो से शुरू हुई, जब निर्मित सामान और खाद्यान्न का दाम बहुत बढ गया था, जबकि फरगाना की मुख्य पैदावार—कपास का दाम कमोबेश स्थिर था।

यह स्थिति ओरेनबुग की नाकाबदी के कारण और बिगड गई। फिर यह बात भी थी कि तुर्किस्तान आयोग के पहुचने से पहले **देहकानो** मे पार्टी ने बहुत कम प्रचार काय किया था और उनके कुछ बुनियादी हितो के प्रति उदासीनता का दृष्टिकोण अपनाया गया था। बाजार बिल्कुल बन्द थे तथा खाद्यान्न की वसूली के मामले मे भेदात्मक वग दष्टिकोण नही पाया जाता था। कुछ स्थानीय बोल्शेविको द्वारा पार्टी की जातीय नीति की विकृति भी **बासमचियो** और पजीवादी राष्ट्रवादियो के काम आयी, जिन्होने फरगाना म फैले हुए आर्थिक असतोष से पूरा लाभ उठाया।

इन सब बातो का नतीजा यह हुआ कि १९१८ से १९२० तक फरगाना म **बासमची** आन्दोलन ने व्यापक रूप धारण कर लिया। परन्तु वह कभी भी जन आदोलन नही बन सका और स्थानीय किसानो म सोवियत सत्ता के प्रति शत्रुता की भावना जगाने म सफल नही हो सका। फरगाना की २० लाख की आबादी म १० हजार **बासमची** नगण्य अल्पमत थे। **बासमची** की प्रारम्भिक सफलताए किसी व्यापक जन-समथन की वजह से नही, बल्कि उनके विरुद्ध सघष के बडी हद तक असगठित होने की

वजह से थी। इसलिए कोई आश्चय की बात नही कि ज्यो ज्यो किसानो को सोवियत सत्ता की धारणाओ और उद्देश्यो का ज्ञान होता गया, वे बासमचियों के विरुद्ध सघष मे अधिक सक्रिय होते गये।

कोकान सरकार के पतन के बाद उसका सेनापति इरगाश बासमचियो का प्रधान बन गया। उसने कोकोद को अपना केन्द्र बनाया और वहा से शहरो और गावो पर हमले किये। शीघ्र ही एक और बासमची दल मदामिन बेक के नेतत्व मे कायम हुआ जिसे पूजीवादी राष्ट्रवादियो ने मगिलान शहर की मिलिशिया का प्रधान नियुक्त किया था। रूसी कुलक और आप्रवासी भी, जिनके हित सोवियत सत्ता से टकराते थे, बासमचियो के साथ हो गये। रूसी कुलक मानस्त्रोव के नेतृत्व म तथाकथित किसान सेना ने ओश पर कब्जा कर लिया और बासमचियो से जा मिली। मदामिन बेक ने इन सब भाति भाति के गिरोहो को एकत्रित किया और फरगाना की अस्थायी सरकार की स्थापना की घोषणा कर दी। इस सरकार मे जारशाही जनरल, रूसी कुलकों और कपास फर्मों के प्रतिनिधि, स्थानीय बाई और मुल्ला लोग थे। माच-अप्रैल १९१८ से १९१९ की पतझड तक बासमचियों ने फरगाना घाटी म बडा उत्पात मचाया। वे लूट मार करते, फैक्टरियो और खानो को नष्ट करते और जिस किसी पर सोवियत सत्ता के प्रति सहानुभूति रखने का सन्देह होता, उसपर पाशविक अत्याचार करते।

यह स्थिति तब तक जारी रही जब तक कोल्चाक की पराजय के बाद फ्रूंज़े की कमान मे तुर्किस्तान मोरचा नही बन गया। लेनिन की पहलकदमी पर फ्रूंज़े, कूइबिशेव तथा अय लोगो को लेकर तुर्किस्तान आयोग कायम किया गया और उसे तुर्किस्तान के श्रमजीवी जनगण द्वारा उनकी क्रातिकारी सत्ता को सुदृढ करने में सहायता करने के लिए ताशकन्द भेजा गया। उस आयोग ने पार्टी और सोवियत सस्थाओ के नवीनीकरण का काम शुरू करने के अलावा फरगाना घाटी मे बासमचियो के विरुद्ध और ट्रासकास्पियन इलाके और जेतीसुव म सफेद गाड और सफेद कज्जाको के विरुद्ध जनता का सघष सगठित करने मे सक्रिय भाग लिया। उसके निदेशन मे लाल सेना का पुनगठन किया गया। उसे वगच्युत दु साहसी तथा सन्देह

जनक तत्वो से बिल्कुल साफ किया गया। तुर्किस्तान आयोग ने स्वेच्छा पूवक भरती के आधार पर स्थानीय जातियो के जनगण को लेकर ३० हज़ार की सेना सफलतापूवक सगठित की। केवल फरगाना घाटी मे दस हजार स्थानीय लोग लाल सेना मे शामिल हुए। फरवरी माच १६२० तक बासम चियो के विरुद्ध अभियान मे काफी सफलता प्राप्त हो चुकी थी और गमियो तक फरगाना मे उनके दल नष्ट कर दिये गये थे। परतु कुछ दल १६२३ तक लूट मार करते रहे, क्योकि जब अनवर पाशा ने उनका नेतत्व सभाला, तो उनमे नई जान आ गई थी। मगर १६२० के बाद **बासमची** सोवियत सत्ता के लिए कोई गम्भीर खतरा नही रहे।

इसी तरह १६२० तक ट्रासकास्पियन इलाके और जेतीसुव मे भी प्रतिक्रातिकारी मसूबो पर पानी फिर गया जब सफेद गाड और सफेद कज्जाको को शिकस्त हुई और ब्रिटिश हस्तक्षेपकारियो को पीछे हटना पडा। परन्तु तुर्किस्तान के लोगो को, जो बहुत दिना तक केन्द्र से कटे और चारो ओर मारचो से घिरे रहे थे, अधिकतर स्वय अपने बल-बूते पर लडना पडा। उन्ह बडी कठिनाइया उठानी पडी। उनके पास खाद्यान्न तथा हथियारा और गोले-बारूद का अभाव था। फिर भी वे कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व मे वीरतापूवक लडे। गहयुद्ध मे वे विजयी हुए, क्याकि यह मुक्ति का न्यायपूण युद्ध था जिसे जनगण औपनिवेशिक गुलामी और सामती अत्याचार के विरुद्ध स्वतत्रता और सम्पन्न जीवन के महान उद्देश्य की खातिर लड रहे थे। गहयुद्ध म जनगण ने जिन महान उद्देश्यो के लिए प्राणा की बाज़ी लगायी, उसने उनमे सावियत देशभक्ति की प्रबल भावना को जन्म दिया।

गहयुद्ध मे सोवियत सत्ता की विजय के महत्वपूण कारणा म से एक यह था कि लेनिनवादी जातीय नीति पर ईमानदारी से अमल किया गया जिसकी बदौलत तुर्किस्तान की सोवियत स्वायत्तता का निर्माण किया गया था, सत्ता की सभी सस्थाआ मे स्थानीय श्रमजीवियो की व्यापक शिरकत सुनिश्चित की गई तथा औपनिवेशिक और सामती अतीत के सभी अवशेषो को मिटाने के लिए सघष किया गया। सवहारा अतर्राष्ट्रीयतावाद तथा जातिया की मैत्री भी गृहयुद्ध के दौरान प्रबल हुई। स्थानीय जातिया के

श्रमजीवी जनगण के अलावा, जिन्होंने अपनी समाजवादी मातभूमि की रक्षा मे देशभक्ति की उच्च भावना का परिचय दिया, अनेक यूरोपीय देशो के किसानों और मजदूरो ने भी, जो प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान युद्ध बदी होकर तुर्किस्तान आये थे और साथ ही पडोसी एशियाई देशा के जनगण के क्रातिकारी प्रतिनिधियो ने भी, जिनमे कुछ भारत के भी थे, सोवियत सत्ता की विजय मे योगदान किया।

आर्थिक और सास्कृतिक परिवर्तन

गृहयुद्ध का समय तुर्किस्तान के जनगण के जीवन मे आर्थिक तथा सास्कृतिक परिवर्तनो के लिए भी उल्लेखनीय है। बावजूद इसके कि सोवियत सत्ता को अनेक कठिनाइयो का सामना करना पडा, उसने गृहयुद्ध के दिनो मे ही एक नये समाजवादी आर्थिक ढाचे की बुनियाद डाली और जनगण के सास्कृतिक जीवन मे बडे परिवर्तन किये।

उद्योगो के समाजवादी रूपातरण की दिशा मे प्रारम्भिक कदम अक्तूबर क्राति के तुरत बाद ही उठाये गये थे। १९१७ के अत से १९१८ के मध्य तक सभी उद्योगो पर मजदूरो का नियत्रण स्थापित कर दिया गया और बैंको, परिवहन तथा वैदेशिक व्यापार आदि का राष्ट्रीयकरण कर लिया गया। भूमि के राष्ट्रीयकरण की भी घोषणा कर दी गई थी। खाद्यान्न मे राजकीय इजारा स्थापित किया गया और भूमि सुधार लागू करने के लिए गावो मे गरीबो की समितिया बनाई गइ। उद्योगो पर मजदूरो के नियत्रण की स्थापना तथा मुख्य उद्योगो और रेलवे के राष्ट्रीयकरण से सर्वहारा के अधिनायकत्व का आर्थिक आधार तैयार हो गया। मजदूरो के नियत्रण की पद्धति की स्थापना १९१७ के अत मे किसी हद तक स्वतःस्फूर्त ढग से हुई और सोवियत सत्ता ने इसे पूजीपतियो द्वारा तोडफोड के विरुद्ध वर्ग सघर्ष के रूप मे इस्तेमाल किया, *क्योंकि पूजीपति उत्पादन को कम करना* और उद्योगों को अस्तव्यस्त करना चाहते थे। सोवियत सत्ता ने मजदूरो के नियत्रण की प्रथा को वर्ग-सघर्ष के रूप मे तथा औद्योगिक प्रबध मे उनके

प्रशिक्षण के लिए बहुत महत्त्व दिया। योजनाबद्ध समाजवादी उत्पादन की दिशा मे वह महत्वपूण मजिल सिद्ध हुई।

माच १६१८ मे बैंक कमचारियो की तीसरी असाधारण काग्रस ताशकन्द मे हुई। काग्रेस ने बका के राष्ट्रीयकरण के सवाल पर विचार किया और अपने समस्त अनुभव और ज्ञान सहित सोवियत सरकार की सहायता करने की तत्परता व्यक्त की। मई १६१८ तक बकों का राष्ट्रीयकरण पूरा हो चुका था और ऋण की सारी व्यवस्था अब सोवियत राज्य के हाथो मे सकेंद्रित हो चुकी थी। बैंको का राष्ट्रीयकरण करके सोवियत सत्ता ने पजीपति वग को उसके आर्थिक प्रभुत्व के सबसे महत्वपूर्ण अस्त्र से वचित कर दिया।

परिवहन के राष्ट्रीयकरण ने भी समाजवादी अथव्यवस्था के सगठन मे महत्वपूण भमिका अदा की। १ माच, १६१८ को जेतीसुव रेलवे का राष्ट्रीयकरण किया गया। इसके बाद ३१ माच को फरगाना रेलवे और अप्रैल १६१८ मे बुखारा रेलवे का राष्ट्रीयकरण हुआ।

माच अप्रैल १६१८ मे अलग अलग उद्यमो का ही नही, बल्कि महत्वपूण उद्योगो की पूरी की पूरी शाखाओ का भी राष्ट्रीयकरण किया गया। ५ माच, १६१८ को समस्त रूई उद्योग और साबुन, तेल आदि जैसे सहायक उद्योगो का भी **सोवनारकोम** की एक आज्ञप्ति द्वारा राष्ट्रीयकरण कर लिया गया। रुई की निजी खरीद बिक्री पर प्रतिबध लगा दिया गया और रूई के बडे जखीरे जब्त कर लिए गये। कोयला और तेल उद्योगों का भी उसी महीने राष्ट्रीयकरण किया गया। माच के अत तथा अप्रैल के शुरू तक अराल मछली पकडने का उद्योग, छापेखाने, आटा, शक्कर तथा चावल उद्योगो का भी राष्ट्रीयकरण कर लिया गया।

जून १६१८ मे पूरे क्षेत्र म उन औद्योगिक इकाइयो की सख्या जिनका राष्ट्रीयकरण कर लिया गया था, २०८, जुलाई मे २४५ और सितम्बर म २८३ तक पहुच चुकी थी।* साल के उत्तरार्द्ध म कई छोटे और मध्यम

*य० नेपामनिन, "उज्बेकिस्तान मे समाजवाद के निर्माण का ऐतिहासिक अनुभव, १६१७–१६३७", पष्ठ ६६।

उद्योगों का भी राष्ट्रीयकरण कर लिया गया। मगर यह गलती थी जिसका कारण अत्यधिक विचारधारात्मक उत्साह था। शुरू में राष्ट्रीयकरण के सार की उचित समझ बहुत कम थी और राष्ट्रीयकृत उद्यमों का प्रबंध मजदूरों की फैक्टरी या कारखाना समिति द्वारा किया जाता, जो समाजवादी क्रांतिकारियों के विचारों के प्रभाव में अक्सर इसे अपनी सामूहिक सम्पत्ति मानती थी। इससे उत्पादन में कुछ दुर्व्यवस्था उत्पन्न हुई। परन्तु मार्च १९१८ में इसका सुधार हो गया, जब सोवनारकोम ने जन-अर्थतंत्र की क्षेत्रीय परिषद (सोवनारखोज) स्थापित करने का फैसला किया। अप्रैल १९१८ में उत्पादन की एक क्षेत्रीय परिषद गठित की गई और उसे उत्पादन संगठित करने और क्षेत्र के आर्थिक जीवन को नियमित करने के लिए मानदंड और योजनाएं तैयार करने का काम सौंपा गया। आगे चलकर इस संस्था का पुनर्गठन जन-अर्थतंत्र की उच्च परिषद के रूप में किया गया जिसके कार्य वही थे। प्रत्येक ओब्लास्त में औद्योगिक उद्यमों का निदेशन करने के लिए जन-अर्थतंत्र की परिषद की स्थापना की गई। अगस्त-सितम्बर १९१९ में जन-अर्थतंत्र की परिषदों की प्रथम कांग्रेस के समय १८ ऐसी परिषदें (सोवनारखोज) थीं। १९१९ के अंत तक उनकी संख्या बढ़कर ४० हो गई थी। परन्तु बाद में कुछ को भंग और दूसरों का विलयन कर दिया गया जिससे उनकी संख्या घट गई। जुलाई १९२० में सोवनारखोजों की दूसरी कांग्रेस ने आर्थिक पुनर्निर्माण तथा सोवनारखोज के कार्यकलाप के परिणामों पर विचार-विमर्श किया। १९२० तक उनकी संख्या ४० से घटाकर १७ कर दी गई। १९२१ में फैक्टरी-प्लांट किस्म के कोई ८६९ उद्यम थे जिनमें ३२,५३३ मजदूर काम करते थे। इन ८६९ में से ४०५ गृहयुद्ध के दौरान पैदा हुई आर्थिक दुर्व्यवस्था के कारण चालू नहीं थे।*

१९१८ की गर्मियों में ट्रेड यूनियन कांग्रेस हुई, जिसमें श्रम-अनुशासन के सवाल पर विचार किया गया और इस संबंध में कई सिफारिशें की गई। तुर्किस्तान केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति ने कारखाने और फैक्टरी में

---

*वही, पृष्ठ १०१-१०२।

पशिक्षण के लिए बहुत महत्त्व दिया। योजनाबद्ध समाजवादी उत्पादन की दिशा मे वह महत्वपूण मजिल सिद्ध हुई।

माच १६१८ मे बक कमचारियो की तीमरी असाधारण काग्रस ताशकन्द में हुई। काग्रेस ने बैंको के राष्ट्रीयकरण के सवाल पर विचार किया और अपने समस्त अनुभव और ज्ञान सहित सोवियत सरकार की सहायता करने की तत्परता व्यक्त की। मई १६१८ तक बको का राष्ट्रीयकरण पूरा हो चुका था और ऋण की सारी व्यवस्था अब सोवियत राज्य के हाथो मे सकेन्द्रित हो चुकी थी। बैंको का राष्ट्रीयकरण करके सोवियत सत्ता ने पजीपति वग को उसके आर्थिक प्रभुत्व के सबसे महत्वपूण शस्त्र से वचित कर दिया।

परिवहन के राष्ट्रीयकरण ने भी समाजवादी अथव्यवस्था के सगठन म महत्वपूण भूमिका अदा की। १ माच, १६१८ को जेतीसुव रेलवे का राष्ट्रीयकरण किया गया। इसके बाद ३१ माच को फरगाना रेलवे और अप्रैल १६१८ मे बुखारा रेलवे का राष्ट्रीयकरण हुआ।

माच अप्रैल १६१८ मे अलग अलग उद्यमो का ही नही, बल्कि महत्वपुण उद्योगो की पूरी की पूरी शाखाओ का भी राष्टीयकरण किया गया। ५ माच, १६१८ को समस्त रूई उद्योग और साबुन, तेल आदि जैसे सहायक उद्योगा का भी **सोवनारकोम** की एक आज्ञप्ति द्वारा राष्ट्रीयकरण कर लिया गया। रूई की निजी खरीद बिक्री पर प्रतिबध लगा दिया गया और रूई के बडे जखीरे जब्त कर लिए गये। कोयला और तेल उद्योगो का भी उसी महीने राष्ट्रीयकरण किया गया। माच के अत तथा अप्रैल के शुरू तक अराल मछली पकडने का उद्योग, छापेखाने, आटा, शकर तथा चावल उद्योगो का भी राष्ट्रीयकरण कर लिया गया।

जून १६१८ मे पूरे क्षेत्र म उन औद्योगिक इकाइया की सख्या जिनका राष्ट्रीयकरण कर लिया गया था २०५, जुलाई मे २८८ और सितम्बर मे २८३ तक पहुच चुकी थी।* साल के उत्तराद्ध मे कई छोटे और मध्यम

*ब० नपामनिन, उज्बेकिस्तान म समाजवाद के निर्माण का ऐतिहासिक अनुभव, १६१७–१६३७, पृष्ठ ६६।

उद्योगो का भी राष्ट्रीयकरण कर लिया गया। मगर यह गलती थी जिसका कारण अत्यधिक विचारधारात्मक उत्साह था। शुरू मे राष्ट्रीयकरण के सार की उचित समझ बहुत कम थी और राष्ट्रीयकृत उद्यमो का प्रबंध मजदूरो की फैक्टरी या कारखाना समिति द्वारा किया जाता जो समाजवादी क्रातिकारियो के विचारो के प्रभाव मे अक्सर इसे अपनी सामूहिक सम्पत्ति मानती थी। इससे उत्पादन मे कुछ दुर्व्यवस्था उत्पन्न हुई। परन्तु मार्च १९१८ मे इसका सुधार हो गया, जब सोवनारकोम ने जन अर्थतत्र की क्षेत्रीय परिषद (सोवनारखोज) स्थापित करने का फैसला किया। अप्रैल १९१८ मे उत्पादन की एक क्षेत्रीय परिषद गठित की गई और उसे उत्पादन सगठित करने और क्षेत्र के आर्थिक जीवन को नियमित करने के लिए मानदंड और योजनाए तैयार करने का काम सौंपा गया। आगे चलकर इस सस्था का पुनर्गठन जन अर्थतत्र की उच्च परिषद के रूप मे किया गया जिसके कार्य वही थे। प्रत्येक ओब्लास्त मे औद्योगिक उद्यमो का निदेशन करने के लिए जन अर्थतत्र की परिषद की स्थापना की गई। अगस्त सितम्बर १९१९ मे जन अर्थतत्र की परिषदो की प्रथम काग्रेस के समय १८ ऐसी परिषदें (सोवनारखोज) थीं। १९१९ के अत तक उनकी सख्या बढकर ४० हो गई थी। परन्तु बाद मे कुछ का भग और दूसरो का विलयन कर दिया गया जिससे उनकी सख्या घट गई। जुलाई १९२० मे सोवनारखोजो की दूसरी काग्रेस ने आर्थिक पुनर्निर्माण तथा सोवनारखोज के कार्यकलाप के परिणामो पर विचार विमर्श किया। १९२० तक उनकी सख्या ४० से घटाकर १७ कर दी गई। १९२१ मे फैक्टरी-प्लाट किस्म के कोई ८६९ उद्यम थे जिनमे ३२५३३ मजदूर काम करते थे। इन ८६९ मे से ४०५ गृहयुद्ध के दौरान पैदा हुई आर्थिक दुर्व्यवस्था के कारण चालू नही थे।*

१९१८ की गर्मियो मे ट्रेड-यूनियन काग्रेस हुई, जिसमे श्रम-अनुशासन के सवाल पर विचार किया गया और इस सबध मे कई सिफारिशे की गई। तुर्किस्तान केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति ने कारखानो और फैक्टरी मे

---

*वही, पृष्ठ १०१-१०२।

देने की इजाज़त केवल अपवाद के रूप म स्थानीय भूमि समिति की आज्ञा स और वह भी एक साल से अधिक के लिए नही दी जाती थी और इसके लिए भी स्थानीय सोवियत की अनुमति जरूरी थी। भूमि समितियो के सगठन के सबध मे अस्थायी सरकार का अधिनियम बदल दिया गया।* दिसम्बर १९१७ मे सोवनारकोम ने आप्रवासी प्रशासन द्वारा आप्रवासियो को जमीन देने से रोक दिया।** बाद मे कई बडी जमीदारिया का राष्ट्रीयकरण किया गया। १३ मार्च, १९१८ को जारी की गई सोवनारकोम की आज्ञप्ति के जरिये सभी सिंचाई नहरे और नाले भूमि कमिसारियत के जिम्मे कर दिये गये। तुर्किस्तान मे सोवियत सत्ता की भूमि नीति के इन बुनियादी सिद्धाता का अनुमोदन १७ नवम्बर, १९२० को केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति तथा सोवनारकोम द्वारा स्वीकृत अधिनियम के जरिये कर दिया गया। इस अधिनियम की प्रारम्भिक धाराओ मे घोषणा की गई कि तुर्किस्तान जनतत्र के भीतर सारी भूमि और जल जनगण की राजकीय सम्पत्ति है।

परन्तु भूमि-सुधार को कार्यान्वित करने म बडी कठिनाइया का सामना करना पडा। जमीदारी और सामती भूमि व्यवस्था के उन्मूलन की प्रक्रिया बहुत धीरे चल रही थी और १९२५ १९२८ तक जाकर पूरी हुई। इस विलम्ब का कारण तुर्किस्तान की विशेष स्थितिया, वहा के सामाजिक आर्थिक सबधा का अधिक पिछडापन, रूस के मध्यवर्ती इलाको की तुलना मे यहा के देहक़ानों की चेतना और उनके सगठन का अपेक्षाकृत धीर विकास, पितृसत्तात्मक कबायली स्थिति के अतगत किसानो पर सामतवादियो और मुल्लाओ का असर तथा बासमचियो के विरुद्ध लम्बा सघर्ष था।

परन्तु इन कठिनाइयो के बावजूद इस अवधि मे कृषि के समाजवादी पुनर्गठन की दिशा मे कुछ प्रारम्भिक कदम उठाये गये। १९१८ १९१९

---

*'तुर्किस्तानस्कीये वेदोमोस्ती', अक १९०, ९ दिसम्बर, १९१७।

**"तुर्किस्तान मे महान अक्तूबर समाजवादी क्रांति की तैयारी और तामील, दस्तावेजो का सग्रह", ताशकन्द, १९४७, पृष्ठ २४१। (रूसी सस्करण)

मे ही तुर्किस्तान मे ४०० कृषि कम्यून और आर्तेल उत्पन्न हुए। चालीस हजार किसान उनमे शरीक हुए और उनके पास ३५ हजार देसियातीना जमीन थी। मगर ये प्रारम्भिक कम्यून बस जीवन निर्वाह कर लेते थे। उनका कोई ठोस आर्थिक और तक्नीकी आधार नही था। उनका उद्देश्य यह था कि युद्ध के प्रारम्भिक कठिन दिनो मे गावो के भूमिहीन खेतिहर मजदूरो और गरीबो की बडी सख्या को खाद्यान्न के मामले मे आत्मनिर्भर बना दिया जाये। ये कम्यन बिल्कुल स्वेच्छाकृत थे और अलग देहकानो के अर्थतत्र को मिटाया नही गया। केद्र से खाद्यान्न की सप्लाई की बदौलत इन कम्यनो की कोई जरूरत नही रह गई और उन्हे तोड दिया गया। परन्तु इनसे कुलको और बाई लोगो के प्रचार का खोखलापन जाहिर हो गया कि सामूहिक कृषि अवास्तविक चीज है। इन कम्यूनो के अलावा तुर्किस्तान मे १७ सोवखोज (राजकीय फार्म) भी सगठित किये गये जिनके पास कुल २८,५०० देसियातीना जमीन थी। इन फार्मों को भी शुरू मे बडी कठिनाइया हुईं। मवेशी की बडी कमी थी और इसलिए जमीन किसानो को बटाई पर देनी पडी, मगर बटवारा अधिक न्यायपूर्ण, यानी फसल के ४/५ से ७/८ तक के आधार पर किया जाता था।

सोवियत सत्ता ने जेतीसुव म भूमि सुधार के काम पर तत्काल ध्यान दिया। वहा रूसी आप्रवासियो के आकर बसने से देशी किर्गिज लोगो को बहुत हानि पहुची थी। किर्गिज खानाबदोशो को उनकी सबसे अच्छी भूमि से बेदखल कर दिया गया था। इन रूसी अधिवासियो द्वारा भूमि पर अधिकार उस समय बहुत बडे पैमाने पर होने लगा, जब इसे १९१६ के विद्रोह मे किर्गिजो के भाग लेने के कारण उनके खिलाफ दड के रूप म इस्तेमाल किया जाने लगा। तुर्किस्तान मे सोवियत शासन के प्रथम दो वर्षों म जेतीसुव मे भूमि-सुधार की समस्या को कई कारणो से हाथ नही लगाया जा सका था। फिर, जेतीसुव के सोवियत और पार्टी सगठन पर भी कुछ कुलक रग चढा हुआ था और इससे भी वहा भूमि-सुधार पर अमल करने मे बाधा पडी।

परन्तु तुर्किस्तान आयोग ने जेतीसुव म भूमि-सुधार की समस्या के समाधान के लिए मुस्तैदी से और दृढतापूर्वक कदम उठाया। इसने पहले तो

पार्टी और सोवियतो स गैरी वर्गों के लोगा को निकाला। जो किगिज भागकर चीन चले गये थे, उन्हे वापस बुलाने का प्रबध किया गया। ४ मार्च, १६२० को जब्ती जमीनें स्थानीय श्रमजीवी किसानो को वापस देने के सबध मे आज्ञप्ति जारी की गई। अप्रैल १६२० म तुर्किस्तान की केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति ने अस्थायी भूमि-बेदखली की। चीन से वापस आनेवाले किगिजा के पुन आवास पर ४ करोड ४५ लाख रूबल की रकम खर्च की गई। सोवियता की नवी क्षेत्रीय काग्रेस ने भी आदेश दिया कि रूसी अधिवासियो ने १६१६-१६१८ की अवधि म देशी किसाना और खानाबदोशों की जिन जमीनो पर कब्जा कर लिया है उन्हे वापस किया जाये। इसने तुर्किस्तान म बाहर से सभी प्रकार के लोगो के आकर बसने और देशी लोगो की जमीनो पर कब्जा करने पर प्रतिबंध लगा दिया।* इस तरह भूमि-सुधार की सबसे पहली कारवाई उन इलाको म की गई, जहा रूसी कुलक आवासन के कारण समस्या ने जातीय रूप धारण कर लिया था। यह बिल्कुल स्वाभाविक भी था, क्योकि देशी बाई और मानप लोग स्थिति से लाभ उठाकर अपने वर्गीय हित म जातीय भावनाओं को उत्तेजित कर रहे थे।

सोवियत सरकार ने गृहयुद्ध के दौरान कृषि अर्थतंत्र को पुन युद्धपूर्व के स्तर पर पहुचाने के लिए काफ़ी काम किया। लेनिन ने १७ मई, १६२० को एक आज्ञप्ति पर हस्ताक्षर करके तुर्किस्तान म सिंचाई प्रयोजना के निर्माण के लिए पाच करोड रूबल की रकम मजूर की। २ नवम्बर, १६२० को उन्होंने तुर्किस्तान और आजरबैजान म कपास की खेती की बहाली के लिए ६० सो० स० स० जनतत्र के सोवनारखोज के फमले पर हस्ताक्षर किया। अप्रैल १६१८ मे सोवनारखोज ने तुर्किस्तान मे कपास की खेती और रूई उद्योग के नवीनीकरण के लिए ५० करोड २० लाख रूबल पूजी निवेश किया।** इसके तुरत बाद दो सूती मिलो को

---

*"सोवियतो की काग्रेसो की दस्तावेजें", पृष्ठ ४३५।

**स० मुरावेइस्की, "मध्य एशिया मे क्रातिकारी आदोलन के इतिहास सबधी रेखा", ताशकन्द, १६२६, पृष्ठ २२। (रूसी सस्करण)

तुर्किस्तान भेजने का फैसला किया गया। इन प्रारम्भिक प्रयासो के फलस्वरूप कपास की खेती के क्षेत्र मे १९१८ की तुलना मे तीन लाख देसियातीन ज़मीन की वृद्धि हुई। सोवियत सत्ता ने मवेशी और औज़ारो से देहक़ानो की सहायता की। कपास उपजानेवाले किसानो का काफी रकम पेशगी दी गई और उन्हे बीज और खाद भी मुहैया की गई। इन भौतिक प्रोत्साहनो के कारण कपास की खेती के क्षेत्र मे केवल १९२० मे ही पिछले वर्ष की तुलना म २१,००० देसियातीना ज़मीन की वृद्धि हुई। मगर इन सब प्रयासो के बावजूद तुर्किस्तान म १९२० मे कुल बोवाई का क्षेत्र १९१८ का ३५ प्रतिशत ही था।*

गृहयुद्ध के दिनो म खाद्यान्न की समस्या बहुत तीव्र हो गई। तुर्किस्तान म बहुत दिना मे खाद्याभाव चला आ रहा था और वह मध्य रूस स खाद्यान्न की आपूर्ति पर निर्भर करता था। वहा से हर साल सवा करोड से डेढ करोड पूद अनाज का आयात होता था। अक्तूबर क्राति से पहले लगातार तीन वर्ष फसल मारी गई। इससे समस्या और तीव्र हो उठी। १९१८-१९१९ मे तुर्किस्तान सोवनारकोम ने दो करोड रूबल की रकम अनाज खरीदने के लिए अलग की। परन्तु खुली मडी मे दाम रोज़ बढ रहा था, इसलिए कोई भी निश्चित दाम पर राज्य के हाथ अनाज बेचने को तैयार नही था। तब सरकार को किसानो पर जिस रूपी कर लगाना पडा – फसल का ४ प्रतिशत। परन्तु इस तरह केवल ४५ लाख पूद अनाज मिला, जबकि लक्ष्य दो करोड पूद था। ऐसी स्थिति म केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति को मजबूर होकर खाद्यान्न के राजकीय इजारे के सबध मे एक आज्ञप्ति जारी करनी पडी। शहरा म राशनिग करनी पडी। प्रतिदिन प्रति व्यक्ति का १/४ से एक पाउड तक रोटी मिलती थी। इसकी मात्रा उस व्यक्ति की सामाजिक उत्पादिता पर निर्भर करती थी।** कुल मिलाकर सोवियत प्रशासन ने अपनी खाद्य नीति पर सफलतापूर्वक अमल किया, उसमे कोई विकृति नही होने दी, यद्यपि कुछ अधिकारियो द्वारा

*म० वहाबोव उपरोक्त पुस्तक पृष्ठ २६३।
**वही, पृष्ठ २६५–२६६।

तुर्किस्तान में २,०२२ प्राथमिक स्कूल खुल गये थे, जिनमें १,६५,१२२ बच्चों में से ६७,००० बच्चे स्थानीय जातियों के थे।* शिक्षा पर बजट का खर्च १६१७ के २३ लाख ५० हज़ार रूबल से बढ़कर १६२० में ६५ लाख रूबल हो गया। शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए कम अवधि के पाठ्यक्रम जारी किये गये। १६२० तक १,०४६ व्यक्ति इस तरह के ११ पाठ्यक्रम पूरा कर चुके थे। उसी साल ११ पुनश्चर्या पाठ्यक्रम संगठित किये गये जिनमें १,०६२ व्यक्तियों ने भाग लिया। वयस्कों के निरक्षरता उन्मूलन अभियान में सभी शहरों में सध्या स्कूल खोले गये। १६२० में ३१ पेशावर और तकनीकी स्कूल थे जिनमें ५,५०० व्यक्ति शिक्षा पा रहे थे।

२१ अप्रैल, १६१८ को ताशकन्द में तुर्किस्तान जन विश्वविद्यालय का उद्घाटन हुआ। क्रांति से पहले तुर्किस्तान में उच्च शिक्षा की कोई संस्था नहीं थी। विश्वविद्यालय में पांच विभाग थे जिनमें १६१८-१६१६ में १२०० विद्यार्थी थे। १६१६-१६२० में यह संख्या बढ़कर १,४७० हो गई। ७ सितम्बर, १६२० को लेनिन के हस्ताक्षर से एक आज्ञप्ति जारी करके तुर्किस्तान जन विश्वविद्यालय का पुनर्गठन तुर्किस्तान राजकीय विश्वविद्यालय के रूप में किया गया। मास्को और पत्रोग्राद ने मध्य एशिया के इस पिछड़े हुए इलाके की सांस्कृतिक प्रगति के लिए अपने सर्वश्रेष्ठ प्रोफेसर भेजे। १६२० के अंत तक ताशकन्द के विश्वविद्यालय में २,६४१ छात्र थे।

गृहयुद्ध की अवधि में ही तुर्किस्तान में सोवियत बुद्धिजीवियों का जन्म हुआ। हमज़ा और जौकी, जो उदार विचारों के जनवादी थे, बोल्शेविकों के सक्रिय समर्थक बन गये। उनकी यह तब्दीली तथा पूंजीवादी-राष्ट्रवादियों के विरुद्ध उनका संघर्ष मध्य एशिया में सोवियत बुद्धिजीवियों के विकास में एक नये युग के प्रारम्भ का प्रतीक था। फरगाना में उज़बेक सोवियत थियेटर का जन्म सोवियत सत्ता के लिए संघर्ष की आग में हुआ। हमज़ा इसके संस्थापक थे। उसी साल ताशकन्द संगीत विद्यालय कायम हुआ

*, पृष्ठ २६७-२६८।

जहा उज्बेक और ताजिक सगीत का नियमित अध्ययन किया जाने लगा। उन्ही दिनो सोवियत जातीय अखबार और पुस्तक प्रकाशन शुरू हुआ। १९१८ १९२० के दौरान मे उज्बेक भाषा म ११ अखबार प्रकाशित होते थे और इनके अलावा कज़ाख और ताजिक भाषा के अखबार भी थे। इसी दौर म उज्बेक लिपि म सुधार करने के प्रारम्भिक प्रयास हुए। कई अक्षर, जिनकी उज्बेक भाषा मे जरूरत नही थी, निकाले गये और कई नये अक्षर जोड गये ताकि लिपि उच्चारण के अधिक अनुकूल हो जाये।

इस प्रकार गहयुद्ध का काल केवल बर्बादी और विनाश का ही काल नही था। वह तुर्किस्तान के जनगण के जीवन के आर्थिक और सास्कृतिक क्षेत्रो म महत्वपूर्ण परिवतनो का भी दौर था। गृहयुद्ध के दिनो मे जन राजनीतिक कायकलाप म भी वद्धि हुई जिसका केन्द्र बिन्दु सोवियत सत्ता थी। सभी प्रयासो का उद्देश्य सशस्त्र प्रतिक्राति को परास्त करना था जिसे वैदेशिक सैनिक हस्तक्षेप की सहायता मिल रही थी।

अधराष्ट्रवाद तथा राष्ट्रवाद के विरुद्ध पार्टी का सघष

मध्य एशिया मे सोवियत सत्ता की सफलता का कारण बडी हद तक जातीय सबधो के क्षेत्र म उसकी सही नीति है। अधराष्ट्रवादी तथा राष्ट्रवादी भटकावो के विरुद्ध तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी का सघष वदेशिक तथा सोवियत दोनो ही ऐतिहासिक साहित्यो मे बहुत वाद विवाद तथा भ्रम का विषय रहा है। सोवियत लेखको की कुछ प्रारम्भिक कृतियो म अधराष्ट्रवादी भटकाव पर जरूरत से ज्यादा जोर देने और उन्हे बढा चढाकर पेश करने की प्रवत्ति दिखाई देती है। अत हम उनम से कुछ को इसी की रट लगाते पाते है कि स्थानीय बोल्शेविको ने जारशाही की "औपनिवेशिक विरासत" पायी थी। प्रारम्भिक स्थानीय रूसी बोल्शेविको म से अधिकाश को "श्रमिक अभिजात समुदाय" कह दिया गया, जो सवहारा के अधिनायकत्व के परदे मे अपनी अधिकारप्राप्त स्थिति को ज्यो का त्या बनाये रखना चाहते थे। उनकी राय म "यूरोपीय सवहारा" और "देशी

तुकिस्तान मे २,०२२ प्राथमिक स्कूल खुल गये थे, जिनमे १,६५,१२२ बच्चो मे से ६७,००० बच्चे स्थानीय जातियो के थे।* शिक्षा पर बजट का खच १६१७ के २३ लाख ५० हजार रूबल से बढकर १६२० म ६५ लाख रूबल हो गया। शिक्षका के प्रशिक्षण के लिए क्म अवधि के पाठ्यक्रम जारी किये गये। १६२० तक १,०४६ व्यक्ति इस तरह के ११ पाठ्यक्रम पूरा कर चुके थे। उसी साल ११ पुनश्चर्या पाठ्यक्रम सगठित किये गये जिनमे १,०६२ व्यक्तिया ने भाग लिया। वयस्को के निरक्षरता उन्मूलन अभियान मे सभी शहरा मे सध्या स्कूल खोले गये। १६२० मे ३१ पेशावर और तक्नीकी स्कूल थे जिनमे ५,५०० व्यक्ति शिक्षा पा रहे थे।

२१ अप्रल, १६१८ का ताशकन्द मे तुकिस्तान जन विश्वविद्यालय का उदघाटन हुआ। क्राति से पहले तुकिस्तान मे उच्च शिक्षा की कोई सस्था नही थी। विश्वविद्यालय मे पाच विभाग थे जिनम १६१८ १६१६ मे १२०० विद्यार्थी थे। १६१६ १६२० मे यह सख्या बढकर १,४७० हो गई। ७ सितम्बर, १६२० को लेनिन के हस्ताक्षर से एक आज्ञप्ति जारी करके तुकिस्तान जन विश्वविद्यालय का पुनगठन तुकिस्तान राजकीय विश्वविद्यालय के रूप मे किया गया। मास्को और पेत्रोग्राद ने मध्य एशिया के इस पिछडे हुए इलाके की सास्कृतिक प्रगति के लिए अपने सवश्रेष्ठ प्रोफेसर भेजे। १६२० के अत तक ताशकन्द के विश्वविद्यालय म २,६४१ छात्र थे।

गृहयुद्ध की अवधि मे ही तुकिस्तान मे सोवियत बुद्धिजीविया का जन्म हुआ। हमजा और जौकी, जो उदार विचारो के जनवादी थे, बोल्शेविका के सक्रिय समथक बन गये। उनकी यह तब्दीली तथा पूजीवादी राष्ट्रवादिया के विरुद्ध उनका सघष मध्य एशिया मे सोवियत बुद्धिजीविया के विकास मे एक नय युग के प्रारम्भ का प्रतीक था। फरगाना म उज्बेक सोवियत थियेटर का जन्म सोवियत सत्ता के लिए सघष की आग मे हुआ। हमजा इसके सस्थापक थे। उसी साल ताशकन्द सगीत विद्यालय कायम हुआ

*म० वहाबोव, उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ २६७–२६८।

जहा उज्बेक और ताजिक सगीत का नियमित अध्ययन किया जाने लगा। उन्ही दिनो सोवियत जातीय अखबार और पुस्तक प्रकाशन शुरू हुआ। १६१८ १६२० के दौरान मे उज्बेक भाषा मे ११ अखबार प्रकाशित होते थे और इनके अलावा कजाख और ताजिक भाषा के अखबार भी थे। इसी दौर म उज्बेक लिपि म सुधार करने के प्रारम्भिक प्रयास हुए। कई अक्षर, जिनकी उज्बेक भाषा म जरूरत नही थी, निकाले गये और कई नये अक्षर जोडे गये ताकि लिपि उच्चारण के अधिक अनुकूल हो जाये।

इस प्रकार गहयुद्ध का काल केवल बर्बादी और विनाश का ही काल नही था। वह तुर्किस्तान के जनगण के जीवन के आर्थिक और सास्कृतिक क्षेत्रो म महत्वपूर्ण परिवतनो का भी दौर था। गृहयुद्ध के दिनो मे जन राजनीतिक कायकलाप म भी वद्धि हुई जिसका केद्र बिदु सोवियत सत्ता थी। सभी प्रयासो का उद्देश्य सशस्त्र प्रतिक्राति को परास्त करना था जिसे वैदेशिक सैनिक हस्तक्षेप की सहायता मिल रही थी।

अधराष्ट्रवाद तथा राष्ट्रवाद के विरुद्ध पार्टी का सघष

मध्य एशिया मे सोवियत सत्ता की सफलता का कारण बडी हद तक जातीय सबधो के क्षेत्र म उसकी सही नीति है। अधराष्ट्रवादी तथा राष्ट्रवादी भटकावो के विरुद्ध तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी का सघष वैदेशिक तथा सोवियत दोनो ही ऐतिहासिक साहित्यो म बहुत वाद विवाद तथा भ्रम का विषय रहा है। सोवियत लेखको की कुछ प्रारम्भिक कृतियो म अधराष्ट्रवादी भटकाव पर जरूरत से ज्यादा जोर देने और उन्हे बढा चढाकर पेश करने की प्रवत्ति दिखाई देती है। अत हम उनमे से कुछ को इसी की रट लगाते पाते हैं कि स्थानीय बोल्शेविको ने जारशाही की "औपनिवेशिक विरासत" पायी थी। प्रारम्भिक स्थानीय रूसी बोल्शेविको म से अधिकाश को "श्रमिक अभिजात समुदाय" कह दिया गया, जो सवहारा के अधिनायकत्व के परदे मे अपनी अधिकारप्राप्त स्थिति को ज्यो का त्यो बनाये रखना चाहते थे। उनकी राय म "यूरोपीय सवहारा" और "देशी

एशियाई जनगण" का राष्ट्रीय अतविरोध इन दोनो समहो के भीतर के वर्गीय अतविरोध से ज्यादा गहरा था। पश्चिम के अधिकाश लेखको न भी कमोबेश यही मत अपनाया है और उन सोवियत लेखका से व्यापक उद्धरण दिये है जो तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की पक्तिया मे अधराष्ट्रवादी प्रवृत्तियो पर जोर देते थे।

लेकिन इस धारणा को इतिहास के तथ्यो से कोई मरोकार नही है। इससे इनकार नही किया जा सकता कि पार्टी की पक्तियो म कुछ अधराष्ट्रवादी विचार के व्यक्ति मौजूद थे, मगर यह कहना बिल्कुल गलत होगा कि उनकी मख्या किसी भी समय इतनी अधिक थी कि उन्हाने जातीय समस्या के बारे मे पार्टी की आम स्वस्थ नीति को विकृत कर दिया। पार्टी मे हमेशा ठोस मार्क्सवादी-लेनिनवादी तत्वो का सशक्त दल मौजूद रहा है जिसने पार्टी नीति से अधराष्ट्रवादी या राष्ट्रवादी हर तरह के भटकाव के विरुद्ध निरन्तर सघप किया है।

कभी कभी केन्द्र को बहुत श्रेय दिया जाता है कि उसने स्थानीय गुमराह बोल्शेविको की गलतियो का सुधार किया, और ऐसी धारणा पदा करने का प्रयत्न किया जाता है मानो सितम्बर १९१९ मे केन्द्र से तुर्किस्तान का सबध बहाल होने से पहले पार्टी और सोवियतो के ढाचे पर रूसी अधराष्ट्रवादी छाये हुए थे, जो स्थानीय लागो को तिरस्कार की दृष्टि से देखते थे और सरकार मे उनके उचित स्थान से उन्ह वचित रखते थे, और माना पूरी परिस्थिति म परिवतन केवल उस समय हुआ जब केन्द्र के प्रतिनिधि आये और आयागा आदि की नियुक्ति हुई। परतु अधराष्ट्रवाद के विरुद्ध सघप रूसी तथा देशी कम्युनिस्टो के बीच का सघप नहीं था, इसमे दशी कम्युनिस्टा को केन्द्र के ऐसे प्रतिनिधिया का समथन मिलता था, जैसे विशेष कमिस्सर कावोजेव और फ्रुंजे, कूइबिशेव तथा तुर्किस्तान आयोग तथा रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) के तुर्किस्तान ब्यूरो के दूसरे सदस्य।

पार्टी नीति स भटकावो के विरुद्ध सघप का असल म पार्टी के भीतर जातीय समूहा से कोई सबध न था। अत अनेक स्थानीय रूसी कम्युनिस्टा ने अधराष्ट्रवादी विचार के रूसी कम्युनिस्टा क विरुद्ध समान सघप मे अपने

मुस्लिम साथियो का साथ दिया, ठीक उसी तरह जिस तरह मुस्लिम साथियो ने पूजीवादी राष्ट्रवादियो का परदाफाश करने म रूसी कम्युनिस्टो के साथ सयुक्त मोरचा बनाया। इसम स देह नही कि के द्र के प्रतिनिधियो ने पार्टी को अधराष्ट्रवादी या राष्ट्रवादी पूर्वाग्रहो से मुक्त रखने म महत्वपूण भूमिका अदा की, मगर इसका यह मतलब नही कि उ होने जातीय सवाल पर पार्टी नीति की शुद्धता के लिए सघष अपने आप और अकेले किया। इस सघप म उ ह पार्टी की पक्तियो और आम जनगण से व्यापक जन समथन प्राप्त हुआ। दुर्भाग्यवश, कुछ सोवियत कृतियो म, जो व्यक्ति पूजा के प्रभाव म लिखी गई थी, विभि न आयोगा और ब्यूरो की भूमिका को बहुत बढा चढाकर पेश किया गया है पर अधराष्ट्रवाद और राष्ट्रवाद के विरुद्ध सघप के जन स्वरूप की ओर उचित ध्यान नही दिया गया है।

निस्सदेह, तुकिस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी ने अक्तूबर क्रांति के बाद के प्रारम्भिक दिना मे स्थानीय जातियो के लोगो के प्रति कुल मिलाकर बडी हद तक सही नीति अपनायी। जातीय सवाल हमेशा तुकिस्तान के बोल्शविका के ध्यान का के द्र बना रहा। १६०५ १६०६ मे ही बोल्शेविका न ताशक द और समरक द से जो गैरकानूनी पत्र प्रकाशित किये, उनम जातीय सवाल पर काफी ध्यान दिया गया था। उन्होने देशी लोगा म काम करने के महत्त्व पर ज़ोर दिया था।* तुकिस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की पहली काग्रेस (१७–२६ जन, १६१८) ने मुस्लिम जनगण म पार्टी काय पर अपने प्रस्ताव म इस बात पर ज़ोर दिया था कि व्यापक मुसलमान जनता को नये जीवन के निर्माण काय म खीच लेना ज़रूरी है। उसने स्थानीय जातियो की भाषाओ को रूसी के साथ-साथ राज्य भाषाओ के रूप म स्वीकार किया। उसने माग की कि सभी ओब्लास्तो, उयेज्दो आदि मे जातीय मामलो की कमिसारियत नियुक्त की जाए जिनका काम मुसलमानो को सोवियत निकायो म लाने के लिए प्रचार करना हो। उसने

---

*मजारा, "१६०५–१६२० म मध्य एशिया म क्रातिकारी आ दोलन (स्मृतिया)", ताशक द, १६३४ पृष्ठ १६। (रूसी सस्करण)

मुस्लिम मेहनतकशो मे पूरा विश्वास प्रकट किया और मुस्लिम सर्वहारा मे से लाल सेना के दस्ते सगठित करने का आह्वान किया।*

दिसम्बर १६१८ मे तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी की दूसरी काग्रेस के समय ही पार्टी सदस्यो की कुल सख्या का लगभग आधा भाग देशी कम्युनिस्ट थे और मुस्लिम श्रमजीवी जनता के प्रतिनिधि अप्रैल १६१८ से तुर्किस्तान केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति और सोवनारकोम जसे सोवियत सत्ता के उच्च निकायो मे नियुक्त किये जाने लगे थे। यह ध्यान रहे कि पार्टी की दूसरी काग्रेस ने मुस्लिम जनता मे शैक्षणिक और प्रचार काय पर असतोप प्रकट किया था और यह माग की थी कि सोवियतो और अन्य सामाजिक सगठनो मे स्थानीय जातिया के श्रमजीवी जनगण को ज्यादा व्यापक पैमाने पर खीचा किया जाये जिसके लिए उन्हे प्रशासकीय तथा अन्य पदो पर नियुक्त किया जाये।** इन सब बातो से यही प्रकट होता है कि क्राति के तुरत बाद के जमाने मे जातीय सवाल पर पार्टी की नीति सही थी।

अक्सर तोबोलिन के नेतत्व मे "पुराने कम्युनिस्टो" के समूह पर यह आरोप लगाया जाता है कि वे स्थानीय कम्युनिस्टो के प्रति अधराष्ट्रवादी रुख अपनाते थे।*** परन्तु इसके लिए ठोस सबूत देना अभी बाकी है। यह सही है कि इस गिरोह ने पार्टी के भीतर अपना एक गुट सगठित करने का अनुचित कदम उठाया था जिसका एकमात्र आत्मनिष्ठ दावा यह था कि ताशकन्द नगर पार्टी सगठन मे अनेक व्यक्तियो को इस गिरोह के लोग पसन्द नही करते थे और उन्होंने पार्टी अनुशासन मानने से इनकार कर दिया था जिसके लिए दूसरी काग्रेस ने इनकी निन्दा की। परन्तु इसके अलावा तोबोलिन पर अधराष्ट्रवाद का कोई ठोस आरोप नही लगाया जा सकता। तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी की दूसरी काग्रेस ने "पुराने कम्युनिस्टो"

---

*"तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की काग्रेसो के प्रस्ताव और निणय, १६१८–१६२४", ताशकन्द, १६५८ पृष्ठ ११–१२। (रूसी सस्करण)

**'तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की दूसरी काग्रेस की दस्तावेजें", मास्को-ताशकन्द, १६६४, पृष्ठ ६२। (रूसी सस्करण)

***"उजबेक सोवियत समाजवादी जनतन्त्र का इतिहास', खण्ड २, पृष्ठ ६१।

के समूह और ताशकन्द नगर पार्टी इकाई म कोई विचारधारात्मक विभेद नही पाया। इस इकाई के नेता भी रूसी कम्युनिस्ट थे। उनके बीच अधराष्ट्रवादी भटकाव का कोई सवाल नही था।

इसका कोई सबूत नही मिलता कि जनवरी १६१६ से पहले जातीय सवाल पर पार्टी नीति को महाशक्तिवादी अधराष्ट्रवाद की ओर स कोई खतरा था। उस महीने ओसिपाव के प्रतिक्रांतिकारी विद्रोह से तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी के नेतत्व को बडा धक्का लगा। ओसिपोव की धोखेबाजी के फलस्वरूप अनेक अनुभवी और विश्वसनीय स्थानीय नेताओ की हत्या कर दी गई। पहले ही जुलाई १६१८ म कई महत्वपूण बोल्शेविक नेता अशकाबाद और किज़िल अरवात म प्रतिक्रांतिकारी षडयत्रकारियो द्वारा मारे जा चुके थे। इन भारी नुकसानो के कारण जो कि पार्टी को १६१८-१६१६ म उठाने पडे पार्टी मे सुयोग्य नेतत्व का अभाव हो गया और इसलिए अधराष्ट्रवादी भटकाव को सिर उठाने का मौका मिल गया। तुर्किस्तान की केन्द्रीय कायकारिणी समिति और **सोवनारकोम** के नवनिर्वाचित अध्यक्ष कज़ाकाव वामपक्षी समाजवादी क्रातिकारी उस्पेन्स्की के साथ अनचाहे ही उस नीति की धारा मे बह गये। परन्तु इस भटकाव की जिम्मेदारी बोल्शेविको से अधिक वामपक्षी समाजवादी क्रातिकारियो पर थी और फिर भी सपूण भटकाव कभी नही होने पाया। वह **सोवनारकोम** तथा पार्टी की **क्राइकोम** (क्षेत्रीय समिति) म अलग अलग नेताओ द्वारा कुछ इक्की-दुक्की घटनाओ तक ही सीमित रहा।

१६१६ के प्रारम्भ से पार्टी तथा सावियत काय-क्षेत्र म महाशक्तिवादी अधराष्ट्रवाद के विरुद्ध तीव्र सघप शुरू हुआ। यह पार्टी के लिए बहुत महत्व पूण था क्योकि पूजीवादी राष्ट्रवादी देशी मेहनतकशो म रूसी मज़दूर वग के विरुद्ध असतोष का बीज बोने का कोई अवसर छोडते नही थे। परन्तु अधराष्ट्रवाद क विरुद्ध सघप कोई मध्य एशिया की ही परिघटना नही थी। केन्द्र म लेनिन को भी बुखारिन और प्याताकोव के विरुद्ध सघप करना पडा था जो रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की आठवा काग्रेस द्वारा स्वीकृत कायक्रम म राष्ट्रीय आत्मनिणय के अधिकार को शामिल करने का विरोध कर रहे थे।

तुर्किस्तान की सोवियतो की सातवी काग्रेस (मार्च १६१८) और तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी के दूसरे सम्मेलन मे अधराष्ट्रवाद के विरुद्ध सघर्ष छेडा गया। पार्टी के ठोस मार्क्सवादी तत्व कोबोजेव के गिर्द जमा हो गये, जो मार्च १६१६ मे केन्द्र के विशेष प्रतिनिधि के रूप मे ताशकन्द आये थे। सोवियतो की सातवी काग्रेस मे कोबाज़ेव के नेतृत्व मे जातीय विभाग की स्थापना हुई, जिसने खाद्यान्न के मोरचे पर कज़ाकोव-उस्पेन्स्की गिरोह के सरकारी तथा पार्टी नेताओ की ग़लतियो की आलोचना की। काग्रेस मे रिस्कूलोव ने एक रिपोर्ट पेश की, जिसमे खाद्यान्न निदेशालय की नीति की आलोचना थी। काग्रेस ने कहा कि इस नीति के कारण सर्वहारा के दो भाग—रूसी और देशी—एक दूसरे के विरुद्ध बना दिये गये थे।

सोवियतो की सातवी काग्रेस के जातीय विभाग ने माग की कि सरकार मुस्लिम सर्वहारा को प्रतिक्राति के विरुद्ध लडने के लिए हथियारो से लैस करे। उसने क्रातिकारी सघर्ष मे मुस्लिम मेहनतकशो की भूमिका को कम करके आकने के लिए सरकार के कुछ सदस्यो की आलोचना की। उसने नारा दिया कि लाल गार्ड मे से सभी सन्देहजनक तत्व निकाले जायें और क्षेत्रीय पार्टी काग्रेस का शीघ्र आयोजन किया जाये। उसने इस बात पर असतोष प्रकट किया कि नई सरकार मे देशी आबादी के प्रतिनिधियो को केवल सात स्थान दिये गये थे।

कज़ाकोव, उस्पेन्स्की और सोलकिन ने सोवियतो की सातवी काग्रेस मे जातीय विभाग कायम करने का विरोध किया और जातीय मामलो की कमिसारियत को भग करने का प्रस्ताव पेश किया। परन्तु काग्रेस ने यह माग अस्वीकार कर दी। कज़ाकोव-उस्पेन्स्की गिरोह ने यह भी दावा किया कि रू० सा० स० स० जनतन्त्र की सरकार द्वारा स्वीकृत हर कानून को तुर्किस्तान मे लागू होने के लिए यहा की केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति की अनुमति प्राप्त होनी चाहिए। इस तरह की क्षेत्रीय मागो के ज़रिये अधराष्ट्रवादी गिरोह अपने मत को तुर्किस्तान की प्रभुता के अधिकारो के लिए तथा केन्द्र से इसकी तथाकथित स्वतन्त्रता के लिए सघर्ष का रूप देना चाहता था।

अगर सोवियतो की सातवी काग्रेस म कोबोज़ेव दल को विजय हुई, तो पार्टी के दूसरे क्षेत्रीय सम्मेलन ने पलडा किसी हद तक वज़ाकोव के पक्ष मे झुका दिया। पार्टी सम्मेलन ने सोवियतो की सातवी काग्रेस मे रिस्कूलोव द्वारा तुर्किस्तान पार्टी की पूरी केन्द्रीय समिति की व्यापक आलोचना को अनुचित ठहराया। उसने कहा कि गलतिया पूरी पार्टी नीति की नही, व्यक्तिगत पार्टी नेताओ की थी। उसने पार्टी की क्राइकोम (क्षेत्रीय समिति) मे विश्वास प्रकट किया और सावियता की सातवी काग्रेस के जातीय विभाग द्वारा प्रतिरोध को निराधार कहकर अस्वीकार किया। सम्मेलन ने मुस्लिम जनता म प्रचार काय करने के लिए पार्टी म एक मुस्लिम ब्यूरो कायम करने का निश्चय किया। मुस्लिम ब्यूरो को पार्टी का सहायक निकाय होना था। और उसको निगरानी और नियतण मे काम करना था। पार्टी के दूसरे सम्मेलन ने एक प्रस्ताव द्वारा कोबोज़ेव को वापस बुलाने की माग की। उन्हे पदच्युत कर दिया गया और उनकी हरकता की जाच करने का आदेश दिया गया।* कोबोज़ेव की कारवाइया से खीज आकर आइकोम के कुछ सदस्यो ने शकीरोव को पार्टी की केन्द्रीय समिति क सामने कोबोज़ेव के खिलाफ शिकायत करने के लिए मास्को भेजा।

तुर्किस्तानी कम्युनिस्ट पार्टी की तीसरी काग्रेस (१ १५ जून, १६१६) मे अधराष्टवाद के विरुद्ध सघप ने तुर्किस्तान मे मुस्लिम सवहारा के अस्तित्व पर सिद्धातवादी बहस का रूप लिया। सोलकिन का कहना था कि चूकि मुसलमानो म अभी सामती सबध छाये हुए हैं और खानाबदोशी के सबल अवशेष भी मौजूद है, इसलिए कोई मुस्लिम सवहारा नही है। उनका समथन कास्तानतिनोपोल्स्की ने किया। इनका कहना था कि तुर्किस्तान म केवल अद्ध-सवहारा वग है और कोई सवहारा नही, जो ऐतिहासिक प्रक्रिया को आगे बढाये। कोन्स्तानतिनोपोल्स्की ने भय प्रकट किया कि देशी सवहारा के अभाव म तुर्किस्तान म राष्ट्रीय आन्दोलन कही

---

* "तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की तीसरी काग्रेस की दस्तावज़," ताशकन्द, १६१६, पृष्ठ १३४–१३५।

सव-इसलामवाद के हाथ मे न पड जाये। परन्तु कोबोजेव इससे सहमत नही थे। उन्होने बताया कि अभी ही पार्टी के आधे से अधिक सदस्य देशी कम्युनिस्ट है जिससे यह स्पष्ट है कि मुस्लिम जनता पार्टी के कायक्रम की ओर आकर्षित हुई है।* पार्टी की क्राइकोम के कायकलाप का मूल्याकन करते हुए तीसरी पार्टी काग्रेस ने सोवियतो की सातवी काग्रेस मे जातीय विभाग का सगठन करने की कायनीति को गलत ठहराया। क्राइकोम की रिपोट पर अपने प्रस्ताव मे तीसरी पार्टी काग्रेस न यह विचार प्रकट किया कि पिछली पार्टी काग्रेसो द्वारा जो काम उसके सिपुद किये गये थ, उन सबो को क्राइकोम ने पूरा नही किया है। प्रस्ताव ने खासकर जिन बाता की चचा की, उनमे स्थानीय क्षेत्रा, विशेषकर मुसलमाना म सही क्रातिकारी काम का अभाव तथा पार्टी पक्तियो मे अनुशासन की कमी थी। काग्रेस न पार्टी के सामने अनुशासन को सुदढ करने और मुस्लिम ब्यूरो के जरिये स्थानीय आबादी मे पार्टी काय को तेज करने का कायभार रखा।

तीसरी पार्टी काग्रेस ने पार्टी समितियो के भीतर काम करनेवाले मुस्लिम विभागो को वही हैसियत दी, जो पार्टी इकाइयो की थी, और उह मुस्लिम ब्यूरो के नियत्रण मे रखा जिसे हर सम्भव सहायता देनी थी। तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की क्राइकोम म कोबोजेव, रिस्कूलोव, आफन्दीयेव, खोजायेव और अलीयेव के निर्वाचन से कजाकोव का अधराष्ट्रवादी गिराह कुछ कमजोर हुआ। परन्तु यह गिरोह अभी भग नही हुआ था। कजाकोव अभी केद्रीय कायकारिणी समिति के अध्यक्ष थे। थोडे ही दिना मे इस गिरोह के खिलाफ लम्बा सघष शुरू हुआ।

इस सघष के पुन छिडन का कारण १२ जुलाई, १६१६ को रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बा०) की केद्रीय समिति का यह सदेश था कि क्षेत्रीय प्रशासन मे स्थानीय आबादी का सानुपातिक प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करना चाहिए। केद्रीय समिति ने तुर्किस्तान पार्टी और सरकार का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया कि "तुर्किस्तान की स्थानीय आबादी की राजकाय

*"तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की तीसरी काग्रेस की दस्तावेजें', पृष्ठ ५०।

कायकलापो म सानुपातिक शिरक्त होनी चाहिए, जिसके लिए पार्टी का सदस्य होना जरूरी नही है। अगर मुस्लिम मजदूरो के सगठन उनकी उम्मीदवारी का अनुमोदन कर दें, तो यह काफी है।"* कजाकोव उस्पेन्स्की गिरोह के अधराष्ट्रवादी विचार के लोगो ने देखा कि अगर इस आदेश पर अमल किया गया, तो उनकी स्थिति खतर म पड जायेगी। उन्होने यह तक पेश किया कि पार्टी की केन्द्रीय समिति तुर्किस्तान की स्थिति को ठीक तरह नही समझती है और कि स्थानीय मजदूर और किसान अभी परिपक्वता के उस स्तर पर नही पहुचे है, जो राजकीय कार्यकलाप मे शिरकत के लिए जरूरी है। उन्होंने अखबारो मे विज्ञप्ति के प्रकाशन मे बाधा डाली। २० जून, १६२० को उन्होने रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बा०) की केन्द्रीय समिति के पास एक तार भेजा, जिसमे इस आदेश पर अमल करना असम्भव बताया।

इस प्रकार सानुपातिक प्रतिनिधित्व पर केन्द्रीय समिति के आदेश के सबध मे तीव्र सघर्ष छिड गया। इसपर ताशकन्द, समरकन्द और फरगाना जैसे विभिन्न स्थानो मे पार्टी और जन-सभाओ म बहस हुई। १६ जुलाई, १६१६ को ताशकन्द के पुराने शहर मे एक सावजनिक सभा मे, जिसम पार्टी की क्षेत्रीय समिति तथा मुस्लिम ब्यूरो के कई सदस्य उपस्थित थे, एक प्रस्ताव स्वीकार करके इसकी फौरी तामील की, खासकर सानुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर तुर्किस्तान केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के पुनगठन की माग की गई। कजाकोव उस्पेन्स्की गिरोह ने कोबोजेव को बदनाम करना शुरू किया और उनपर देशी लोगो को रूसी मजदूरो के विरुद्ध उभारने का आरोप लगाया। उसने माग की कि केन्द्र कोबोजेव को वापस बुला ले, क्योकि वह व्यक्तिगत सत्ता की खातिर मुस्लिम वगच्युत तत्वा, भूतपूव व्यापारिया और कारोबारियो आदि के साथ साजबाज कर रहे है। केन्द्र के आदश का व्यापक पैमाने पर समथन किया गया। समरकन्द तथा अन्य शहरा म पार्टी इकाइया ने अपनी पूरी सहमति प्रकट की।

---

*'तुर्किस्तानस्की काम्मुनिस्त', अक ६२, १६ जुलाई, १६१६।

तुर्किस्तान की सोवियतो की आठवी काग्रेस तथा तुर्किस्तान का कम्युनिस्ट पार्टी की चौथी काग्रेस, जो सितम्बर १९१९ मे आयोजित हुई, एक बार फिर पार्टी और सरकार मे अधराष्ट्रवादी भटकाव के विरुद्ध सघर्ष का अखाडा बन गई। सोवियतो की आठवी काग्रेस मे कज़ाकोव-उस्पेस्की गुट ने एक प्रस्ताव पेश करके माग की कि जातीय मामला की जन कमिसारियत को तोड दिया जाये। कज़ाकोव उस्पेस्की गुट की अधराष्ट्रवादी प्रवत्ति के जवाब मे पार्टी मे राष्ट्रवादी भटकाव उत्पन्न हुआ जिसके अगुआ रिस्कूलोव थे। इसका पहला इज़हार **सोवनारकोम** का भग करन का प्रस्ताव था, जो रिस्कूलोव के पेश करने पर सोवियता की आठवी काग्रेस मे स्वीकृत हो गया। **सोवनारकोम** को भग कर दिया गया और इसका स्थान केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के भीतर की तीन परिषदो ने लिया। इससे सरकार के कार्यकारी निकायो के निपुण काम पर बुरा असर पडा।

चौथी क्षेत्रीय पार्टी काग्रेस न एक प्रस्ताव के ज़रिये सानपातिक प्रतिनिधित्व के सबध मे केन्द्र के आदेश के बुनियादी सिद्धातो को मजूर किया। उसने तुर्किस्तान की परिस्थितियो को ध्यान मे रखत हुए इसकी तामील के व्यावहारिक उपाय निकाले। चौथी काग्रेस ने निश्चय किया कि हर अलग अलग सूरत मे सानुपातिक प्रतिनिधित्व पर अमल तभी किया जायगा जब सोवियता की क्षेत्रीय या स्थानीय काग्रेस बाकायदा इसकी माग करेगी। इसपर अमल सोवियत विधान की धाराओ के अनुसार कम्युनिस्ट पार्टी की क्षेत्रीय और स्थानीय समितिया तथा मुस्लिम ब्यूरो के आम निदेशन मे किया जायेगा।* यह याद रखना चाहिए कि तुर्किस्तान मे मुस्लिम जनता अभी अच्छी तरह सगठित नही हो पायी थी और इसलिए स्वय अपनी जाति के शोषको के बहकावे मे आने का वास्तविक खतरा था।

सितम्बर १९१९ मे तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की चौथी काग्रेस म अधराष्ट्रवादी गुट को पार्टी के स्वस्थ तत्वो के हाथा मुह की खानी पडी। मुसलमान ही नही, कई रूसी प्रतिनिधियों ने भी सानुपातिक प्रतिनिधित्व

*'तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की काग्रेसो के प्रस्ताव और निर्णय', पृष्ठ ४९–५१।

के सबध म केद्र के तार का समथन किया। चुनाचे श्वात्स ने कहा कि किसी जाति की सख्या को ध्यान म नही लेना उचित नही है। उन्होने कहा कि "जहा तक प्रशासन मे लोगो के भाग लेने का सवाल है किसी जाति का सास्कृतिक स्तर कोई भूमिका अदा नही करता, क्योकि राजकीय कायकलाप के दौरान मे ही जाति इसका सबूत देती है कि वह उन कामो को पूरा कर सकती है या नही, जो उसके सिपुद किये गये है।'* कोबोजेव ने कहा कि केद्रीय समिति का तार तुकिस्तान की जातियो के आत्मनिणय की दिशा म एक नया कदम है।**

अधराष्ट्रवादी भटकाव के विरुद्ध सघप जारी ही था, जब तुक आयोग नवम्बर १९१९ म ताशकद पहुचा। आयोग ने पार्टी और सोवियत सगठनो स उन लोगो को निकालना शुरू किया जो उसकी राय म अधराष्ट्रवादी भटकाव क अपराधी थे। उसने कजाकाव उस्पेन्स्की, सोरोकिन और कई और व्यक्तियो को तुकिस्तान से चले जान का आदश दिया। कई जारशाही अधिकारियो के विरुद्ध कानूनी कारवाइया शुरू की गइ। आयोग ने मुस्तैदी से कदम उठाकर जेतीसुव म पार्टी की उयेज्द और ओब्लास्त समितियो को अधराष्ट्रवादी तत्वो से मुक्त किया। जेतीसुव के अलावा फरगाना और सिरदरिया ओब्लास्तो म भी इसी तरह के कदम उठाये गये।

ऐसी सही जातीय नीति के लिए, जो भटकावो से मुक्त हो, सघप को तेज करने म तुकिस्तान के कम्युनिस्टो के नाम लेनिन के पत्र ने बडी भूमिका अदा की। लेनिन ने रूसी कम्युनिस्टो को सलाह दी कि तुकिस्तान के लोगो से व्यवहार करने मे अत्यत सहिष्णुता और भरोसे से काम ले और इस बात पर जोर दिया कि रूसी साम्राज्यवाद के सभी चिह्न मिटा दिये जायें। अपने पत्र मे लेनिन न कहा कि तुकिस्तान के जनगण से सही सबध कायम करने का "जबरदस्त, युगातरकारी'

* 'तुकिस्तान मे रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) का मुस्लिम ब्यूरो", पृष्ठ ५२। (रूसी सस्करण)

** वही, पृष्ठ ६३।

महत्त्व है।* लेनिन के पत्र पर तुर्किस्तान भर मे पार्टी तथा सार्वजनिक सभाओ मे विचार किया गया और बहुत सताप प्रकट किया गया।

जव तुक आयोग के नेतत्व मे पार्टी ने अपनी सारी शक्ति और ध्य पार्टी से अधराष्ट्रवादी भटकाव का उन्मूलन करने मे लगा दिया तो पूजीवा राष्ट्रवाद के विरुद्ध सघर्ष की किसी हद तक उपेक्षा की गई। नतीजा य हुआ कि शीघ्र ही राष्ट्रवादी भटकाव उभरकर सामने आ गया औ तुर्किस्तान की पिछडेपन की स्थिति मे सोवियत काम के नि गम्भीर खतरा उत्पन्न हो गया।

राष्ट्रवादी भटकाव जनवरी १६२० मे सामने आया। इसने पाच क्षेत्रीय पार्टी सम्मेलन म तथा मुस्लिम कम्युनिस्टो के तीसरे क्षेत्रीय सम्मे मे सर उठाया। मुस्लिम ब्यूरो ने कुछ दिनो तक मुस्लिम जनता मे अच्छ काम किया, उनमे सोवियत तथा पार्टी आदर्शो का प्रचार किया, उ सोवियत सत्ता के नज़दीक लाया। परन्तु थोडे ही दिना मे वह पार्टी समानान्तर स्वतत्र सगठन के रूप मे काम करने लगा और रिस्कूलो आदि के राष्ट्रवादी विचारो के असर मे प्रतिक्रियावादी राष्ट्रवाद का अड्ड बन गया।

पार्टी के पाचवे क्षेत्रीय सम्मेलन ने निश्चय किया कि पार्टी के तीन अग्रिम निकायो, यानी तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी की क्राइकोम, क्षेत्री मुस्लिम ब्यूरो तथा वैदेशिक कम्युनिस्टो की क्षेत्रीय समिति क तुर्किस्तान की एक ही सयुक्त कम्युनिस्ट पार्टी मे मिला दिया जाय यह सही फैसला था जिससे पार्टी की एकजुटता और अधिक ब थी। परन्तु सम्मेलन ने रिस्कूलोव के कहने पर एक प्रस्ताव स्वीकार करके भारी गलती की जिसमे पार्टी का नाम बदलकर तुर्की जाति की कम्युनि पार्टी कर दिया गया था। रिस्कूलोव की राय म मुस्लिम जनता न क्राइक का मानना छोड दिया था और इसके फलस्वरूप तुर्किस्तान की कम्यु पार्टी अव उसपर अपना विचारधारात्मक प्रभाव नही डाल सकती थ इसलिए उन्होने पार्टी के नाम मे परिवर्तन करने का सुझाव दिया।

*व्ला० इ० लेनिन, सकलित रचनाए (चार भागो मे), प्रग प्रकाशन मास्को, १६६६, भाग ३, पृष्ठ २५६-२६०। (हिन्दी सस्करण

पार्टी के पाचवे क्षेत्रीय सम्मेलन क साथ ही साथ मुस्लिम कम्युनिस्टो का तीसरा क्षेत्रीय सम्मेलन भी हो रहा था। उसम रिस्कूलोव ने स्वायत्तता और तुर्किस्तान के सविधान पर अपनी रिपोर्ट म अपना राष्ट्रवादी भटकाव थोपने का प्रयास किया। उन्होने सुझाव दिया कि तुर्किस्तान जनतत्र का नाम बदलकर तुर्की जनतत्र कर दिया जाये। उनकी दलील यह थी कि कज़ाख, किर्गिज़ तुर्कमान ताजिक और उज्बेक अलग अलग जातिया नही, बल्कि एक ही जाति, यानी तुर्क है। मुस्लिम कम्युनिस्टो के तीसरे क्षेत्रीय सम्मेलन ने रिस्कूलोव का यह सुझाव मान लिया। उसन तुर्किस्तान के अधिकारो म वृद्धि करने के लिए सविधान म सशोधन की आवाज़ उठायी। अगर सम्मेलन म स्वीकृत प्रस्ताव स क्रातिकारी शब्दावली को अलग कर दिया जाये, जिसका उद्देश्य उसके समर्थको के असल इरादा पर परदा डालना था, तो वास्तव म वह रूस से अलग होने की माग थी। वह सर्व-तुर्कवाद की और दरअसल घोर प्रतिक्रियावादी माग थी।

पार्टी का नाम बदलकर तुर्की जाति की पार्टी रखने का रिस्कूलोव का सुझाव पाचवे पार्टी सम्मेलन द्वारा स्वीकार हो गया। इसका कारण यह था कि तुर्किस्तान आयोग के सदस्यो म इस सवाल पर एक मत नही था। आयोग क अध्यक्ष एलिआवा ने रिस्कूलोव के सुझाव का समर्थन किया और कूइबिशेव और गोलोश्चोकिन द्विधा म थे। केवल रूदज़ूताक ने रिस्कूलोव के सुझाव का दृढतापूर्वक विरोध किया। फ्रूजे ने आयोग की बैठक म भाग नही लिया, क्योकि वह तुर्किस्तान से बाहर थे। ताशकन्द पहुचने पर उन्होने आयोग को इस पर राज़ी कर लिया कि रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की केन्द्रीय समिति का आदेश आने तक पार्टी का नाम बदलकर तुर्की जाति की कम्युनिस्ट पार्टी नही रखा जाय।*

मार्च १९२० म तुर्किस्तान आयोग ने मुस्लिम कम्युनिस्टो के तीसरे क्षेत्रीय सम्मेलन तथा पार्टी के पाचवे क्षेत्रीय सम्मेलन द्वारा स्वीकृत प्रस्तावो रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की केन्द्रीय समिति क पास उसकी

---

*"तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी के इतिहास के सबध म लेख" ताशकन्द, १९६४, खण्ड ३, पृष्ठ १२६। (रूसी सस्करण)

राय के लिए भेजा। केन्द्रीय समिति ने तुर्किस्तान जनतन्त्र और तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी का नाम बदलने की माग को अस्वीकार कर दिया क्योंकि यह मार्क्सवादी लेनिनवादी राष्ट्रीय कार्यक्रम तथा पार्टी सगठन के सिद्धातो के विपरीत थी। उसने अखिल रूसी कम्युनिस्ट पार्टी के भीतर ही तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी को पूर्ण अधिकारप्राप्त सगठन माना।

परन्तु राष्ट्रवादी भटकाववादी इतनी आसानी से हार माननेवाले नही थे। उन्होने रिस्कूलोव के नेतृत्व मे एक प्रतिनिधि-मडल अपने प्रयोजन का समर्थन करने के लिए मास्को भेजा। पार्टी की केन्द्रीय समिति के समक्ष अपने स्मृतिपत्र मे उन्होने राष्ट्रवादी मागे रखी, जो कम्युनिस्ट पार्टी की जातीय नीति के विपरीत थी। उन्होने माग की कि सारे अधिकार तुर्किस्तान केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति और सोवनारकोम के हवाले कर दिये जायें, तुर्किस्तान आयोग भग कर दिया जाये, तुर्किस्तान की लाल सेना से रूसी हटा दिये जायें और शुद्ध मुस्लिम सेना का निर्माण किया जाये। उन्होने यह भी माग की कि डाक-तार, वैदेशिक मामले और वित्त के साथ-साथ रेलवे को भी जनतन्त्रीय प्रशासन के हवाले कर दिया जाये, जो तुर्किस्तान केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति की देख रेख मे होगा। वे उज्बेको, कजाखो तुर्कमानो, और किर्गिजो को अलग अलग जातिया नही मानते थे और तुर्की जाति मे उन्हे मिलाना चाहते थे। वे उस राष्ट्रवादी प्रस्थापना को पुन सामने लाना चाहते थे, जिसे उन्होने मुस्लिम कम्युनिस्टो के तीसरे क्षेत्रीय सम्मेलन मे पेश किया था, कि सर्व इस्लामवाद और सर्व-तुर्कवाद का आधार सोवियत तुर्किस्तान की परिस्थिति मे खतम हो चुका था।*

रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की केन्द्रीय समिति ने ध्यानपूर्वक उनकी मागो पर विचार किया और इस काम के लिए एक विशेष आयोग नियुक्त किया। १३ जून, १९२० को व्ला० इ० लेनिन ने आयोग द्वारा तैयार किये गये मसविदे को देखा और उसमे कई बाते जोडी। राष्ट्रवादी

---

* "उज्बेकिस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी के इतिहास के सबध मे लेख", पृष्ठ ७७।

भटकाववादिया की मागा को लेनिन ने अस्वीकार कर दिया और सुझाव दिया कि "मुल्लाग्रा, सब इसलामवादी और पूजीवादी राष्ट्रवादी आन्दोलन से सघर्ष के उपाय विशेष रूप से तैयार किये जायें।"*

रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) के पोलिटब्यूरो ने १९ जून, १९२० का तुर्किस्तान म कम्युनिस्ट पार्टी के बुनियादी कायभारा पर एक प्रस्ताव स्वीकार किया। केन्द्रीय समिति के आयोग द्वारा तैयार किये गये मसविदे के साथ उसमे लेनिन के सुझावा और विचारो का भी शामिल कर लिया गया। पार्टी के पोलिटब्यूरो के प्रस्ताव म जनतत्र के आर्थिक जीवन मे सामती और पितसत्तात्मक अवशेषा को मिटाने तथा किसानो के प्रतिनिधिया की सोवियता का निर्माण करने और सुदृढ बनाने की जरूरत पर जोर दिया गया था, जो महनतकश जनता को कम्युनिस्ट पार्टी के गिर्द जमा कर सकती थी। उसने तुर्किस्तान के श्रमजीवी जनगण और रूस की जातिया के बीच अतरजातीय मत्री को सबल बनाने और विकसित करने के लिए अथक सघर्ष का नारा दिया। प्रस्ताव म इस बात पर जोर दिया गया था कि सवप्रथम रूसी सर्वहारा की बिरादराना सहायता से तुर्किस्तान की सभी जातिया स्वतत्रता और समानता के आधार पर आजादी के साथ समाजवाद के माग पर विकास कर सकती है। पोलिटब्यूरो की राय मे तुर्किस्तान आयोग का रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) और रू० सो० स० स० जनतत्र की सरकार के प्रतिनिधि के रूप म कायम रखना जरूरी था। पोलिटब्यूरो ने राष्ट्रवादी भटकाववादिया की इस माग को कि तुर्की जाति की विशेष कम्युनिस्ट पार्टी का निर्माण किया जाये दृढतापूवक अस्वीकार कर दिया क्योकि उसका नतीजा यह होता कि स्थानीय कम्युनिस्ट सगठन और अखिलरूसी कम्युनिस्ट पार्टी अलग अलग हो जाती। उसने तीनो स्थानीय क्षेत्रीय समितिया को तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति मे मिला देने की जरूरत का अनुमोदन किया।

राष्ट्रवादिया के गिरोह ने पोलिटब्यूरो के प्रस्ताव से असहमति प्रकट की और तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी की आइकोम से तथा तुर्किस्तान की

---

*लेनिनी सग्रह, खण्ड ३४ पष्ठ ३२६। (रूसी सस्करण)

राय के लिए भेजा। केन्द्रीय समिति ने तुर्किस्तान जनतन्त्र और तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी का नाम बदलने की माग को अस्वीकार कर दिया क्योंकि यह मार्क्सवादी लेनिनवादी राष्ट्रीय कार्यक्रम तथा पार्टी सगठन के सिद्धान्तो के विपरीत थी। उसने अखिल रूसी कम्युनिस्ट पार्टी के भीतर ही तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी का पूर्ण अधिकारप्राप्त सगठन माना।

परन्तु राष्ट्रवादी भटकाववादी इतनी आसानी से हार मानेवाले नही थे। उन्होने रिस्कुलोव के नेतृत्व म एक प्रतिनिधि मडल अपने प्रयोजन का समर्थन करने के लिए मास्को भेजा। पार्टी की केन्द्रीय समिति के समक्ष अपने स्मृतिपत्र मे उन्होने राष्ट्रवादी मागें रखी, जो कम्युनिस्ट पार्टी की जातीय नीति के विपरीत थी। उन्होने माग की कि सारे अधिकार तुर्किस्तान केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति और सोवनारकोम के हवाले कर दिये जायें, तुर्किस्तान आयोग भग कर दिया जाये, तुर्किस्तान की लाल सेना से रूसी हटा दिये जायें और शुद्ध मुस्लिम सेना का निर्माण किया जाये। उन्होने यह भी माग की कि डाक तार, वदेशिक मामलो और वित्त के साथ-साथ रेलवे को भी जनतन्त्रीय प्रशासन के हवाले कर दिया जाये, जो तुर्किस्तान केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति की देख रेख मे हो। वे उज्बेको, कज़ाखो तुर्कमानो, और किर्गिज़ो को अलग अलग जातिया नही मानते थे और तुर्की जाति मे उन्हे मिलाना चाहते थे। वे उस राष्ट्रवादी प्रस्थापना को पुन सामने लाना चाहते थे, जिसे उन्होने मुस्लिम कम्युनिस्टो के तीसरे क्षेत्रीय सम्मेलन मे पेश किया था, कि सर्व इसलामवाद और सर्व-तुर्कवाद का आधार सोवियत तुर्किस्तान की परिस्थिति म खतम हो चुका था।*

रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की केन्द्रीय समिति ने ध्यानपूर्वक उनकी मागो पर विचार किया और इस काम के लिए एक विशेष आयोग नियुक्त किया। १३ जून, १९२० को व्ला० इ० लेनिन ने आयोग द्वारा तैयार किये गये मसविदे को देखा और उसमे कई बाते जोड़ी। राष्ट्रवादी

---

* "उज्बेकिस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी के इतिहास के सबध मे लेख", पृष्ठ ७७।

भटकाववादियो की मागो को लेनिन ने अस्वीकार कर दिया और सुझाव दिया कि "मुल्लाओ, सब इसलामवादी और पूजीवादी-राष्ट्रवादी आदोलन स सघर्ष के उपाय विशेष रूप से तैयार किये जायें।"*

रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) के पोलिटब्यूरो ने १९ जून, १९२० को तुर्किस्तान म कम्युनिस्ट पार्टी के बुनियादी कार्यभारो पर एक प्रस्ताव स्वीकार किया। केद्रीय समिति के आयोग द्वारा तैयार किये गये मसविदे के साथ उसमे लेनिन के सुझावो और विचारो को भी शामिल कर लिया गया। पार्टी के पोलिटब्यूरो के प्रस्ताव म जनतत्र के आर्थिक जीवन म सामती और पितृसत्तात्मक अवशेषो को मिटाने तथा किसानो के प्रतिनिधियो की सोवियतो का निर्माण करने और सुदृढ बनाने की जरूरत पर जोर दिया गया था जो मेहनतकश जनता को कम्युनिस्ट पार्टी के गिर्द जमा कर सकती थी। उसने तुर्किस्तान के श्रमजीवी जनगण और रूस की जातियो के बीच अतरजातीय मैत्री को सबल बनाने और विकसित करने के लिए अथक सघर्ष का नारा दिया। प्रस्ताव म इस बात पर जोर दिया गया था कि सर्वप्रथम रूसी सर्वहारा की बिरादराना सहायता से तुर्किस्तान की सभी जातिया स्वतत्रता और समानता के आधार पर आजादी के साथ समाजवाद के मार्ग पर विकास कर सकती है। पोलिटब्यूरो की राय मे तुर्किस्तान आयोग को रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) और रू० सो० स० स० जनतत्र की सरकार के प्रतिनिधि के रूप म कायम रखना जरूरी था। पोलिटब्यूरो ने राष्ट्रवादी भटकाववादियो की इस माग को कि तुर्की जाति की विशेष कम्युनिस्ट पार्टी का निर्माण किया जाये दृढतापूर्वक अस्वीकार कर दिया क्योकि उसका नतीजा यह होता कि स्थानीय कम्युनिस्ट सगठन और अखिलरूसी कम्युनिस्ट पार्टी अलग अलग हो जाती। उसने तीनो स्थानीय क्षेत्रीय समितियो को तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की केद्रीय समिति मे मिला देने की जरूरत का अनुमोदन किया।

राष्ट्रवादियो के गिरोह ने पोलिटब्यूरो के प्रस्ताव से असहमति प्रकट की और तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी की क्राइकोम से तथा तुर्किस्तान की

---

*लेनिन संग्रह खण्ड ३४, पृष्ठ ३२६। (रूसी संस्करण)

राय के लिए भेजा। केन्द्रीय समिति ने तुर्किस्तान जनतत्र और तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी का नाम बदलने की माग को अस्वीकार कर दिया क्योंकि यह मार्क्सवादी लेनिनवादी राष्ट्रीय कार्यक्रम तथा पार्टी सगठन के सिद्धान्त के विपरीत थी। उसने अखिल रूसी कम्युनिस्ट पार्टी के भीतर ही तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी को पूर्ण अधिकारप्राप्त सगठन माना।

परतु राष्ट्रवादी भटकाववादी इतनी आसानी से हार माननेवाले नहीं थे। उन्होंने रिस्कूलाव के नेतृत्व में एक प्रतिनिधि मडल अपने प्रयोजन का समर्थन करने के लिए मास्को भेजा। पार्टी की केन्द्रीय समिति के समक्ष अपने स्मृतिपत्र में उन्होंने राष्ट्रवादी मागे रखी, जो कम्युनिस्ट पार्टी की जातीय नीति के विपरीत थी। उन्होंने माग की कि सारे अधिकार तुर्किस्तान केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति और सोवनारकोम के हवाले कर दिये जायें, तुर्किस्तान आयोग भग कर दिया जाये, तुर्किस्तान को लाल सेना से रूसी हटा दिये जायें और शुद्ध मुस्लिम सेना का निर्माण किया जाये। उन्होंने यह भी माग की कि डाक-तार, वैदेशिक मामला और वित्त के साथ-साथ रेलवे को भी जनतत्रीय प्रशासन के हवाले कर दिया जाये, जो तुर्किस्तान केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति की देख रेख में होगा। वे उज्बेकों, कजाखो तुर्कमानो, और किर्गिजो को अलग अलग जातिया नहीं मानते थे और तुर्की जाति में उन्हें मिलाना चाहते थे। वे उस राष्ट्रवादी प्रस्थापना को पुन सामने लाना चाहते थे, जिसे उन्होंने मुस्लिम कम्युनिस्टो के तीसरे क्षेत्रीय सम्मेलन में पेश किया था, कि सर्व इसलामवाद और सर्व-तुर्कवाद का आधार सोवियत तुर्किस्तान की परिस्थिति में खत्म हो चुका था।*

रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बा०) की केन्द्रीय समिति ने ध्यानपूर्वक उनकी मागो पर विचार किया और इस काम के लिए एक विशेष आयोग नियुक्त किया। १३ जून, १९२० को ब्ला० इ० लेनिन ने आयोग द्वारा तैयार किये गये मसविदे को देखा और उसमें कई बातें जोड़ी। राष्ट्रवादी

---

* "उज्बेकिस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी के इतिहास के सबध में लेख", पृष्ठ ७७।

भटकाववादियों की मांगों को लेनिन ने अस्वीकार कर दिया और सुझाव दिया कि "मुल्लाओं, सब इस्लामवादी और पूंजीवादी राष्ट्रवादी आंदोलन से संघर्ष के उपाय विशेष रूप से तैयार किये जायें।"*

रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) के पोलिटब्यूरो ने १६ जून, १६२० को तुर्किस्तान में कम्युनिस्ट पार्टी के बुनियादी कार्यभारों पर एक प्रस्ताव स्वीकार किया। केन्द्रीय समिति के आयोग द्वारा तैयार किये गये मसविदे के साथ उसमें लेनिन के सुझावों और विचारों को भी शामिल कर लिया गया। पार्टी के पोलिटब्यूरो के प्रस्ताव में जनतंत्र के आर्थिक जीवन में सामंती और पितृसत्तात्मक अवशेषों को मिटाने तथा किसानों के प्रतिनिधियों की सोवियतों का निर्माण करने और सुदृढ़ बनाने की जरूरत पर जोर दिया गया था, जो मेहनतकश जनता को कम्युनिस्ट पार्टी के गिर्द जमा कर सकती थीं। उसने तुर्किस्तान के श्रमजीवी जनगण और रूस की जातियों के बीच अंतरजातीय मैत्री को सबल बनाने और विकसित करने के लिए अथक संघर्ष का नारा दिया। प्रस्ताव में इस बात पर जोर दिया गया था कि सर्वप्रथम रूसी सर्वहारा की बिरादराना सहायता से तुर्किस्तान की सभी जातियां स्वतंत्रता और समानता के आधार पर आजादी के साथ समाजवाद के मार्ग पर विकास कर सकती हैं। पोलिटब्यूरो की राय में तुर्किस्तान आयोग को रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) और रू० सो० स० स० जनतंत्र की सरकार के प्रतिनिधि के रूप में कायम रखना जरूरी था। पोलिटब्यूरो ने राष्ट्रवादी भटकाववादियों की इस मांग को कि तुर्की जाति की विशेष कम्युनिस्ट पार्टी का निर्माण किया जाय दृढ़तापूर्वक अस्वीकार कर दिया, क्योंकि उसका नतीजा यह होता कि स्थानीय कम्युनिस्ट संगठन और अखिलरूसी कम्युनिस्ट पार्टी अलग अलग हो जाती। उसने तीनों स्थानीय क्षेत्रीय समितियों को तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति में मिला देने की जरूरत का अनुमोदन किया।

राष्ट्रवादियों के गिरोह ने पोलिटब्यूरो के प्रस्ताव से असहमति प्रकट की और तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी की क्राइकोम से तथा तुर्किस्तान की

---

*लेनिन: संग्रह, खण्ड ३४, पृष्ठ ३२६। (रूसी संस्करण)

केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति से इस्तीफा दे दिया। इससे १६ जुलाई, १६२० को तुर्क आयोग द्वारा **काइकोम** को भंग करना और तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी की नयी अस्थायी केन्द्रीय समिति का निर्माण करना जरूरी हो गया। यह भी निश्चित किया गया कि केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति को भंग किया जाय और उसको नये ढंग से पुनर्गठित किया जाये। तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की नई अस्थायी केन्द्रीय समिति के प्रधान तियुराकूलोव और नई केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के प्रधान रहीमबायेव थे। तुर्किस्तान आयोग की पहलकदमी पर **काइकोम** और केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के भंग किये जाने का विभिन्न स्तरों पर पार्टी संगठनों ने व्यापक रूप में स्वागत किया। रिस्कूलोव के नेतृत्व में पूंजीवादी राष्ट्रवादियों ने भूमि और सिंचाई सुधारों को लागू करने में बाधा डालने का प्रयत्न किया। रूसी **कुलकों** तथा आप्रवासियों के विरुद्ध तुर्किस्तान आयोग के अभियान का उन्होंने समर्थन किया था, मगर जब मुस्लिम **बाई** और **मानप** लोगों के विरुद्ध आक्रमण की योजना बनी, तो उन्होंने अपना समर्थन वापस ले लिया। वे देशी पूंजी के विरुद्ध संघर्ष को अनिश्चित काल के लिए स्थगित रखना चाहते थे। उनकी राय में फौरी कार्यभार वर्ग चेतना को नहीं, बल्कि जातीय चेतना को जाग्रत करना था। इस प्रकार पूंजीवादी राष्ट्रवादियों ने अपने आपको तुर्किस्तान की आम जनता की नजरों में बिल्कुल बेनकाब कर दिया। तियुराक्लोव और रहीमबायेव जैसे ईमानदार और सच्चे मुस्लिम कम्युनिस्टों ने राष्ट्रवादियों के हानिकारक विचारों के विरुद्ध सफलतापूर्वक संघर्ष किया।

तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की अस्थायी केन्द्रीय समिति ने पांचवीं क्षेत्रीय पार्टी कांग्रेस के आयोजन की तैयारियां शुरू कीं। कांग्रेस का अधिवेशन ताशकन्द में १२ से १८ सितम्बर तक, १६२० को बड़े हर्षोल्लास के साथ हुआ क्योंकि लाल सेना ने प्रतिक्रांति और वैदेशिक हस्तक्षेप के विरुद्ध संघर्ष में महान सफलताएं प्राप्त की थीं। उसने सर्वसम्मति से तुर्किस्तान आयोग के फैसले के जरिये **काइकोम** के भंग किये जाने का अनुमोदन किया और राष्ट्रवादी भटकाववादियों के आचरण और नीतियों की बड़ी आलोचना की। राष्ट्रवादियों ने बाकू में पूर्व की जातियों की

काग्रेस के समक्ष जो निराधार आरोप लगाये थे, उनका काग्रेस ने खडन किया। काग्रेस की रिपोर्टों और भाषणा मे इस बात पर ज़ोर दिया गया था कि पार्टी के सामने बुनियादी कार्यभार सोवियत रूस के मजदूरो और किसाना के साथ तुर्किस्तान के मेहनतकशा की एकजुटता को सुदृढ करना और व्यापक बनाना, जातीय असमानता के समस्त अवशेषा को मिटाना तुर्किस्तान के गरीब जनगण का कुलको व बाई और मानप लोगा के शोषण से मुक्त करना तथा श्रमजीवी खानाबदोशो, भूमिहीन खेतिहर मजदूरा और गरीब किसानों का जमीन देना है। काग्रेस ने स्वीकार किया कि गावा मे गरीब तथा मझोले किसानो के हिता को सुनिश्चित करने के लिए कोश्ची – गरीब किसाना के सघ – सगठित करने की आवश्यकता है।

तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की पाचवी काग्रेस ने नियुराकूलोव के नतृत्व मे नई केंद्रीय समिति का गठन किया। उस काग्रेस ने तुर्किस्तान म पार्टी के सगठनात्मक और विचारधारात्मक दृढीकरण म बडी भूमिका अदा की। वह इस बात का सबूत थी कि महाशक्तिवादी अधराष्ट्रवादी और पूजीवादी राष्ट्रवादी भटकावो दोनो से मुक्ति पाने के लिए पार्टी का सघर्ष सफलतापूवक सम्पन्न हुआ।

तुर्किस्तान की सोवियता की नवी काग्रेस ने, जो सितम्बर १९२० मे आयोजित हुई, तुर्किस्तान स्वायत्त सोवियत समाजवादी जनतत्र के लिए नया सविधान मजूर किया। उसने तुर्किस्तान को उस क्षेत्र मे रहनेवाली मुख्य जातिया, यानी तुर्कमाना, उज़्बेका, किर्गिज़ो आदि का स्वायत्त जनतत्र घोषित किया। सविधान ने वैदेशिक मामलो, प्रतिरक्षा, वित्त, डाक-तार और सचार को स्पष्ट रूप से सघीय सरकार के एकमात्र अधिकार म रहने दिया। याद रहे कि १९१८ के सविधान ने भी इन कार्यों को सघीय सरकार के अधिकार-क्षेत्र म घोषित किया था, परन्तु उसने तुर्किस्तान के पदाधिकारियो को यह अधिकार दिया था कि वे स्थानीय स्थितियो के अनुकूल सघ की आज्ञप्तियो और आदेशा मे फेरबदल कर सकते है। तुर्किस्तान स्वायत्त जनतत्र ऋण भी इकट्ठा कर सकता था तथा पडोसी देशा से सीमित वैदेशिक सबध भी स्थापित कर सकता था। वह सघ के उन अधिकारियो को वापस बुलाने की माग भी कर सकता

था, जो उसे स्वीकाय नही थे। वैदेशिक सबधो, रेलवे, प्रतिरक्षा, डाक तार तथा वित्त जैसे मामलो मे सघ के एकमात्र अधिकार-क्षेत्र पर ये पाबंदिया बडी हद तक गृहयुद्ध और वैदेशिक हस्तक्षेप के कारण जरूरी हो गई थी। १९१८ मे तुर्किस्तान का केद्र से कोई स्थायी सम्पक नही था। परन्तु १९२० मे स्थिति बदल चुकी थी। केद्र से अब तुर्किस्तान का लगातार सीधा सम्पक ल कायम था। फिर गत तीन वर्षो के अनुभव ने बता दिया था कि इन कायभारो का तुर्किस्तान जनतन्त्र द्वारा समवर्त्ती अधिकारो की पाबंदियो के बिना सघीय सरकार के एकमात्र अधिकार-क्षेत्र मे रहना ज्यादा अच्छा है। इसके लिए १९१८ के सविधान मे हेर फेर करने की जरूरत थी जिसे तुर्किस्तान की सोवियतो की नवी काग्रेस ने किया। पूजीवादी राष्ट्रवादी चाहते थे कि १९१८ मे जो स्थिति थी, उसे स्थायी बना दे और उसे और अधिक बढायें तथा कानून के जरिये उसकी पुष्टि कर। अवश्य ही यह तुर्किस्तान के श्रमजीवी जनगण के वास्तविक हितो के विपरीत था जिसका तकाजा था कि अन्य सावियत जातियो से घनिष्ठ एकता कायम हो।

तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की पाचवी काग्रेस और तुर्किस्तान की सोवियतो की नवी काग्रेस के समय तक अधराष्ट्रवादी और राष्टवादी भटकावो के विरुद्ध तीव्र सघष का दौर समाप्त हो चुका था। मगर ये प्रवत्तिया, खासकर राष्ट्रवादी प्रवत्तिया १९२५ म पुन १८ के गुट के रूप म उत्पन्न हुइ। पार्टी के कुछ सदस्यो पर पूजीवादी राष्ट्रवादी प्रभाव के जमे रहने का मख्य कारण नयी आर्थिक नीति के दौर म व्यापारी पजीपतियो, कुलको तथा अन्य शोषक तत्वो का अस्तित्व था, जो हर सम्भव उपाय स राष्ट्रवादी अवशेषो स लाभ उठाना चाहते थे। प्रशासन का देशी बनाने के कायभार स भी समस्याए पैदा हुइ और पूजीवादी राष्ट्रवादी तथा अधराष्ट्रवादी भटकाव उत्पन्न हुए। अधराष्ट्रवादी प्रवत्ति के लोग देशी लोगों की सजनात्मक योग्यता म विश्वास नही करते थे, जबकि पूजीवादी राष्ट्रवादी केवल राष्ट्रीय आधार पर देशीकरण की माग करते थे बिना यह सोचे हुए कि इसके लिए वास्तविक तैयारिया कहा तक हुई हैं और समस्या का सामाजिक और राजनीतिक स्वरूप क्या है। जातीय सवाल पर पार्टी

लाइन मे इन दोना म से किसी भी भटकाव के पुा उत्पन होने के विरुद्ध पार्टी अत्यत चौक्सी से काम लेती रही। रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की दसवी, बारहवी और चौदहवी काग्रेसा ने भी दोनो भटकावा के विरुद्ध, सवप्रथम अधराष्ट्रवादी भटकावा के विरुद्ध सघप का नारा दिया। सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी की बाईसवी काग्रेस ने भी पार्टी के नये काय-क्रम म अधराष्ट्रवाद और राष्ट्रवाद के अवशेषा के विरुद्ध सघप के काय-भार को नही भुलाया।

आठवां अध्याय

बुखारा और ख्वारज़्म: लोक सोवियत जनतंत्र से सोवियत समाजवादी जनतंत्र में संक्रमण

बुखारा और खीवा में जन-क्रांति का स्वरूप

बुखारा और खीवा में १९२० में जो क्रांति हुई उसने किसानों की सोवियतों के रूप में श्रमजीवी जनगण की सत्ता स्थापित की। वहां की क्रांति गरीब किसानों और कारीगरों की शक्तियों द्वारा लाल सेना की सक्रिय सहायता से की गई थी। कुछ इतिहासकारों का मत है कि बुखारा और खीवा की क्रांति का स्वरूप पूंजीवादी-जनवादी था और इन जनतंत्रों का सामाजिक ढांचा भी पूंजीवादी-जनवादी था। वास्तव में, खीवा और बुखारा की क्रांति ने सर्वप्रथम पूंजीवादी-जनवादी क्रांति का कार्यभार पूरा

न प्रयास किया कि किसानों की सोवियतों को अपने वर्गीय शासन के निकायों के रूप में इस्तेमाल करें और पूंजीवादी सामाजिक व्यवस्था कायम करके क्रांति को खत्म कर दें। परन्तु इन जनतंत्रों के जनसाधारण ने अक्तूबर क्रांति के शक्तिशाली प्रभाव में पूंजीपति वर्ग की इन आकांक्षाओं का विरोध किया। शुरू ही से उनका प्रयत्न था कि क्रांति का और आगे विकास हो और किसानों की सोवियतों को रूपांतरित करके लोक सोवियत व्यवस्था का आधार बना दिया जाये।

बुखारा और खीवा में क्रांति लोक सोवियत जनतंत्र की घोषणा के साथ समाप्त नहीं हुई। समाज का क्रांतिकारी पुनर्गठन और आगे जारी रहा यहां तक कि ये जनतंत्र समाजवादी जनतंत्रों में परिवर्तित हो गये। दिसम्बर १९२० में सोवियतों की आठवीं अखिल रूसी कांग्रेस में अपने *भाषण में बुखारा, आज़रबैजान और आर्मीनिया में सोवियत जनतंत्रों की* स्थापना और सुदृढीकरण का अभिनंदन करते हुए लेनिन ने कहा

"ये जनतन्त्र इस बात के सबूत हैं और उसकी पुष्टि करते हैं कि सोवियत सत्ता के विचार और उसूल केवल औद्योगिक दृष्टि से विकसित देशों में ही नहीं, केवल उन देशों में ही नहीं, जहां सर्वहारा वर्ग जैसा सामाजिक आधार मौजूद है, बल्कि उन देशों में भी उपलभ्य और फौरन काम में लाये जाने योग्य है, जहां आधार किसान-समुदाय है। किसान सोवियतों का विचार विजयी हो चुका है। किसानों के हाथ में सत्ता सुरक्षित है उनके हाथ में ज़मीन है, उत्पादन के साधन हैं। हमारी नीति के व्यावहारिक नतीजों द्वारा किसान सोवियत जनतंत्रों और रूसी समाजवादी जनतंत्र के दोस्ताना सम्बन्ध पक्के हो चुके हैं।"*

आर्मीनिया और आज़रबैजान में किसान जन-साधारण ने अपनी सोवियतों के ज़रिये मज़दूरों से अपनी वर्गीय एकता स्थापित की और अपने जनतंत्रों को तुरंत समाजवादी जनतंत्रों में बदल दिया। खीवा और बुखारा में इसी प्रक्रिया में तीन चार साल लग गये।

---

*व्ला० इ० लेनिन, संकलित रचनाएं, प्रगति प्रकाशन, मास्को, १९६७, खण्ड ३, भाग २, पृष्ठ ९३–९४। (हिन्दी संस्करण)

आठवा अध्याय

बुखारा और ख्वारज्म लोक सोवियत जनतत्र से सोवियत समाजवादी जनतत्र में सक्रमण

बुखारा और खीवा मे जन क्राति का स्वरूप

बुखारा और खीवा मे १९२० मे जो क्राति हुई, उसने किसानों की सोवियतो के रूप मे श्रमजीवी जनगण की सत्ता स्थापित की। वहा की क्राति गरीब किसानो और कारीगरो की शक्तियो द्वारा लाल सेना की सक्रिय सहायता से की गई थी। कुछ इतिहासकारो का मत है कि बुखारा और खीवा की क्राति का स्वरूप पूजीवादी जनवादी था और इन जनतत्रो का सामाजिक ढाचा भी पूजीवादी जनवादी था। वास्तव मे, खीवा और बुखारा की क्राति ने सर्वप्रथम पूजीवादी जनवादी क्राति का कार्यभार पूरा किया। इसके सिवा और कुछ हो भी नही सकता था, क्योकि जिन देशो मे अभी सामती व्यवस्था कायम थी, वहा समाजवादी क्राति के लिए उपयुक्त परिस्थितिया नही हो सकती थी, और किसी भी क्राति का पहला और सबसे बडा काम मध्यकालीन सामती व्यवस्था को मिटाना था। इसलिए स्वाभाविक था कि यहा की क्राति का स्वरूप पूजीवादी जनवादी हो।

परन्तु बुखारा और खीवा मे जिन ठोस ऐतिहासिक परिस्थितियो मे क्राति हुई, उनका प्रभाव भी उसके स्वरूप पर पडा। महान अक्तूबर क्राति की विजय और रूस मे सोवियत सत्ता की स्थापना ने बहुत हद तक बुखारा और खीवा की क्राति के स्वरूप को निर्धारित किया। वर्ग के पूजीपति वर्ग

ने प्रयास किया कि किसानों की सोवियतों को अपने वर्गीय शासन के निकायों के रूप में इस्तेमाल करे और पूंजीवादी सामाजिक व्यवस्था कायम करके क्रांति को खत्म कर दे। परन्तु इन जनतंत्रों के जनसाधारण ने अक्तूबर क्रांति के शक्तिशाली प्रभाव में पूंजीपति वर्ग की इन आकांक्षाओं का विरोध किया। शुरू ही से उनका प्रयत्न था कि क्रांति का और आगे विकास हो और किसानों की सोवियतों को रूपांतरित करके लोक सोवियत व्यवस्था का आधार बना दिया जाये।

बुखारा और खीवा में क्रांति लोक सोवियत जनतंत्रों की घोषणा के साथ समाप्त नहीं हुई। समाज का क्रांतिकारी पुनर्गठन और आगे जारी रहा यहां तक कि ये जनतंत्र समाजवादी जनतंत्रों में परिवर्तित हो गये। दिसम्बर १९२० में सोवियतों की आठवीं अखिल रूसी कांग्रेस में अपने भाषण में बुखारा, आजरबैजान और आर्मीनिया में सोवियत जनतंत्रों की स्थापना और सुदृढ़ीकरण का अभिनन्दन करते हुए लेनिन ने कहा

"ये जनतंत्र इस बात के सबूत हैं और उसकी पुष्टि करते हैं कि सोवियत सत्ता के विचार और उसूल केवल औद्योगिक दृष्टि से विकसित देशों में ही नहीं, केवल उन देशों में ही नहीं, जहां सर्वहारा वर्ग जैसा सामाजिक आधार मौजूद है, बल्कि उन देशों में भी उपलभ्य और फौरन काम में लाये जाने योग्य हैं, जहां आधार किसान-समुदाय है। किसान सोवियतों का विचार विजयी हो चुका है। किसानों के हाथ में सत्ता सुरक्षित है, उनके हाथ में जमीन है, उत्पादन के साधन हैं। हमारी नीति के व्यावहारिक नतीजों द्वारा किसान सोवियत जनतंत्रों और रूसी समाजवादी जनतंत्र के दोस्ताना सम्बन्ध पक्के हो चुके हैं।"*

आर्मीनिया और आजरबैजान में किसान जन-साधारण ने अपनी सोवियतों के जरिये मजदूरों से अपनी वर्गीय एकता स्थापित की और अपने जनतंत्रों को तुरंत समाजवादी जनतंत्रों में बदल दिया। खीवा और बुखारा में इसी प्रक्रिया में तीन-चार साल लग गये।

---

*ब्ला० इ० लेनिन, संकलित रचनाएं, प्रगति प्रकाशन, मास्को १९६७, खण्ड ३, भाग २, पृष्ठ ९३-९४। (हिंदी संस्करण)

बुखारा और खीवा में जन क्रांति ने तमाम बड़े सामंती जमींदारों और मुल्लाओं की सत्ता का उन्मूलन कर दिया। अब सत्ता किसानों की सोवियतो के हाथ में सौंपी गयी। बुखारा में अमीर और उसके सग सबधियो की कोई ७,५०० तनाब ज़मीन जब्त कर ली गई। सत्ता ऊपर से लेकर नीचे तक जनता के हाथो में थी, जो सोवियतो के ज़रिये उसका काम ले रही थी। जनता के सभी हिस्सो को वोट देने का अधिकार प्राप्त था, उससे वंचित केवल अमीर और खान और उच्च पदाधिकारी थे।

राज्य का सर्वोच्च निकाय जन प्रतिनिधियो की अखिल-बुखारा और अखिल-ख्वारज़म कुरुलताई (कांग्रेस) थी। यही कांग्रेस जनतंत्र की केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति का चुनाव करती थी, जो कुरुलताई के अधिवेशनों के बीच की अवधि में सर्वोच्च निकाय के सारे काम पूरे करती थी। कुरुलताई ही लोक नाज़िरो की परिषद चुनती थी, जो राज्य प्रशासन का एक उच्च निकाय थी।

स्थानीय प्रशासन के निकाय विभिन्न स्तरो की, जैसे ओब्लास्त, रायोन, और वोलोस्त की सोवियतें थी जिनकी अपनी अपनी कार्यकारिणी समितियां होती थी। सत्ता का निम्नतम निकाय गाव या शहर के मोहल्ले के लोगों की ग्राम सभा होती थी।

गावो की ग्राम सभाओ मे अक्सक्ल और स्तारशीना चुने जाते थे। चुनावो में जनतंत्र के सभी नागरिक धर्म, पुरुष-स्त्री, नस्ल या जाति के भेदभाव के बिना भाग लेते थे। उस राजकीय व्यवस्था की पुष्टि इन जनतंत्रों के संविधानो के जरिये कर दी गई थी। इन जनतंत्रों के राजकीय और सामाजिक ढांचे की विशेषता व्यापक जनवाद और उनका लोकप्रिय स्वरूप था जिससे वे अवश्य ही साधारण पूंजीवादी गणराज्यों से श्रेष्ठ थे। कुछ दिनों के लिए निजी स्वामित्व बुखारा और ख्वारज़म के लोक सोवियत जनतंत्रों के आर्थिक आधार के रूप में कायम रहा। उनके नागरिकों को अपनी निजी तौर पर अर्जित या विरासत में पायी हुई चल और अचल सम्पत्ति रखने का असीमित अधिकार था। इसी विशेषता के कारण वे समाजवादी जनतंत्रों से भिन्न थे।

समाजवादी जनतंत्रों में संक्रमण

चूंकि इन लोक जनतंत्रों के अधिकांश लोग गरीब किसान और कारीगर थे, इसलिए सरकार का सर्वप्रथम कार्य उनकी स्थिति का सुधारना था। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए करों, व्यापार तथा दस्तकारी के क्षेत्र में कई महत्वपूर्ण तब्दीलियाँ की गई। बुखारा में किसानों, पशुपालकों और दस्तकारों पर टैक्स काफी कम कर दिये गये। १९१३ में हर किसान को विभिन्न करों के रूप में औसतन १२,५ रूबल देना पड़ता था। परन्तु अब १९२३-१९२४ में उन्हें कुल मिलाकर ८ रूबल यानी , प्रतिशत कम देना पड़ता था।* खीवा में भी किसानों पर करों का बोझ इसी प्रकार कम किया गया।

थे।* इनके अलावा एक दस्तकारी और चार सगीत के स्कूल खोले गये। १९२२ मे विभिन्न शैक्षणिक सस्थाओ मे विद्यार्थिया की सख्या बढकर ५,४०६ हो गई।** यह याद रहे कि क्राति से पहले बुखारा मे धर्म निरपेक्ष शिक्षा के लिए एक भी स्कूल नहीं था। ख्वारज्म मे भी शिक्षा के क्षेत्र म उल्लेखनीय सफलताए हासिल की गइ। १९२३ मे २९ स्कूल तथा कई दूसरी शैक्षणिक सस्थाए काम कर रही थी, जिनमे १,३६२ व्यक्ति शिक्षा पा रहे थे।***

बुखारा और ख्वारज्म के जनतत्रा म समाजवादी उद्योग की स्थापना और उनके अपने मजदूर वर्ग के निर्माण म कई दशक लग जाते, अगर उन्हे रूसी मजदूर वर्ग और उसके राज्य की सहायता नही मिली होती। १९२३ मे बुखारा म ३२ म से केवल ६ कारखाने चालू थे। खीवा मे कोइ भी औद्योगिक सस्थान काम की हालत म नही था। इन जनतत्रा के शहर मुख्यत दस्तकारी के केंद्र थे, जहा व्यापारी पूजी का बोलबाला था। तीस बडी व्यापारी फर्मों की पूजी ही सभी राष्ट्रीयकृत कारखानो की पूजी स अधिक थी।

मगर इन कठिन स्थितिया म भी समाजवादी जनतत्रा म सक्रमण की परिस्थितिया बहुत तेजी स परिपक्व हुइ। इसका कारण आशिक रूप म वर्ग की राजनीतिक स्थिति थी। नौजवान बुखारी और नौजवान खीवाई इन जनतत्रा मे कम्युनिस्ट पार्टी की पक्तिया म इतन बडे पमाने पर घुस आये थे कि बुखारा म कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्या की सख्या १९२२ म १६००० हो गई थी।

के नाजिरों की परिषद मे एक भी देहकान नही था और उसके सारे पदो पर समाज के शोषक तत्वो का नियुक्त किया गया था। यही हाल ख्वारज्म का था।

इसका असर सरकार की नीतियो की तामील पर पडे बिना नही रह सकता था। स्तालिन ने सम्मेलन मे बताया कि बुखारा के राजकीय बैक द्वारा दिये गये कर्जों का ७५ प्रतिशत निजी व्यापारियो को दिया गया था और केवल २ प्रतिशत किसान सहकारी समितिया को मिला था। बुखारा और खीवा के राष्ट्रवादी उज्बेको और तुर्कमानो के बीच जातीय झगडे की आग भडकाते थे। बुखारा जनतत्र के सत्ता निकायो मे उज्बेक पूजीवादी राष्ट्रवादी तुर्कमानो और ताजिको के विरुद्ध जातीय भेदभाव की नीति पर अमल करते थे। खीवा मे, जहा उज्बेक और तुर्कमान उच्च श्रेणिया म काफी शत्रुता थी प्रतिक्रियावादी तुर्कमान कबायली सरदार इस स्थिति स लाभ उठाने का प्रयास करते थे। ख्वारज्म जनतत्र की सरकार जिसम अधिकतर नौजवान खीवाई थे, ऐसी ही प्रतिक्रियावादी नीतिया पर अमल करती रही। इससे जनता म आक्रोश की भावना पैदा हुई और ६ माच १९२१ को जनता न सरकार को हटा दिया और कई नाजिरो का गिरफ्तार कर लिया। दूसरी कुरूलताई के आयोजन की तैयारी करने के लिए एक क्रातिकारी समिति नियुक्त का गई।

बुखारा जनतत्र मे भी सरकार के पूजीवादी राष्ट्रवादी सदस्य जनगण के विरुद्ध षडयत्र रचने लगे। उनम से कई बासमचियो से मिले हुए थे। १९२१ के अत म बुखारा जनतत्र का अध्यक्ष, उस्मान खोजा स्वय एक नया बासमची दल सगठित करने लगा। बासमचियो का नेतृत्व करने के लिए राष्ट्रवादियो न तुर्की सव इसलामवादी अनवर पाशा को आमत्रित किया जिसके नेतृत्व मे मध्य एशिया के सभी बासमची दल एकताबद्ध हो गये। अगर इन घटनाओ से एक ओर समाजवादी व्यवस्था की दिशा मे बुखारा और खीवा के लोक सोवियत जनतत्रो के विकास म निस्सन्देह कठिनाइया पदा हुई तो दूसरी ओर पूजीवादी राष्ट्रवादियो की जन विरोधी नीति के कारण उनके विरुद्ध जन आक्रोश बढा। इसकी वजह से श्रमजीवी जनगण के राजनीतिक कार्यकलाप मे वृद्धि हुई। बासमचो के विरुद्ध सघर्ष

थे।* इनके अलावा एक दस्तकारी और चार सगीत के स्कूल खोले गये। १६२२ मे विभिन्न शैक्षणिक सस्थाओ मे विद्यार्थियो की सख्या बढकर ५,४०६ हो गई।** यह याद रहे कि क्राति से पहले बुखारा मे धर्म निरपेक्ष शिक्षा के लिए एक भी स्कूल नही था। ख्वारज्म मे भी शिक्षा के क्षेत्र मे उल्लेखनीय सफलताए हासिल की गईं। १६२३ मे २६ स्कूल तथा कई दूसरी शैक्षणिक सस्थाए काम कर रही थी, जिनमे १,३६२ व्यक्ति शिक्षा पा रहे थे।***

बुखारा और ख्वारज्म के जनतत्रो मे समाजवादी उद्योग की स्थापना और उनके अपने मजदूर वर्ग के निर्माण मे कई दशक लग जाते अगर उन्हे रूसी मजदूर वर्ग और उसके राज्य की सहायता नही मिली होती। १६२३ मे बुखारा मे ३२ मे से केवल ६ कारखाने चालू थे। खीवा मे कोई भी औद्योगिक सस्थान काम की हालत मे नही था। इन जनतत्रो के शहर मुख्यत दस्तकारी के केन्द्र थे, जहा व्यापारी पूजी का बोलबाला था। तीन बडी व्यापारी फर्मो की पूजी ही सभी राष्ट्रीयकृत कारखानो की पूजी से अधिक थी।

मगर इन कठिन स्थितियो मे भी समाजवादी जनतत्रो मे सक्रमण की परिस्थितिया बहुत तेजी से परिपक्व हुइ। इसका कारण आशिक रूप मे वहा की राजनीतिक स्थिति थी। नौजवान बुखारी और नौजवान खीवाई इन जनतत्रो मे कम्युनिस्ट पार्टी की पक्तियो मे इतने बडे पैमाने पर घुस आये थे कि बुखारा मे कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यो की सख्या १६२२ मे १६,००० हो गई थी। पूजीवादी राष्ट्रवादी बाई और व्यापारी भी उन राजकीय निकायो मे घुस गये थे। जैसा कि स्तालिन ने जातीय जनतत्रो के जिम्मेदार कार्यकर्ताओ के साथ रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की केन्द्रीय समिति के चौथे सम्मेलन मे बताया बुखारा लोक सोवियत जनतत्र

*"उजबेक सोवियत समाजवादी जनतत्र का इतिहास", खण्ड २ पृष्ठ २१६।

**म० वहाबोव, उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ ३७४।

*** उजबेक सोवियत समाजवादी जनतत्र का इतिहास, खण्ड २, पृष्ठ २१८।

के नाजिरो की परिषद मे एक भी देहकान नही था और उसके सारे पदो पर समाज के शोषक तत्वो को नियुक्त किया गया था। यही हाल ख्वारज्म का था।

इसका असर सरकार की नीतियो की तामील पर पड़े बिना नही रह सकता था। स्तालिन ने सम्मेलन मे बताया कि बुखारा के राजकीय बैंक द्वारा दिये गये कर्जों का ७५ प्रतिशत निजी व्यापारियो को दिया गया था और केवल २ प्रतिशत किसान सहकारी समितियो को मिला था। बुखारा और खीवा के राष्ट्रवादी उज्बेको और तुर्कमानो के बीच जातीय झगड़े की आग भड़काते थे। बुखारा जनतत्र के सत्ता निकायो मे उज्बेक पूजीवादी राष्ट्रवादी तुर्कमानो और ताजिको के विरुद्ध जातीय भेदभाव की नीति पर अमल करते थे। खीवा मे, जहा उज्बेक और तुर्कमान उच्च श्रेणियो मे काफी शत्रुता थी, प्रतिक्रियावादी तुर्कमान कबायली सरदार इस स्थिति स लाभ उठाने का प्रयास करते थे। ख्वारज्म जनतत्र की सरकार जिसम अधिकतर नौजवान खीवाई थे, ऐसी ही प्रतिक्रियावादी नीतिया पर अमल करती रही। इससे जनता म आक्रोश की भावना पैदा हुई और ६ मार्च, १९२१ को जनता ने सरकार का हटा दिया और कई नाजिरो को गिरफ्तार कर लिया। दूसरी कुरुलताई के आयोजन की तैयारी करने के लिए एक क्रातिकारी समिति नियुक्त की गई।

बुखारा जनतत्र मे भी सरकार के पूजीवादी राष्ट्रवादी सदस्य जनगण के विरुद्ध षड्यत्र रचने लगे। उनमे से कई बासमचियो से मिले हुए थे। १९२१ के अत मे बुखारा जनतत्र का अध्यक्ष, उस्मान खोजा स्वय एक नया बासमची दल सगठित करने लगा। बासमचियो का नेतृत्व करने के लिए राष्ट्रवादियो ने तुर्की सर्व इसलामवादी अनवर पाशा को आमत्रित किया जिसके नेतृत्व म मध्य एशिया के सभी बासमची दल एकताबद्ध हो गये। अगर इन घटनाओ से एक ओर समाजवादी व्यवस्था की दिशा म बुखारा और खीवा के लोक सोवियत जनतत्रो के विकास म निस्सन्देह कठिनाइया पैदा हुई, तो दूसरी ओर पूजीवादी राष्ट्रवादियो की जन विरोधी नीति के कारण उनके विरुद्ध जन आक्रोश बढा। इसकी वजह से श्रमजीवी जनगण के राजनीतिक कार्यकलाप मे वृद्धि हुई। बासमचो के विरुद्ध सघर्ष

म श्रमजीवी किसान और कारीगर लाल सेना के नजदीक आ गये। बासमचियो के कारण लोगो मे इतनी तबाही फैली कि १९१३ की तुलना म १९२३ मे बुखारा मे खेती करनेवालो की सख्या घटकर २८७ प्रतिशत रह गई थी और खानाबदोशो की सख्या ७५१ प्रतिशत हो गई थी।* यही वजह थी कि गरीब किसान **बासमचियो** के विरुद्ध लडते, उत्साहपूर्वक लाल सेना मे भरती होते, जबकि बहुत से पूजीवादी राष्ट्रवादी मत्री **बासमचियो** से जा मिले, जैसे उदाहरण के लिए युद्ध मत्री आरिफाव।

सोवियत सघ की सरकार तथा रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की केन्द्रीय समिति ने इन कठिन दिनो मे बुखारा और खीवा के श्रमजीवी जनगण की बडी सहायता की। **बासमचियो** के विरुद्ध लडाई म उनकी मदद करने के लिए कई अनुभवी पार्टी नेता और सेना कमाडर भेजे गये। इसके अलावा खाद्यान्न की रसद तथा औद्योगिक सामानो के रूप म उन्हें और भी भौतिक सहायता दी गई। ओर्जोनिकीदजे पार्टी तथा सोवियत काय का सुधारने मे हाथ बटाने के लिए रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की केन्द्रीय समिति के प्रतिनिधि की हैसियत से बुखारा आये। उन्होने पार्टी और सोवियत सस्थाओ से वैरी वग के लोगो और राष्ट्रवादियो को निकालने के काम मे अपने सुयोग्य निदेशन के जरिये मदद की।

बुखारा और ख्वारज्म लोक सोवियत जनतत्र सोवियत सघ की भौतिक सहायता और तकनीकी निदेशन के बिना अपनी आर्थिक स्थिति का सुधार नही सकते थे। १९२३ म १७ लाख रूबल का सामान रू० सो० स० म० जनतत्र और तुर्किस्तान से बुखारा भेजा गया। सोवियत सघ ने बुखारा जनतत्र स व्यापार समझौता किया, जो बुखारा के लिए बहुत लाभदायक था। बुखारा की कपास का क्रय दाम १५ ८ रूबल प्रति पूड निर्धारित किया गया, जबकि लागत १० रूबल थी। अक्तूबर-नवम्बर १९२४ म २७६५१५ रूबल का साधारण इस्तेमाल का सामान और कृषि

---

*'१९२३-१९२४ की राजकीय आर्थिक योजना म बुखारा की स्थिति', बुखारा १९२३, पृष्ठ ५८-५९। (रूसी संस्करण)

औज़ार खीवा जनतंत्र भेजा गया। उसी महीने में खीवा जनतंत्र को २५ हज़ार पूड चीनी, १,००० पूड चमड़ा, २५ हज़ार जोड़े जूते और ४ हज़ार पूड चाय भेजी गई। सोवियत संघ ने खीवा जनतंत्र का बगान साफ करनेवाली और तल की मिला के पुनर्निर्माण के लिए ५७५ हज़ार रूबल का कर्ज दिया।*

बुखारा के राष्ट्रवादी तत्वों ने सोवियत रूस से बुखारा के संघबद्ध होने के विरोध में एडी चोटी का जोर लगा दिया और इस प्रकार बुखारा जनतंत्र की सोवियतों की प्रथम कांग्रेस के निदेश को पूरा नहीं किया। इससे लोगों में आक्रोश की लहर फैल गई। जनगण की बढ़ती हुई शत्रुता के कारण बुखारा लोक सोवियत जनतंत्र की कार्यकारिणी समिति को मंत्रिमंडल (नाज़िरों की परिषद) से कई मंत्रियों को जैसे फिनरत नज़रुल्लाह खोजा, अमीनोव आदि को, जिनसे जनगण घृणा करते थे, निकालने का फैसला करने पर बाध्य होना पड़ा। चौथी अखिल-बुखारा कुरुलताई के चुनाव के समय जनगण की चौकसी बहुत बढ़ गई। प्रतिनिधियों का बड़ा बहुमत देहकानों और कारीगरों में से चुना गया। कुरुलताई में सभी जातियों के लोग चुने गये थे। राष्ट्रवादियों के खिलाफ संघर्ष में बुखारा के कम्युनिस्टों को रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की केंद्रीय समिति की सक्रिय सहायता मिली। नई कुरुलताई की बनावट से ही वर्ग शक्तियों का बदला हुआ संतुलन पूरी तरह जाहिर हो रहा था। अभिलेखागार में नई कुरुलताई के ४२५ प्रतिनिधियों में से कोई ३६० के बारे में जो सामग्री सुरक्षित है उससे स्पष्ट है कि २२७ देहकान थे, २७ मजदूर, ६३ पदाधिकारी, १७ कारीगर, १७ बुद्धिजीवी और नौ अन्य लोग थे। प्रतिनिधियों में १३१ पार्टी-सदस्य थे। प्रतिनिधियों की जातीय बनावट से नई कुरुलताई के बहुजातीय स्वरूप का पता चलता था। उसमें २३७ उज़्बेक, ८१ ताजिक, १६ किर्गिज, २२ तुर्कमान और ११ यहूदी थे।**

---

*म० वहाबोव, उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ ३७६–३८०।
**वही, पृष्ठ ३८१।

१९२२ मे बुखारा और खीवा मे पार्टी की सफाई का अच्छा असर पडा। इस सफाई के बाद १६,००० सदस्यो मे से केवल एक हजार पार्टी मे रह गये थे। इससे सदस्यो की गुणावस्था बेहतर हो गई और उनकी वर्ग चेतना का स्तर ऊचा हुआ। १९२३ मे बुखारा म पार्टी के १,५६० सदस्य थे। इनमे ३५ प्रतिशत देहकान थे, १३ प्रतिशत मजदूर और ८ ५ प्रतिशत कारीगर थे। खीवा की पार्टी मे सफाई के बाद केवल ५४७ सदस्य रह गये थे, जिनमे ४१८ देहकान, ८० मजदूर, १५ पदाधिकारी, १६ कारीगर और ४१ अन्य लोग थे।*

बुखारा और ख्वारज्म लोक सोवियत जनतत्रो के जीवन म इन राजनीतिक और सामाजिक परिवर्तनो से कानूनो मे भी परिवर्तन हुआ जिसने उन्हे समाजवादी जनतत्रो म रूपातरण की दिशा म आगे बढा दिया। १९२२ के अत मे अनवर पाशा के नेतृत्व म बासमचो के मुख्य दल की शिकस्त के बाद बुखारा म बासमचीवाद म कोई दम नहा रह गया था। लगभग उन्ही दिनो जुनैद खान और अन्य तुकमान कबायली सरदारो के बासमची दलो का भी सफाया कर दिया गया था। १९२३ स इन जनतत्रो म शातिपूर्ण पुनर्निर्माण का दौर शुरू हुआ। जनगण को ट्रेड यनियनो, किसान सभाओ, नौजवान सघ आदि जसे विभिन्न सगठनो मे सगठित करने के काम मे काफी सफलता प्राप्त हुई। बुखारा म १९२३ तक ट्रेड-यूनियनो की सदस्य-सख्या १६ ५ हजार तक पहुच गई थी। किसान सभाओ का सगठन भी सफलतापूर्वक किया गया था। ख्वारज्म मे १९२३ म उनके सदस्यो की सख्या १० हजार थी।** जनसाधारण अधिकाधिक समाजवादी विकास की ओर आकर्षित हो रहे थे। पडोसी तुर्किस्तान स्वायत्त सोवियत समाजवादी जनतत्र म समाजवादी पुनर्निर्माण के लाभदायक अनुभव ने खीवा और बुखारा के लोगो को विश्वास दिला दिया कि उनके जनतत्रो के लिए भी वही मार्ग अपनाना जरूरी है।

---

* म० वहाबोव, उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ २८०।

** "उज़बेक सोवियत समाजवादी जनतत्र का इतिहास', खण्ड २, पृष्ठ २१७–२१८।

१९२३ के बाद बुखारा और खीवा की जनता मे अपने जनतत्रो को समाजवादी जनतत्रो मे पुनर्गठित करने की इच्छा प्रबल रूप मे प्रकट हो रही थी। इस के लिए जरूरी शर्त यह थी कि सत्ता के निकायो का पूर्ण जनवादीकरण तथा सोवियत सस्थाओ से शोषक वर्गो के प्रतिनिधियो को निकालकर उनका सुदृढीकरण किया जाये। जैसा कि हम ने देखा, यह काम इन जनतत्रो मे सफलतापूर्वक कर लिया गया था।

बुखारा और ख्वारज्म के जनतत्रो ने आर्थिक बहाली के काम मे भी काफी सफलता प्राप्त की थी। नई आर्थिक नीति को कार्यान्वित करने के लिए जो कदम उठाये गये, उनका परिणाम बहुत लाभदायक हुआ था। कपास और खाद्यान्न की फसलो के क्षेत्रफल मे काफी वृद्धि हुई। १९२८ मे बुखारा मे कुल काश्त की जमीन का क्षेत्रफल लगभग युद्धपूर्व के स्तर पर पहुच गया था। यह ५४,८६,००० तनाब था (१९१३ मे इसका आकडा ५६,०३००० तनाब था)। कपास की काश्त की जमीन मे प्रतिवर्ष वृद्धि हो रही थी। १९२० मे कपास १,००,००० तनाब जमीन पर उगायी गयी थी, १९२३ मे १,३६,००० तनाब जमीन पर और १९२८ मे १६०,००० तनाब जमीन पर।* कपास की काश्त की इस वृद्धि के कारण यह जरूरी हो गया कि गृहयुद्ध के दौरान जो कपास शोधन कारखाने बर्बाद हो गये थे, उन्हे तेजी से बहाल किया जाये। १९२३ मे छह कपास शोधन कारखाने चालू किये गये। सरकार ने पशुपालन, खास कर कराकुल भेडो के पालन को प्रोत्साहन देने के लिए कदम उठाये। कराकुल भेडें खरीदने के लिए विशेष सहकारी समितिया सगठित की गईं। इन समितियो को २० लाख स्वर्ण रूबल की सहायता दी गई।

ख्वारज्म मे भी अर्थतत्र को बहाल करके उसको युद्धपूर्व स्तर तक पहुचाने मे बहुत प्रगति हुई। कपास की काश्त का क्षेत्रफल १९२२ मे ८ हजार देसियातीन से बढकर १९२८ मे ३० हजार देसियातीन हो गया।

---

*अ० इशानोव, "बुखारा लोक सोवियत जनतत्र की स्थापना", ताशकन्द, १९५५, पृष्ठ १६०–१६१। (रूसी सस्करण)

१९२४ के प्रारम्भ तक छह कपास शोधन कारखानों का पुनरुद्धार और विस्तार किया जा चुका था।*

बुखारा और ख्वारज्म में सोवियतीकरण और समाजवादी परिवर्तन की जटिल प्रक्रिया और उनका आर्थिक विकास और साथ ही तुर्किस्तान स्वा० सो० स० जनतंत्र का आगे विकास मध्य एशिया में सोवियत जनतंत्रों के आर्थिक एकीकरण से घनिष्ठ रूप में सम्बद्ध था। इस सवाल को रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बा०) की केंद्रीय समिति ने पहले पहल फरवरी १९२१ में उठाया। केंद्रीय समिति ने इस बात पर जोर दिया कि इस प्रकार के एकीकरण से ख्वारज्म और बुखारा के अर्थतंत्र की बहाली और विकास में बड़ी सुविधा होगी। पूंजीवादी राष्ट्रवादी इसके विरोधी थे। परंतु उनका विरोध सफल नहीं हो सका। मध्य एशियाई जनतंत्रों के ताशकंद आर्थिक सम्मेलन ने तीनों जनतंत्रों के आर्थिक कार्यकलाप को एक संयुक्त आर्थिक नीति और समान आर्थिक योजना के आधार पर समन्वित करने का निश्चय किया। सभी आर्थिक मामलों का आम निदेशन मध्य एशियाई आर्थिक परिषद के सिपुर्द कर दिया गया जिसने आर्थिक सम्मेलन द्वारा तैयार और अनुमोदित आदेशों के अनुसार काम किया। सम्मेलन में भूमि सुधार, अंदरूनी और वैदेशिक व्यापार, वित्त, परिवहन, सहकारिता, डाक-तार तथा सिंचाई के संबंध में विचार विमर्श किया गया। यह तय किया गया कि बुखारा और ख्वारज्म में एक ही मुद्रा चालू की जाय, वही जो पूरे रूसी सो० स० स० जनतंत्र में चालू है। डाक-तार, नदी परिवहन और रेलवे का संयुक्त प्रबंध पूरे मध्य एशियाई स्तर पर किया गया। मध्य एशियाई जनतंत्रों का आर्थिक एकीकरण बुखारा और ख्वारज्म के लिए बहुत महत्वपूर्ण था, क्योंकि इससे समाजवाद में संक्रमण के काम में उन्हें बड़ी सुविधा हुई।

बुखारा और ख्वारज्म में केवल उनका अपना अंदरूना सामाजिक राजनीतिक आधार समाजवादी परिवर्तन के लिए काफी नहीं था। सोवियत

---

* 'उज्बेक सोवियत समाजवादी जनतंत्र का इतिहास', खण्ड २ पृष्ठ २१८।

संघ के समाजवादी उद्योग तथा मजदूर वर्ग ने आवश्यक बाहरी आधार मुहैया किया। बुखारा और ख्वारज्म लोक सोवियत जनतंत्रों का रूपांतरण सोवियत संघ के साथ गहरे आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक सहयोग के बिना, सोवियत संघ के क्रांतिकारी मजदूर वर्ग और किसानों के साथ इन जनतंत्रों के लोगों की एकता के बिना नहीं सम्पन्न हो सकता था।

बुखारा लोक सोवियत जनतंत्र की केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति का असाधारण अधिवेशन, जो १४ अगस्त, १९२३ को आयोजित किया गया, उस जनतंत्र के समाजवादी रूपांतरण के लिए बहुत महत्वपूर्ण था। उसने संविधान की कई धाराओं में संशोधन करने का निश्चय किया। इन संशोधनों के अनुसार अमीर के सभी भूतपूर्व पदाधिकारियों, बड़े साहूकारों और व्यापारियों को मतदान के अधिकार से वंचित कर दिया गया। इस प्रकार शोषक वर्गों को राजनीतिक सत्ता का भागीदार नहीं बनने दिया गया। मजदूरों और लाल सेना के जवानों के मताधिकार को बढ़ा दिया गया। संगठित मजदूरों को १०० मजदूरों पर एक प्रतिनिधि और लाल सेना के जवानों को २५० पर एक व्यक्ति चुनने का अधिकार दिया गया। सभी मंत्रालयों में समितियां नियुक्त की गई जिससे मंत्रियों के लिए मनमानी करना असम्भव हो गया।

अक्तूबर १९२३ में चौथी अखिल-ख्वारज्म कुरूलताई का अधिवेशन हुआ। उसने नया संविधान स्वीकार किया और ख्वारज्म लोक सोवियत जनतंत्र के सोवियत समाजवादी जनतंत्र में संक्रमण की घोषणा की। संविधान ने एलान किया कि सरकार का मुख्य काम ऐसी स्थितियां पैदा करना है जिसमें मानव द्वारा मानव का शोषण असम्भव हो जाये। सारी भूमि जनगण की सम्पत्ति घोषित कर दी गई और श्रमजीवी किसानों को मुफ्त इस्तेमाल के लिए दे दी गई। संविधान ने सभी शोषक वर्गों को मताधिकार से वंचित कर दिया। सितम्बर १९२४ में पांचवीं अखिल-बुखारा कुरूलताई ने बुखारा में सोवियत समाजवादी जनतंत्र की स्थापना घोषित की। उसने सोवियत संघ के साथ अटूट और बिरादराना एकता बनाये रखने की आवश्यकता की घोषणा की, क्योंकि एकमात्र इसी से समाजवाद की ओर संक्रमण में सहायता मिल सकती थी। इस प्रकार

बुखारा और ख्वारज्म लोक सोवियत जनतन्त्रों का सक्रमण सोवियत राजत्व से सोवियत समाजवादी राजत्व में सम्पन्न हुआ।

समाजवादी अवस्था में सक्रमण के बारे में अकसर गलतफहमी पायी जाती है। कुछ लेखकों ने कृषि और औद्योगिक सबधों के ढाचे में पहले से बुनियादी परिवर्तनों के बिना समाजवादी राजत्व में प्रवेश को गलत बताया है। मसलन, अ० ज० पार्क ने बुखारा और ख्वारज्म को समाजवादी अवस्था में लाने के अभियान को "शुद्ध" "राजनीतिक स्तर" का अभियान बताया है।* उनके विचार में यह काम जल्दी में केवल "राजनीतिक शक्तियों के परस्पर सबध" को ऊपर ही ऊपर बदल कर, यानी 'धीरे धीरे गैर कम्युनिस्ट नेताओं को अलग करके", पहले से कोई खास समाजवादी उद्योगीकरण या कृषि सबधों में आमूल परिवर्तन किये बिना किया गया।

परन्तु पार्क भूल जाते हैं कि समाजवादी राजत्व का काम ही इन परिवर्तनों को लाना है। समाजवादी राज्य ही समाजवादी समाज का निर्माण करता है। इसके अलावा बुखारा और ख्वारज्म में सोवियत दौर में जो सामाजिक आर्थिक तब्दीलियां हुइ, उन्हें पार्क नजरअन्दाज करते हैं और समाजवादी राजत्व में सक्रमण की तैयारी में उनकी भूमिका का महत्त्व नहीं समझते। किसी राज्य का सामाजिक स्वरूप ठीक इस बात से निर्धारित होता है कि राजनीतिक सत्ता का मालिक कौन है। किसानों के व्यापक कार्यकलाप और राजनीतिक चेतना में वृद्धि तथा व्यापारियों और साहूकारों जैसे शोषक तत्वों के विरुद्ध उनके निरन्तर सघर्ष की बदौलत इन तत्वों को पार्टी और राज्य निकायों में निकलना पडा। युसूपोव और उसमान खोजायेव जैसे व्यापारियों के बजाय राजनीतिक सत्ता अब देहकानों और श्रमजीवी बुद्धिजीवियों के प्रतिनिधियों के हाथ में आ गई, जो अपने जनतन्त्रों को समाजवाद के रास्ते पर विकसित करना चाहते थे। इसलिए ख्वारज्म और बुखारा के जनतन्त्रों का समाजवादी जनतन्त्रों

---

* A G Park *Bolshevism in Turkestan 1917 27* New York 1957 pp 107—108

मे सक्रमण ऐतिहासिक दृष्टि से बिल्कुल उचित कदम था। उनकी विशेष भौगोलिक स्थिति और रूस म अक्तूबर क्राति के ऐतिहासिक प्रसग म उनके लिए सामाजिक विकास की पूजीवादी व्यवस्था स गुजरने की जरूरत नही रही। रूसी मजदूर वग स उनके किसाना की एकता न अपने देशी मजदूर वग की कमी पूरी कर दी।

नवा अध्याय

सोवियत जातीय जनतन्त्रो का निर्माण

१६२४ का जातीय राज्य सीमा निर्धारण —ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

मध्य एशिया मे जातीय राज्य सीमा निर्धारण १६२४ म किया गया, जिसके फलस्वरूप जातीय सोवियत समाजवादी जनतत्रा का निर्माण हुआ। इनमे से दो—उज्बेक सोवियत समाजवादी जनतन्त्र और तुर्कमान सोवियत समाजवादी जनतत्र का निर्माण सोवियत सघ के भीतर सघीय जनतत्रा के रूप म हुआ। दूसरो जैसे मिसाल के लिए ताजिक, का निर्माण उज्बेक सोवियत समाजवादी जनतन्त्र के भीतर स्वायत्त सोवियत समाजवादी जनतत्र के रूप म हुआ। मध्य एशिया के कजाख इलाका को रूसी सो० स० स० जनतत्र के भीतर उस समय के किर्गिज स्वायत्त सोवियत समाजवादी जनतन्त्र म एकताबद्ध किया गया। कराकल्पाकिया स्वायत्त ओब्लास्त की हैसियत स किर्गिज स्वायत्त सो० स० जनतन्त्र म शामिल हुआ। किर्गिजा न स्वायत्त सोवियत समाजवादी जनतन्त्र की स्थापना की और रूसी सो० स० स० जनतन्त्र के भीतर कराकिर्गिज स्वायत्त सोवियत समाजवादी जनतन्त्र के नाम स शामिल हुए। इन जातीय सोवियत समाजवादी जनतन्त्रा और स्वायत्त ओब्लास्तो म मध्य एशिया की सोवियत जातियो को उनके जातीय राज्यो के रूप म इतिहास म पहली बार एकताबद्ध किया गया।

तुर्किस्तान स्वायत्त सोवियत समाजवादी जनतन्त्र का निर्माण, जो स्वेच्छापूर्वक रूसी सो० स० स० जनतन्त्र म शामिल हुआ, मध्य एशिया

तुर्कमान सो० स० जनतंत्र की विज्ञान अकादमी अशकाबाद

कज़ाख सो० स० जनतंत्र की विज्ञान अकादमी, अल्मा-अता

नवां अध्याय

सोवियत जातीय जनतन्त्रों का निर्माण

१९२४ का जातीय राज्य सीमा-निर्धारण —ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

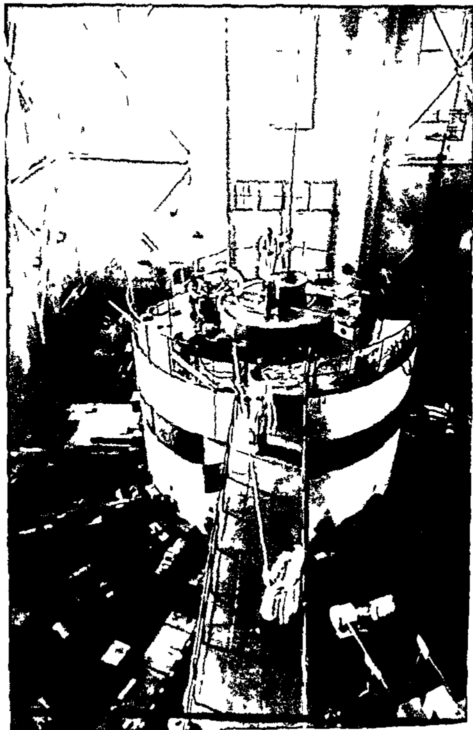
मध्य एशिया में जातीय राज्य सीमा निर्धारण १९२४ में किया गया, जिसके फलस्वरूप जातीय सोवियत समाजवादी जनतन्त्रों का निर्माण हुआ। इनमें से दो—उज्बेक सोवियत समाजवादी जनतन्त्र और तुर्कमान सोवियत समाजवादी जनतन्त्र का निर्माण सोवियत संघ के भीतर संघीय जनतन्त्रों के रूप में हुआ। दूसरा जैसे मिसाल के लिए ताजिक, का निर्माण उज्बेक सोवियत समाजवादी जनतन्त्र के भीतर स्वायत्त सोवियत समाजवादी जनतन्त्र के रूप में हुआ। मध्य एशिया के कज़ाख इलाकों को रूसी सा० स० स० जनतन्त्र के भीतर उस समय के किरगिज़ स्वायत्त सोवियत समाजवादी जनतन्त्र में एकताबद्ध किया गया। कराकल्पाकिया स्वायत्त ओब्लास्त की हैसियत से किरगिज़ स्वायत्त सा० स० जनतन्त्र में शामिल हुआ। किरगिजों ने स्वायत्त सोवियत समाजवादी जनतन्त्र की स्थापना की और रूसी सा० स० स० जनतन्त्र के भीतर कराकिरगिज़ स्वायत्त सोवियत समाजवादी जनतन्त्र के नाम से शामिल हुए। इन जातीय सोवियत समाजवादी जनतन्त्रों और स्वायत्त ओब्लास्तों में मध्य एशिया की मौलिक जातियों को उनके जातीय राज्यों के रूप में इतिहास में पहली बार एकताबद्ध किया गया।

तुर्किस्तान स्वायत्त सोवियत समाजवादी जनतन्त्र का निर्माण जो स्वेच्छापूर्वक रूसी सा० स० स० जनतन्त्र में शामिल हुआ, मध्य एशिया

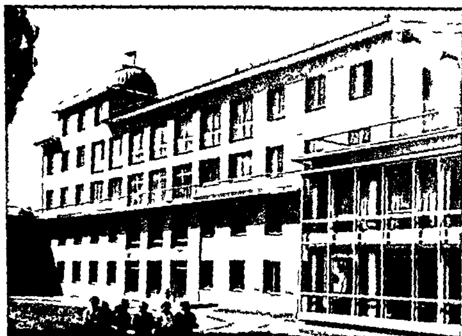


तुर्कमान सो० स० जनतंत्र की विज्ञान अकादमी अशकाबाद

क़ज़ाख़ सो० स० जनतंत्र की विज्ञान अकादमी, अल्मा-अता

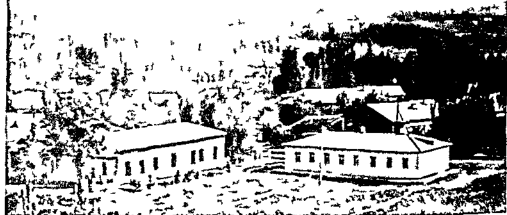


ऊपर : जा० ग० जनतंत्र की विज्ञान अकादमी की नाभिकीय भौतिकी संस्था में परमाणु रिएक्टर



ताशकन्द म लेनिन राजकीय विश्वविद्यालय

अल्मा अता म युवा पायानियर तथा छात्र भवन



हिस्सार ज़िल म ज्दानाव सामूहिक
फाम ताजिक सा० स० जनतत्र





करावम नहर के तट पर स्थित
कराकूम राजकीय फार्म, तुर्कमान
सा० स० जनतन्त्र



अन्दीजान प्रान्त म गुनवघ
राजकीय फाम म कपास की
कटाई उजबेक सो० स० जनतंत्र





यादगार नसरिद्दीनोवा, १९५९-१९६० की अवधि म उज्बेक सो० स० जनतत्र की सर्वोच्च सोवियत के अध्यक्षमण्डल की अध्यक्ष

भारत के प्रधान मत्री लाल वहादुर शास्त्री तथा पाकिस्तान के राष्ट्रपति मोहम्मद अयूब खा की मुलाक़ात, ताशक़न्द, १९६६।





अलीशेर नवाई उज़बेक राजकीय ओपेरा और बले थियेटर

ह० जलालोव द्वारा लिखित उज़बेक ऑपेरा 'ताहिर और ज़ुहरा' में नायिका का पार्ट अभिनेत्री हलीमा नसीरोवा

के लोगों के सोवियत जातीय राजत्व के निर्माण की दिशा में पहला कदम था। बहुजातीय स्वायत्त तुर्किस्तान जिसका अस्तित्व १९२४ तक रहा, यानी जातीय सीमा निर्धारण के समय तक, उस भूतपूर्व जारशाही उपनिवेश में राजकीय ढांचे का एकमात्र सही और उचित रूप था, जो उस समय की ऐतिहासिक परिस्थितियों के अनुकूल था। अक्तूबर क्रांति के तुरत बाद मध्य एशिया के लोगों के जातीय निर्माण की धीमी प्रक्रिया के कारण विभिन्न जातियों के परस्पर सम्बन्धों की कठिनाइयों के कारण, जो अतीत से चली आ रही थी, और अन्य कारणों से भी जातीय सीमा-निर्धारण असम्भव था।

पहले यह जरूरी था कि अक्तूबर क्रांति की उपलब्धियों की रक्षा की जाये और उन्हें सुदृढ़ किया जाये, अन्दरूनी प्रतिक्रांति और वैदेशिक सैनिक हस्तक्षेप को शिकस्त देकर सोवियत सत्ता को मजबूत बनाया जाये। इसके अलावा बुखारा और खीवा में क्रांति १९२० तक नहीं हुई थी और मध्य एशिया में जातीय सीमा के निर्धारण का सवाल बुखारा और खीवा के बिना उठ ही नहीं सकता था। सफलतापूर्वक जातीय सीमा निर्धारण के लिए यह भी जरूरी था कि श्रमजीवी जनता राजकीय कार्यकलाप में व्यापक पैमाने पर भाग ले। जातीय सीमा निर्धारण की एक और शर्त यह थी कि आर्थिक और सांस्कृतिक विकास के क्षेत्र में तथा समाजवादी जातियों के निर्माण में काफी प्रगति हो चुकी हो।

जातीय-क्षेत्रीय सीमा निर्धारण योजना, जिसके अनुसार मध्य एशिया में उस समय के बहुजातीय तुर्किस्तान, बुखारा और ख्वारज्म के बजाय उस इलाके की प्रत्येक मुख्य जाति के लिए अलग जातीय जनतन्त्र का निर्माण किया गया सोवियत और गैर-सोवियत विद्वानों में बहुत वाद-विवाद का विषय रही है। कुछ सोवियत-विरोधी लेखकों को इस योजना के पीछे सोवियत अधिकारियों का 'छलकपट और बुरा विचार' दिखाई दिया जिसका उद्देश्य उन लोगों के विशाल बहुमत को, जो "जाति और भाषा की दृष्टि से समरूप" और 'तुर्की" जाति के थे, कृत्रिम रूप से फूट डालकर अलग अलग करना था। उदाहरण के लिए, मुस्तफा चोकायेव, जो एक समय कोकन्द 'स्वायत्त' सरकार के अध्यक्ष थे, इस

योजना को "तुर्किस्तान को कबायली राज्यो मे विभाजित करने" की योजना बताते है जिसे बोल्शेविको ने इसलिए ईजाद किया था कि "मुसलमान कम्युनिस्टो" द्वारा तमाम तुर्की कबीलो को सोवियत तुर्किस्तान के गिर्द एकताबद्ध करने के प्रयासो को विफल बनाया जाये।* एक रूसी उत्प्रवासी विद्वान प्रिंस लोबानोव-रोस्तोव्स्की का कहना है कि सीमा निर्धारण की योजना को "नस्ली जातीय गोरखधंधे को हल करने की चिन्ता उतनी नही थी, जितनी इस समस्या से उत्पन्न राजनीतिक पहलू की" थी और कि वह केवल बासमची विद्रोह को बोल्शेविको का जवाब था।** अन्य लोगो की नजर मे जातीय सीमा निर्धारण की योजना "लडाओ और राज करो के पुराने साम्राज्यवादी उसूल" का इजहार थी।*** ह्यूग सीटन-वाट्सन का जातीय सीमा निर्धारण मे यह "स्पष्ट उद्देश्य" दिखाई दिया कि "अनेक भिन्न भिन्न जातिया" बनायी जाये जिन्हे एक दूसरे से अलग रखा जा सके, एक दूसरे से लडाया जा सके और अलग अलग रूसी जाति से जोडा जा सके"। उनकी राय मे, यह इसलिए किया गया कि "मध्य एशिया के मुसलमानो का सयुक्त मोरचा" बनने का खतरा दूर हो जाय।****

परन्तु ये दावे सर्वथा पूर्वाग्रह का नतीजा है और इनमे जरा भी सच्चाई नही है। मध्य एशिया के जातीय सीमा निर्धारण का मूल सिद्धात स्वय वास्तविक जातीय नीति का प्रत्यक्ष नतीजा था। उपर्युक्त आरोप लगाने का मतलब खूब सोची विचारी हुई सोवियत जातीय नीति की मौजूदगी

---

* Mustapha Chokayev *Turkestan and the Soviet Regime*, —*Journal of Royal Central Asian Society* London XVIII, 1931, p 414

** Lobanov Rostovsky The Muslim Republics in Central Asia,—*Journal of the Royal Institute of International Affairs* London 7 (1928) pp 249 50

*** *The Central Asian Review* London 8 (1960) pp 342-43

**** Hugh Seton Watson, *The New Imperialism*, London 1964, Third Impression p 58

और मध्य एशिया की जातीय समस्या की जटिलता से इनकार करना है। जातीय सीमा निर्धारण के विचार का १६२४ मे आविष्कार नही हुआ। वह बहुत पहले से मौजूद था, मगर केवल १६२४ मे उसको कार्यान्वित किया गया, जब इसके लिए ऐतिहासिक परिस्थितिया परिपक्व हो गइ। १६१३ मे ही लेनिन ने अपनी कृति "राष्ट्रीय प्रश्न के सबध मे आलोचनात्मक अभ्युक्तिया" मे जारशाही रूस के पुराने मध्ययुगीन विभाजनो को बदलने और जहा तक हो सके आबादी की जातीय बनावट के अनुसार नये विभाजन कायम करने की आवश्यकता की ओर सकेत किया था।* १६१३ म रूसी सामाजिक-जनवादी मजदूर पार्टी की केन्द्रीय समिति ने 'स्वय स्थानीय आबादी द्वारा उनके आर्थिक और नस्ली भेद तथा जातीय बनावट, आदि के अनुसार क्षेत्रीय स्वायत्त और स्वशासित इकाइया की सीमाओ के निर्धारण" को आवाज बुलन्द की थी।** अप्रैल १६१७ मे पार्टी के सातवे सम्मेलन ने इस पूरी बात की पुनपुष्टि की थी।*** जातीय सीमा निर्धारण के सिद्धात पर उक्राइनी, बेलोरूसी, जाजियाई, आरमीनियाई, आजरबैजानी, तातार, बाश्कीर, चुवाश, कात्मिक और याकूती जातीय जनतत्रा की स्थापना करके पहले ही अमल किया जा चुका था। परतु तुर्किस्तान म इस पर अमल नही किया जा सका था, क्योकि वहा की स्थिति अधिक पचीदा थी। भिन्न मध्य एशियाई जातिया तुर्किस्तान, बुखारा और खीवा के तीन भिन्न राज्यो मे घुली मिली हुई थी।

मध्य एशिया मे जातीय राज्य सीमा निर्धारण का सवाल सबसे पहले लेनिन ने जुलाई १६२० मे तुर्किस्तान जनतत्र के सबध मे तुर्किस्तान आयोग द्वारा प्रस्तुत मसविद पर अपनी टिप्पणिया म उठाया था। लेनिन ने तथाकथित तुर्की जनतत्र की स्थापना के बारे मे रिस्कलाव के राष्ट्रवादी मसविदे को अस्वीकार कर दिया था। निकट भविष्य म जातीय सीमा

---

* V I Lenin, *Collected Works*, vol 20 p 48

** "सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी के प्रस्ताव", १६५४, भाग १ पृष्ठ ३१५। (रूसी सस्करण)

*** वही, पृष्ठ ३४६।

निर्धारण की सम्भावना की परिकल्पना करते हुए उन्होंने तुर्किस्तान का एक नस्ली नक्शा तैयार करने का आग्रह किया जिसमें उज्बेक, किर्गिज और तुर्कमान विभाजन दिखाया गया हो और इन तीनों भागों के विलयन या अलगाव की सहायक परिस्थितियों का आलोचनात्मक, ब्यौरेवार मूल्यांकन किया गया हो।* यद्यपि लेनिन अनेक जातीय जनतन्त्रों में तुर्किस्तान के विभाजन के जरिये उसकी जातियों के सोवियत जातीय राजत्व के आगे के विकास की प्रवृत्ति के महत्त्व को पूर्णत समझ रहे थे मगर उन्होंने इस सवाल में जल्दबाजी करने से मना किया। प्रस्तावित सीमा निर्धारण करने से पहले सारी जरूरी तैयारियाँ कर लेनी थीं।

तुर्किस्तान आयोग ने उस क्षेत्र की नस्ली और आर्थिक स्थितियों के अनुसार तुर्किस्तान का प्रशासकीय पुनर्विभाजन करने के पक्ष में निश्चय किया था। परन्तु उसने तुर्किस्तान जनतन्त्र के इलाके को तुरंत कई जातीय जनतन्त्रों में बाँटने के सुझाव का विरोध किया। ५ जून, १९२० को उसने तार के जरिये अखिल रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के अध्यक्ष मंडल और रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की केन्द्रीय समिति को सूचना दी कि इस प्रकार के विभाजन से तुर्किस्तान में अव्यवस्था फैल जायगी और राष्ट्रवादी तत्वों को अवश्य इसमें मदद मिलेगी। राजनीतिक परिस्थिति के कारण कुछ दिनों तक संयुक्त तुर्किस्तान जनतन्त्र को कायम रखना था।** केन्द्र ने जातीय सीमा निर्धारण को स्थगित करने से सहमति प्रकट करते हुए तुर्किस्तान आयोग को आदेश दिया कि इस सवाल के संबंध में तैयारी का काम जारी रखे। जैसा कि ऊपर कहा गया, ये आदेश लेनिन ने जुलाई १९२० में जारी किये थे। इन आदेशों के अनुसार मध्य एशिया में जातीय राज्य सीमा निर्धारण की सावधानीपूर्ण तैयारियाँ शुरू हुई और उसको कार्यान्वित करना अब केवल समय का सवाल था।

---

*लेनिन संग्रह, खण्ड ३८ पृष्ठ ३२?–३२६। (रूसी संस्करण)

**ख० त० तुर्सुनोव द्वारा उद्धृत "मध्य एशिया के जातीय राज्य सीमा निर्धारण के बारे में", ताशकन्द, १९५७ पृष्ठ ६। (रूसी संस्करण)

१६२१ मे रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की दसवी काग्रेस न पार्टी का आह्वान किया कि वह अतीत मे ज़ारशाही द्वारा उत्पीडित गैर रूसी जातिया की श्रमजीवी जनता की सहायता करे ताकि वह हर तरीके से, जो उसकी जातीय तथा अन्य जीवन स्थितियो के अनुकूल हो, अपने सोवियत राजत्व को विकसित और सुदृढ कर सके।* १६२३ म बारहवी पार्टी काग्रेस ने एक बार फिर जातीय जनतत्रो को सुदृढ बनाने और आगे विकसित करने की परम आवश्यकता पर ज़ोर दिया।**

तुर्किस्तान बुखारा और ख्वारज़म की सोवियत सरकारो की नीति ने जातीय विभागो के निर्माण, जातीय स्वायत्त ओब्लास्तो की स्थापना, देशी जातियो की भाषाओं साहित्य तथा अखबारो के विकास के ज़रिये जातीय सीमा निर्धारण के लिए जमीन तैयार की है। तीनो मध्य एशियाई जनतत्रो की सरकारो ने इस दिशा मे जो कदम उठाये, उनसे विभिन्न जातियो म अपने अपने अलहदा जातीय राजत्व की इच्छा ने ज़ोर पकडा। जातीय मामलो की जन कमिसारियत न, जिसकी स्थापना १६१८ म हो गई थी, अपने अतगत उज्बेक, ताजिक, तुर्कमान, किर्गिज़, तातार, आरमीनियाई, उक्राइनी तथा देशी यहूदियो के अलग अलग विभाग कायम कर लिए थे। ३१ मार्च, १६२१ को तुर्किस्तान केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के अतगत कज़ाख इलाको की सुखसमृद्धि का ध्यान रखन के लिए एक अलहदा कज़ाख विभाग खोला गया। तुर्किस्तान म जातीय मामलो की कमिसारियत को भग करने के बाद इसके अतगत जातीय विभागो को केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के हवाले कर दिया गया और उनकी वही हैसियत थी, जो कज़ाख जातीय विभाग की थी। इन जातीय विभागो न उन लोगो की, जिनका वे प्रतिनिधित्व करते थे जीवन स्थिति संस्कृति और भाषा को सुधारने के लिए बहुत कुछ किया। उन्होंने तुर्किस्तान की केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति को अपनी जातियो की आवश्यकताओ से अवगत

---

*"सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी के प्रस्ताव", भाग १ पृष्ठ ५५६।

**वही, पृष्ठ ७१५।

कराया। तुर्किस्तान की जातियों के आत्मनिर्णय की तैयारी के लिए अखिल रूसी केंद्रीय कार्यकारिणी समिति ने अगस्त १९२० में तुर्किस्तान केंद्रीय कार्यकारिणी समिति को यह सुझाव दिया कि वह जातीय बनावट के अनुसार तुर्किस्तान के प्रशासकीय ज़िलों के पुनर्विभाजन की योजना बनाये। अगस्त १९२१ में ट्रांसकास्पियन ओब्लास्त का नाम बदलकर तुर्कमान ओब्लास्त रख दिया गया, क्योंकि वहां तुर्कमान जाति के लोगों का बहुमत था।* अप्रैल १९२२ में जेतीसुव, सिर-दरिया और फरगाना ओब्लास्तों के किर्गिज़ बहुमतवाले क्षेत्रों को मिलाकर किर्गिज़ ओब्लास्त का संगठन किया गया। बुखारा और ख्वारज़्म की केंद्रीय कार्यकारिणी समितियों में तुर्कमान और किर्गिज़ जातीय विभाग कायम किये गये। बुखारा जनतंत्र में चारजुए को केंद्र मानकर तुर्कमान ओब्लास्त बनाया गया। १९२२ में पूर्वी बुखारा, जहां ताजिकों का बहुमत था, के प्रशासन के लिए एक विशेष आयोग स्थापित किया गया। अक्तूबर १९२३ में ख्वारज़्म जनतंत्र में एक तुर्कमान और एक करा-कल्पाक ओब्लास्त संगठित किये गये। उज़्बेक बहुमत के इलाकों को अलग करके नोवा-उरगेंच ओब्लास्त और खीवा रायोन बनाया गया।**

१९२० में किर्गिज़ (कज़ाख) स्वायत्त सोवियत समाजवादी जनतंत्र के निर्माण के साथ जातीय सीमा निर्धारण का सवाल सामने आ गया। अक्तूबर १९२० में तुर्किस्तान स्वायत्त सोवियत समाजवादी जनतंत्र के ट्रांसकास्पियन ओब्लास्त के उत्तरी भाग को कज़ाख लोगों की इच्छा के अनुसार किर्गिज़ स्वायत्त सोवियत समाजवादी जनतंत्र में मिला दिया गया। किर्गिज़ जनतंत्र की स्वायत्तता के संबंध में रू० सो० स० स० जनतंत्र की केंद्रीय कार्यकारिणी समिति द्वारा १ सितम्बर, १९२० को जारी की गई ज्ञप्ति की धारा २ में यह प्रबंध था कि तुर्किस्तान स्वायत्त सोवियत

---

*श० इ० मुहम्मदजानोव "१९२४ में मध्य एशिया के जातीय राज्य सीमा निर्धारण के इतिहास की बाबत",—'[illegible]' १९५५ खण्ड १ पृष्ठ ८९। (रूसी संस्करण)

**वही, पृष्ठ ८६।

समाजवादी जनतन्त्र के किरगिज (कज़ाख) क्षेत्र को इन प्रोब्लास्तों के जनगण की इच्छा के अनुसार किरगिज स्वा० सो० स० जनतन्त्र में मिला दिया जाय।* जनवरी १९२१ में तुर्किस्तान स्वा० सो० स० जनतन्त्र के कज़ाख ग़रीबों की प्रथम क्षेत्रीय कांग्रेस ने तुर्किस्तान स्वा० सो० स० जनतन्त्र के सिर-दरिया और जेतीसुव प्रोब्लास्तों के कज़ाख इलाकों को किरगिज स्वा० सो० स० जनतन्त्र में मिलाने की माग की। मार्च १९२२ में रू० सो० स० स० जनतन्त्र की जातीय मामलों की कमिसारियत में इस सवाल पर विचार विमर्श तथा अप्रैल १९२२ में तुर्किस्तान और किरगिज स्वा० सो० स० जनतन्त्र की ग्यारहवीं पार्टी कांग्रेस के प्रतिनिधियों के सम्मेलन में यह साफ हो गया कि तुर्किस्तान स्वा० सो० स० जनतन्त्र के कज़ाख क्षेत्रों को किरगिज स्वा० सो० स० जनतन्त्र में मिलाने का सवाल अभिन्न रूप से मध्य एशिया के जातीय राज्य सीमा निर्धारण के आम सवाल से सम्बद्ध है। इस तरह हम देखते हैं कि जातीय सीमा निर्धारण की माग मध्य एशिया की जातियों ने स्वयं उठाई थी। सबसे पहले स्थानीय पार्टी तथा अन्य सामाजिक सगठनों ने ही इसकी माग की और केन्द्र ने १९२४ में जातीय सीमा निर्धारण करके केवल इस माग की पूर्ति की।

फरवरी १९२४ में जातीय सीमा निर्धारण के सवाल पर बुखारा के पार्टी तथा सोवियत कार्यकर्ताओं के सम्मेलन में विचार किया गया। सम्मेलन इस नतीजे पर पहुचा कि सवाल बिल्कुल सुसामयिक है। इसके बाद बुखारा कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति ने २५ फरवरी, १९२४ को अपने पूर्णाधिवेशन में इस प्रश्न पर विचार किया। पूर्णाधिवेशन ने भी इसकी अनुमति दी। मार्च १९२४ में ख्वारज़्म के पार्टी तथा सोवियत कार्यकर्ताओं के एक सम्मेलन ने भी जातीय सीमा निर्धारण करने के विचार का समर्थन किया। १० मार्च १९२४ को तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति, तुर्किस्तान की केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति और ताशकन्द के पार्टी तथा सोवियत कार्यकर्ताओं के संयुक्त सम्मेलन ने जातीय सीमा

---

*इ० खादारोव, "मध्य एशिया का जातीय सीमा निर्धारण"–'नोवी वोस्तोक', १९२५, अंक ८–९ पृष्ठ ६६।

निर्धारण के विचार का पूर्णतः समर्थन किया। २३-२४ मार्च, १९२४ को तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी के पूर्णाधिवेशन ने जातीय सीमा निर्धारण की मांग के लिए अपनी स्पष्ट अनुमति दी।

परन्तु जातीय सीमा निर्धारण के सवाल को तय करने में ख्वारज्म जनतन्त्र में कुछ कठिनाइयां हुईं। ख्वारज्म की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति की कार्यकारिणी समिति ने बिना कोई उचित कारण बताए हुए इसका विरोध किया। परन्तु बड़ी हद तक पार्टी के आम सदस्यों के समर्थन के दबाव से ख्वारज्म की कम्युनिस्ट पार्टी की कार्यकारिणी समिति को अपना गलत मत बदलना पड़ा। उसने भी ख्वारज्म जनतन्त्र के जातीय सीमा निर्धारण की आवश्यकता को स्वीकार किया।

५ अप्रैल १९२४ को रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बा०) की केन्द्रीय समिति के पोलिटब्यूरो ने मध्य एशिया के जनतन्त्रों का जातीय सीमा निर्धारण करने के संबंध में मध्य एशिया के पार्टी-संगठनों के सुझावों को सिद्धांततः स्वीकार कर लिया और रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बा०) के मध्य एशिया ब्यूरो को आवश्यक तैयारियां करने का आदेश दिया। २८ अप्रैल १९२४ को मध्य एशिया ब्यूरो ने उज्बेकों, तुर्कमानों, कज़ाखों किर्गिज़ों और ताजिकों के लिए क्षेत्रीय आयोग तथा उप-आयोग नियुक्त किये। उन्हें यह कार्यभार दिया गया कि जिन जनतन्त्रों और ओब्लास्तों का निर्माण करना है उनके इलाके तय करके सीमा निर्धारण को व्यवहार में कार्यान्वित करें।

मई १९२४ में तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी की आठवीं कांग्रेस ने भी इस सवाल पर विचार किया। इस कांग्रेस में रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बा०) की केन्द्रीय समिति ने रुद्ज़ुताक को स्थानीय कम्युनिस्टों के निर्णयों की जानकारी हासिल करने के लिए भेजा था। तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी के सचिव ने जातीय सीमा निर्धारण के सवाल पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि मध्य एशिया में सोवियत जातीय नीति की अमल में "यह एक प्रगतिशील कदम" है। अन्त में प्रतिनिधियों ने इस बात पर

---

*'तुर्किस्तानस्काया प्राव्दा' अंक १०० (२७७) ८ मई १९२४।

जोर दिया कि जातीय सीमा निर्धारण से मध्य एशिया की जातियों के आर्थिक और सांस्कृतिक विकास की सम्भावनाएं बहुत बढ जायेंगी। एक ताजिक प्रतिनिधि सगिजबायेव ने बताया कि अगर यह प्रस्तावित सुधार नहीं किया गया, तो जातीय मतभेदों के कारण समाजवादी निर्माण के काम में बाधा पड़ती रहेगी।* ख्जुताव ने "मन की लहरों" के आन्दोलन के खतरे से खबरदार किया और पार्टी कार्यकर्ताओं का आवाहन किया कि ऐसे आन्दोलन को "स्वस्थ कम्युनिस्ट मार्ग से विचलित नहीं होने दें।**

जातीय राज्य सीमा निर्धारण व्यवहार मे

१० मई, १९२४ को जातीय सीमा निर्धारण आयोग ने जातीय आयोगों की सिफारिशों पर विचार किया। उसने पूर्ण रूप मे उजबेक और तुर्कमान जातीय जनतत्रों की तथा ताजिक और किरगिज ओब्लास्तों की स्थापना का समर्थन किया। उसने तुर्किस्तान के कजाख इलाकों को कजाख स्वा० सा० स० जनतत्र मे मिलाने और एक मध्य एशियाई संघ स्थापित करने के लिए कजाख जातीय आयोग की सिफारिश को अस्वीकार कर दिया। रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की केन्द्रीय समिति के मध्य एशियाई ब्यूरो ने जातीय सीमा निर्धारण आयोग की सिफारिशों को रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की केन्द्रीय समिति के पास भेज दिया।

रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की केन्द्रीय समिति के पोलिटब्यूरो ने २ और १२ जून, १९२४ को इन सिफारिशों पर विचार किया। १२ जून को उसने मध्य एशिया के जनतत्रों के जातीय सीमा निर्धारण के सबध मे एक प्रस्ताव पास कर निम्नलिखित बातों का सुझाव दिया

१ स्वतत्र उजबेक और तुर्कमान जनतत्रों का निर्माण किया जाय और ख्वारज्म जनतत्र को, उससे तुर्कमान इलाकों को अलग करने के बाद वर्तमान रूप मे कायम रखा जाये।

---

* वही।

** वही, अक १८१ (४५८), १८ अगस्त, १९२४।

निर्धारण के विचार का पूर्णत समर्थन किया। २३ २४ मार्च, १९२४ का तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी के पूर्णाधिवेशन ने जातीय सीमा निर्धारण की माग के लिए अपनी स्पष्ट अनुमति दी।

परन्तु जातीय सीमा निर्धारण के सवाल को तय करने मे ख्वारज्म जनतन्त्र मे कुछ कठिनाइया हुई। ख्वारज्म की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति की कार्यकारिणी समिति ने बिना कोई उचित कारण बताये हुए इसका विरोध किया। परन्तु बडी हद तक पार्टी के आम सदस्यों के समर्थन के दबाव से ख्वारज्म की कम्युनिस्ट पार्टी की कार्यकारिणी समिति को अपना गलत मत बदलना पडा। उसने भी ख्वारज्म जनतन्त्र के जातीय सीमा निर्धारण की आवश्यकता को स्वीकार किया।

५ अप्रैल, १९२४ को रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की केन्द्रीय समिति के पालिटब्यूरो ने मध्य एशिया के जनतन्त्रों का जातीय सीमा निर्धारण करने के सबध मे मध्य एशिया के पार्टी सगठनो के सुझावो को सिद्धातत स्वीकार कर लिया और रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) के मध्य एशिया ब्यूरो को आवश्यक तैयारिया करने का आदेश दिया। २८ अप्रैल, १९२४ को मध्य एशिया ब्यूरो ने उज्बेको, तुर्कमानो कजाखो किर्गिजो और ताजिको के लिए क्षेत्रीय आयोग तथा उप आयोग नियुक्त किये। उन्हे यह कार्यभार दिया गया कि जिन जनतन्त्रो और ओब्लास्तो का निर्माण करना है उनके इलाके तय करके सीमा निर्धारण को व्यवहार मे कार्यान्वित करे।

मई १९२४ मे तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी की आठवी काग्रेस ने भी इस सवाल पर विचार किया। इस काग्रेस मे रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की केन्द्रीय समिति ने रूदजुताक को स्थानीय कम्युनिस्टो के विचारो की जानकारी हासिल करने के लिए भेजा था। तुर्किस्तान कम्युनिस्ट पार्टी के सचिव ने जातीय सीमा निर्धारण के सवाल पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला। उन्होने कहा कि मध्य एशिया मे सोवियत जातीय नीति की तामील मे "यह एक प्रगतिशील कदम" है।* बहुत से प्रतिनिधियो ने इस बात पर

*'तुर्किस्तानस्काया प्राव्दा' अक १०० (३७७) ८ मई, १९२४।

जोर दिया कि जातीय सीमा निर्धारण स मध्य एशिया की जातियो के आर्थिक और सास्कृतिक विकास की सम्भावनाए बहुत बढ जायेगी। एक ताजिक प्रतिनिधि सगिजग्रायव ने बताया कि अगर यह प्रस्तावित सुधार नही किया गया, तो जातीय मतभेदा के कारण समाजवादी निर्माण के काम म बाधा पडती रहगी।* रुदजुताव ने "मन की लहरा" के आन्दोलन के खतरे से खबरदार किया और पार्टी कार्यकर्ताग्रा का ग्रावाहन किया कि ऐस ग्रान्दोलन को 'स्वस्थ कम्युनिस्ट माग' स विचलित नही होने दे।**

जातीय राज्य सीमा निर्धारण व्यवहार मे

१० मई, १९२४ को जातीय सीमा निर्धारण ग्रायाग न जातीय ग्रायोगा की सिफारिशा पर विचार किया। उसने पूण रूप मे उज्बेक और तुकमान जातीय जनतत्रा की तथा ताजिक और किरगिज ग्रोब्लास्तो की स्थापना का समथन किया। उसने तुकिस्तान के कजाख इलाका को कजाख स्वा० सो० स० जनतत्र म मिलान और एक मध्य एशियाई सघ स्थापित करन के लिए कजाख जातीय ग्रायाग की सिफारिश का अस्वीकार कर दिया। रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की केन्द्रीय समिति के मध्य एशियाई ब्यूरो ने जातीय सीमा निर्धारण ग्रायोग की सिफारिशा को रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बो०) की केन्द्रीय समिति के पास भेज दिया।

रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बा०) की केन्द्रीय समिति के पोलिटब्यूरो ने २ और १२ जून १९२४ को इन सिफारिशो पर विचार किया। १२ जून को उसन मध्य एशिया के जनतत्रा के जातीय सीमा निर्धारण के सबध म एक प्रस्ताव पास कर निम्नलिखित बाता का सुझाव दिया

१ स्वतत्र उज्बेक और तुकमान जनतत्रा का निमाण किया जाये और ख्वारज्म जनतत्र को उससे तुकमान इलाका को अलग करने के बाद, वतमान रूप म कायम रखा जाये।

---

*वही।

**वही अक १८१ (४५८) १८ अगस्त १९२४।

२ तुर्किस्तान के किर्गिज़ (यानी कज़ाख) इलाकों का किर्गिज़ (कज़ाख) स्वा० सो० स० जनतंत्र मे मिला दिया जाये।

३ एक स्वायत्त कराकिर्गिज़ (यानी किर्गिज) **ओब्लास्त** की स्थापना करके उसे रूसी सो० स० म० जनतंत्र मे मिला दिया जाये।

४ उज़्बेक जनतंत्र के भीतर ताजिकों का एक अलहदा स्वायत्त **ओब्लास्त** कायम किया जाये।

५ सोवियत संघ की सोवियतों की आगामी कांग्रेस मे सोवियत संघ तथा स्वतंत्र तुर्कमान और उज़्बेक जनतंत्रो के बीच इन जनतंत्रो के संघ मे शामिल होने के बारे म संधि की जाये।*

आगे चलकर ख्वारज्म भी जातीय सीमा निर्धारण के दायरे मे आ गया। ख्वारज्म की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति के कार्यकारिणी ब्यूरो ने २६ जुलाई, १६२४ की अपनी बैठक मे ख्वारज्म के जातीय सीमा निर्धारण के प्रति अपना विरोध का मत बदल दिया।

क्षेत्रीय आयोग ने अपना काम सितम्बर १६२४ म पूरा किया। उस म समस्त जातियो का समान प्रतिनिधित्व था। १६ सितम्बर, १६२४ को तुर्किस्तान की केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के असाधारण अधिवेशन ने सीमा निर्धारण के प्रस्ताव पर अपनी कानूनी मुहर लगा दी और उज़्बेकों, तुर्कमानों, कजाखों, ताजिकों और किर्गिज़ों को इस जनतंत्र से अलग होने और स्वयं अपना जातीय राजत्व स्थापित करने का अधिकार प्रदान किया। २० और २६ सितम्बर, १६२४ को क्रमश पांचवी अखिल-बुखारा और अखिल ख्वारज्म **कुरुलताइयो** के अधिवेशन ने भी इन जनतंत्रो मे रहनेवाली विभिन्न जातियो को यही अधिकार दिया। १४ अक्तूबर १६२४ को अखिल रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति ने तुर्किस्तान केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के १६ सितम्बर के प्रस्ताव का अनुमोदन किया और तुर्किस्तान स्वा० सो० स० जनतंत्र को रूसी सो० स० स० जनतंत्र से अलग कर

---

*व० नपोमनिन द्वारा उद्धृत 'उज़्बेकिस्तान मे समाजवाद के निर्माण का ऐतिहासिक अनुभव', पृष्ठ १६८–१६६।

दिया।* अखिल रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति ने ताजिक स्वायत्त ओब्लास्त को उज्बेक जनतन्त्र के भीतर एक स्वायत्त जनतन्त्र का दर्जा देने का निश्चय किया। २७ अक्तूबर १६२४ को सोवियत सघ की केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति ने एक परिविधि स्वीकार करके मध्य एशिया के सोवियत जनतन्त्रो के जातीय सीमा निर्धारण तथा उज्बेक सो० स० जनतन्त्र और तुर्कमान सो० स० जनतन्त्र के सघ मे प्रवेश को मान्यता प्रदान की।

इस प्रकार मध्य एशिया का जातीय सीमा निर्धारण सम्पन्न हुआ। मध्य एशिया की जातिया को इतिहास म पहली बार अपने जातीय राज्य के गठन का मौका मिला। यह काम सोवियत सत्ता ने कुल मिलाकर सहज ढग से कर लिया, यद्यपि अनेक कठिनाइया का सामना करना पडा। पूजीवादी राष्ट्रवादिया ने स्थिति से फायदा उठाना चाहा। उन्होने जातीय अध राष्ट्रवादवाद की भावना को उत्तेजित करने की कोशिश की। उज्बक पूजीवादी राष्ट्रवादी ख्वारज्म जननत्र को जातीय सीमा निर्धारण से बचाये रखना चाहते थे। इसी प्रकार कज़ाख पजीवादी राष्ट्रवादी तत्वो ने ताशकन्द शहर को उज्बेक जनतत्र म देने के फैसले को बदलवाने के लिए अभियान करना की कोशिश की। उनकी माग थी कि पूरे ताशकन्द और मिर्जाचुल उयेज्दो को कज़ाख स्वा० सो० स० जनतत्र मे मिला दिया जाये। उज्बेक राष्ट्रवादियो की उलटे इच्छा यह थी कि सिर-दरिया ओब्लास्त के उन शहरा को जहा उज्बेका की बडी आबादी थी स्वायत्त शहरा के रूप म सगठित किया जाये। याद रहे कि चिमकन्द और तुर्किस्तान शहरा म उज्बेका का बहुमत था परतु आसपास के ग्रामीण क्षेत्रो म कज़ाख बहुमत म थे।

१६२४ म मध्य एशिया की परिस्थितियो म इस प्रकार के जातीय वाद विवाद का उत्पन्न होना बिल्कुल स्वाभाविक था। प्रतिक्रियावादी राष्ट्रवादी तत्वो का यद्यपि राजनीतिक दमन और किसी हद तक आर्थिक तौर पर उन्ह कमज़ोर कर दिया गया था परन्तु वे उस समय तक पूरी तरह लुप्त नही हुए थे। भूतपूर्व शोषक वर्गों को उचित मौके का इतज़ार था।

---

*व० नेपोमनिन द्वारा उद्धत, उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ १६८–१६६।

भूमि सुधार अभी पूरा नही हुआ था और कृषि का सामहिकीकरण और समाजवादी उद्योगीकरण अभी शुरु नही हुए थे। ऐसी स्थिति मे पूजीवादी राष्ट्रवादी तत्व कभी कभी पार्टी म घुस आने म सफल हो जाते थे। परन्तु पार्टी और सोवियत सरकार के लिए यह बात श्रेयस्कर है कि राष्टवादी तत्वो को कभी यह मौका नही दिया गया कि विभिन्न जातीय समूहा म घणा की आग भडकाए और हिसा और मारकाट का बाजार गम करे। तुर्किस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी ने जनता मे फट डालने की पूजीवादी राष्ट्रवादियो की कोशिशा को विफल करन के लिए जातीय सीमा निर्धारण की योजना के उसूला के बारे म जनगण को शिक्षित करने के लिए जन अभियान चलाया। जातीय सीमा निर्धारण पर अपने थीसिस म पार्टी ने कहा

"मध्य एशिया की श्रमजीवी जनता को सीखना चाहिए कि अलहदा स्वतत्र सोवियत जनतत्रो का निर्माण हमारे सामन अतिम राष्ट्रीय कायभार और ध्येय नही पेश करता किसी जाति की श्रमजीवी जनता के जातीय अलगाव और अलहदगी तो और दूर की बात है। जातीय दुशमनी नहा, बल्कि सवहारा अतराष्ट्रीयवाद नये जनतत्रा के भावी काम का आधार है। जो कोई उलटी बात सोचता है, वह जान या अनजान मजदूरा और किसानो की सत्ता का दुशमन है।"*

जातीय सीमाओ का निर्धारण कोई आसान काम नही था। जातीय सीमा निर्धारण आयोग को अनक विवादास्पद इलाको की जातीय बनावट का अध्ययन करने और वहा के जनगण की इच्छा मालूम करने के लिए उन जगहा पर जाना पडा। सोवियत जातीय जनतत्रो और स्वायत्त ओब्लास्तो के क्षेत्रो और सीमाओ का निधारण करन म जातीय तत्व निस्सदेह सबसे महत्वपूण था। जातीय राज्य सरचना म उन इलाका की ओर विशेष ध्यान दिया गया जहा एक जातीय समूह के लोग गठित रूप मे रहते थ। परतु जातीय तत्व के अलावा जातीय जनतत्रा मे गठित

---

*ख० त० तुसूनोव द्वारा उद्धत, "मध्य एशिया के जातीय राज्य सीमा निर्धारण के बारे मे" पष्ठ १८।

इलाके या स्वायत्त ओब्लास्त की जीवन-पद्धति तथा आर्थिक अखण्डता का भी ध्यान रखा गया। लेनिन ने अपनी कृति "राष्ट्रीय प्रश्न पर आलोचनात्मक अभ्युक्तियां" में जहां तक सम्भव हो आबादी की जातीय बनावट के अनुसार क्षेत्र के विभाजन की आवश्यकता पर जोर देते हुए, यह भी कहा है कि अगरचे आबादी की जातीय बनावट अत्यंत महत्वपूर्ण कारक है, मगर यह एकमात्र तथा सबसे महत्वपूर्ण कारक नहीं है, उसके अतिरिक्त और भी कारक है।

मध्य एशिया में जातीय सीमा निर्धारण करते समय लेनिन के इस कथन का पालन किया गया। वहां जातीय जनतन्त्रों और स्वायत्त ओब्लास्तों का निर्माण गठित जातीय इलाकों के आधार पर किया गया, परन्तु ऐसे अलग-अलग इलाके जहां एक जातीय समूह का बहुमत था मगर जो आर्थिक या भौगोलिक दृष्टि से दूसरे जातीय समूह के क्षेत्र से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए थे (जैसे सिर-दरिया ओब्लास्त के कजाख इलाकों में उज्बेक शहर) उन्हें आम तौर पर इन्हीं में मिला दिया गया। कई ताजिक इलाकों को घनिष्ठ आर्थिक और सांस्कृतिक सम्बन्धों के कारण उज्बेक जनतन्त्र में मिला दिया गया।

जातीय सीमा निर्धारण के कारण मध्य एशिया में भूतपूर्व तीन बहुजातीय राज्यों के स्थान पर अनेक एकजातीय राज्य कायम हो गये। इससे जटिल जातीय गुत्थी को सुलझाने में काफी आसानी हुई, जो समाजवादी विकास के रास्ते में बाधा बनी हुई थी। पुरानी राजनीतिक और प्रशासकीय सीमाएं केवल जारशाही विजय के समय के सैनिक, सामरिक तथा राजनीतिक उद्देश्यों का नतीजा थीं। और इस कारण उनसे जातीय समस्या और बिगड़ती जाती थी। पुरानी सीमाएं मध्य एशिया के जनगण के जातीय विभाजन को काटती चलती थीं और तुर्किस्तान, बुखारा और खीवा के पुराने शासन उनका इस्तेमाल करके अपनी सत्ता कायम रखने के लिए एक जातीय समूह को दूसरे से लड़ाया करते थे। जातीय सीमा निर्धारण से यह स्थिति बदल गई और जातीय शत्रुता का वह आधार ही खिसक गया, जिसपर पूंजीवादी राष्ट्रवादी हमेशा पनपते थे।

अगर १९२४ के सीमा निर्धारण से पहले उज्बेको का बडा भाग, यानी ६६ ५ प्रतिशत तुकिस्तान स्वा० सो० स० जनतत्र मे रहते थे, मगर उस जनतत्र की कुल जनसख्या मे उनका अनुपात केवल ४१ ४ प्रतिशत था, तो सीमा निर्धारण के बाद मध्य एशिया के कुल उज्बेका का ८२ ६ प्रतिशत उज्बेक सा० स० जनतत्र मे आ गया जहा उनका बहुमत बना – ७६ १ प्रतिशत। जानीय सीमा निर्धारण से पहले तुर्कमाना का मध्य एशिया क तीनो जनतत्रा म से किसी मे भी स्पष्ट बहुमत नही था, मगर अब कुल तुर्कमानो मे ९४ २ प्रतिशत तुकमान सो० स० जनतत्र मे आये और जनतत्र की कुल जनसख्या मे वे ७१ ९ प्रतिशत थे। इसी प्रकार ताजिक, जो तुर्किस्तान स्वा० सो० स० जनतत्र की आबादी का ७ ७ प्रतिशत और बुखारा जनतत्र की आबादी का ३१ प्रतिशत थे, उज्बेक सो० स० जनतत्र के भीतर ताजिक स्वा० सो० स० जनतत्र मे आबादी का ७१ २ प्रतिशत थे। मध्य एशिया के समस्त ताजिको म ७५ २ प्रतिशत ताजिक स्वा० सो० स० जनतत्र मे आ गये थे जिसे १९२९ म सघीय जनतत्र का दजा दे दिया गया। किगिज, जो तुर्किस्तान स्वा० सो० स० जनतत्र की आबादी म केवल १० ८ प्रतिशत थे, रूसी सो० स० स० जनतत्र के भीतर नव सगठित कराकिगिज स्वायत्त **ओब्लास्त** की आबादी का ६६ प्रतिशत थे। मध्य एशिया के सभी किगिजो का ८६ ७ प्रतिशत अब इस स्वायत्त जातीय **ओब्लास्त** मे था जिसे १९२६ मे किंगिज स्वा० सा० स० जनतत्र बना दिया गया। १९३६ मे उस एक सघीय जनतत्र का दर्जा दे दिया गया। कराकल्पाका म ७९ ३ प्रतिशत अब किगिज (कज़ाख) स्वा० सो० स० जनतत्र के भीतर कराकल्पाक स्वायत्त **ओब्लास्त** मे शामिल थे, जहा कुल जनसख्या म उनका एक खासा बडा हिस्सा था – ३८ १ प्रतिशत। १९३२ मे कराकल्पाक स्वायत्त **ओब्लास्त** का रू० सा० स० स० जनतत्र के भीतर कराकल्पाक स्वा० सो० स० जनतत्र बना दिया गया। १९३६ म वह एक स्वायत्त जनतत्र के रूप म उज्बेक सा० स० जनतत्र मे शामिल हो गया। रू० सो० स० स० जनतत्र के भीतर किगिज (कज़ाख) स्वा० सो० स० जनतत्र मे सभी कज़ाखा का ९३ ४ प्रतिशत शामिल थे, जो इस

जनतन्त्र की जनसख्या मे ५७४ प्रतिशत थे। १६३६ मे कजाख स्वा० सो० स० जनतन्त्र को भी सघीय जनतन्त्र बना दिया गया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जातीय सीमा निधारण के बाद मध्य एशिया का जातीय नक्शा ज्यादा न्यायोचित हो गया। पुरानी जातीय असगतियो को दूर करके मध्य एशिया की जातीय समस्या का बेहतर हल ढूढ निकाला गया। इससे जनगण को प्रशासन के अधिक नजदीक लाकर मध्य एशिया की जातियो के आर्थिक और सास्कृतिक पिछडेपन को जल्दी दूर करने का स्थायी आधार तैयार हुआ। इससे प्रशासन का अधिक जनवादीकरण हुआ और आर्थिक विकास तथा सास्कृतिक प्रगति की रफ्तार बहुत तेज हो गई। इसने पूजीवादी राष्ट्रवाद और महाशक्तिवादी अधराष्ट्रवाद की जडो पर घातक चोट पहुचाई। विभिन्न जातीय समूहो के बीच शाति को सुनिश्चित करके इसने सोवियत सघ की जातियो के बीच मैत्री और भ्रातृत्व को प्रोत्साहित किया। जातीय सघर्षों का आधार खत्म करके इसने मध्य एशिया की जातियों को समाजवाद के निर्माण के ऐतिहासिक काय मे शामिल होने के योग्य बना दिया। सक्षेप मे, जहा तक मध्य एशिया की जातियो की प्रगति और सुख-समृद्धि का सबध है, जातीय सीमा-निर्धारण के परिणाम पूणत सकारात्मक और लाभदायक थे।

मध्य एशिया मे १६२४ मे जो जातीय राज्य सीमा निर्धारण हुआ, उसका विश्वव्यापी महत्त्व था, खासकर पूव के उन देशो के लिए, जिनके सामने औपनिवेशिक जूए से मुक्ति पाने के बाद अपने प्रशासकीय विभाजनो के पुनगठन का सवाल खडा हुआ था। भारत भी ऐसा ही एक देश था, जहा प्रशासकीय पुनगठन का सवाल ऐतिहासिक दृष्टि से आवश्यक हो गया था। ब्रिटिश शासन-काल का देश का पुराना प्रशासकीय विभाजन औपनिवेशिक कब्जे और उसके दृढीकरण की पैदावार था और जनसाधारण की इच्छा के विपरीत था।

मध्य एशिया का ऐतिहासिक अनुभव इस बात का सबूत है कि भारत मे भाषा के आधार पर राज्यो के पुनगठन के लिए जो कदम उठाये गये, वे सही थे।

दसवा अध्याय

आर्थिक तथा सास्कृतिक पिछडेपन का उन्मूलन

समाजवादी उद्योगीकरण

सावियत सरकार ने सोवियत सघ की जातिया म वास्तविक समानता स्थापित करने का बीडा उठाया था। यह एक बहुत कठिन और जटिल काय था। वास्तविक समानता कैसे हो सकती थी, जब मध्य एशिया के सावियत जनतत्रा के पास अभी अपना कोई उद्योग नही था, जब उनकी कृपि बहुत पिछडी हुई थी और लोग अनपढ थे?

पार्टी की दसवी काग्रेस (१६२१) ने विभिन्न जातिया के बीच वास्तविक असमानता के उन्मूलन का उद्देश्य अपने सामन रखा। पार्टी को गैर रूसी जातियो की श्रमजीवी जनता की सहायता करनी थी ताकि वे सफलतापूवक मध्य रूस के स्तर तक पहुच जाये। बारहवी काग्रेस (१६२३) ने भी पिछडी हुई जातिया के सास्कृतिक और आर्थिक स्तर को ऊचा करके जातिया के बीच असमानता को दूर करन का आह्वान किया। इस भारी आर्थिक और सास्कृतिक पिछडेपन को मिटाने के लिए बडी मात्रा मे पूजी लगाने की और बडी सख्या मे अत्यत निपुण विशेषज्ञा की जरूरत थी। इतना बडा काम इतिहास की एक छोटी सी अवधि म केवल अधिक उनत रूसी जनगण की बिरादराना सहायता से हल हो सकता था। मध्य एशियाई जनतत्रा की सहायता नाना प्रकार से—राजनीतिक, वित्तीय, तकनीकी और सास्कृतिक क्षेत्रा मे—समाजवादी निमाण की प्रक्रिया म की गई। इस सहायता का मतलब यह था कि रूसी जनगण का कुर्बानिया देनी और कष्ट उठाना पडा, क्याकि देश उस समय तक गरीब था और

उन्नत पूजीवादी देशो की तुलना म आर्थिक दृष्टि मे काफी कमजोर था। परन्तु अपना अन्तर्राष्ट्रीय कर्तव्य पूरा करने के लिए रूसी मजदूर वर्ग इस कुर्बानी के लिए तैयार था।

मध्य एशियाई जनतत्रा का सोवियत सरकार द्वारा दी गई वित्तीय सहायता उनके आर्थिक विकास के लिए बहुत महत्वपूर्ण थी। ऐसे भी साल हुए ह, जब कुछ जनतत्रा को उनके खर्च का ८०-९० प्रतिशत सघ से आर्थिक सहायता के रूप मे मिला। मध्य एशिया का औद्योगिक उद्यमा और कृषि के लिए तकनीकी सामान और मशीने भी दी गई। अनेक अनुभवी राजनीतिक कार्यकर्त्ता और अन्य विशेषज्ञ भी रूस से मध्य एशिया भेजे गये। यह उदार सहायता "गरीब रिश्तेदारो" को अपमानजनक दान नही थी। मध्य एशिया के जनगण ने जितनी ही आर्थिक प्रगति की उतना ही अधिक उन्होने सोवियत सघ के समाजवादी निर्माण मे योगदान किया। मध्य एशिया मे कपास की पैदावार मे वृद्धि हुई, तो सोवियत सघ को बाहर से उसके आयात की बिल्कुल जरूरत नही रही। तुर्कमान सा० स० जनतत्र मे तल तथा तेल की वस्तुआ का उत्पादन तेजी से बढा जा द्रुतगति स विकास करनेवाले सोवियत उद्योग के लिए आवश्यक था। सोवियत जनतत्रा म सर्वतोमुखी परस्पर-सहायता और सहयोग से उनकी असमानता को शीघ्रातिशीघ्र दूर करने और उनकी मैत्री को सबल बनाने म सहायता मिली। सोवियत सघ की जातिया की इस मैत्री और भ्रातृत्व की ताजी मिसाल ताशकन्द को दी गई वह उदार सहायता है, जो अप्रैल १९६६ के भयकर भचाल के बाद देश के कोने-कोने से उमड पडी। विभिन्न सोवियत जनतत्रो से हजारा स्वयसेवका ने उज्बेकिस्तान की राजधानी मे नये घरा का निर्माण किया। बिरादराना जनतत्रा न ताशकन्द म दस लाख वर्ग मीटर गृह निर्माण किया है।

प्रत्येक सामाजिक व्यवस्था की तरह समाजवाद के लिए भी एक निश्चित स्तर की उत्पादन शक्तिया की एक निश्चित भौतिक तथा तकनीकी आधार की जरूरत थी। समाजवाद के लिए यह आधार बडे पैमाने का भारी उद्योग है, जो कृषि को मशीनें तथा खाद मुहैया कर सके। बडे पैमाने के उद्योग के बिना समाजवाद का निर्माण असम्भव है। अत समाजवादी

अर्थव्यवस्था का निर्माण करने के लिए औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े हुए देशों को सबसे पहले उद्योगीकरण करना होता है।

जैसा कि कहा जा चुका है, क्राति से पहले मध्य एशिया का उद्योग बहुत अविकसित था। और फिर गृहयुद्ध मे उसका बडा नुकसान पहुचा। १९२८ मे ही उद्योग को उसके क्रातिपूर्व स्तर पर पुन बहाल किया जा सका।* कृषि की बहाली मे भी बडी सफलताए प्राप्त हुइ। कपास की खेती को उसके युद्धपूर्व स्तर पर पूर्णत पुन स्थापित करने का लक्ष्य १९२७ मे सफलतापूर्वक पूरा हो गया। कपास की खेती का कुल क्षेत्र १९१३ म ४२३ ५ हज़ार हेक्टर था। १९२८ मे वह युद्धपूर्व के स्तर से बढकर ५८८ ५ हज़ार हेक्टर तक पहुच गया था।**

मध्य एशिया के श्रमजीवी जनगण ने १९२६-१९२७ मे अपने जनतत्रों का उद्योगीकरण शुरु किया। मार्च १९२७ मे उज़्बेक सो० स० जनतत्र मे सोवियतो की दूसरी काग्रेस ने सूती कपडा उद्योग का निर्माण, कृषि कच्चा सामान को तैयार करने के उद्योग की नई शाखाओ का सगठन, बिजलीकरण की योजना की पूर्ति और कृषि मशीनो और औज़ारो के उत्पादन का सगठन करना ज़रूरी समझा। १९२७ मे उज़्बेकिस्तान के उद्योगीकरण की दिशा मे प्राथमिक कदम उठाये गये। उस साल कई

---

*कपास ओटाई उद्योग, जो मध्य एशिया का मुख्य उद्योग था, बहाली की अवधि के अत म अपने युद्धपूर्व स्तर से कुछ पीछे था (१४७ ९ हज़ार टन जबकि १९१३ मे १७७ ८ हज़ार टन था)। परन्तु तेल और बिजली के उत्पादन मे वृद्धि सतोषजनक थी। १९१३ मे तुर्किस्तान मे तेल का उत्पादन १३ २ हज़ार टन था। १९२७ १९२८ म वह बढकर ४७ ७ हज़ार टन हो गया, यानी युद्धपूर्व स्तर से ३ ५ गुना अधिक। बिजली का उत्पादन १९२३ मे ३३ लाख किलोवाट घटे था, वह बढकर १९२७ १९२८ मे ३४३ लाख किलोवाट घटे हो गया। ("उज़्बेकिस्तान १५ वर्षों के दौरान", ताशकन्द, १९३८, पृष्ठ ३७ ३९, रूसी सस्करण) ह्वीलर का यह कथन कि "मध्य एशिया के उद्योग का उत्पादन (१९२८ म) सब मिलाकर १९१३ के स्तर का लगभग आधा था" स्पष्टत गलत है और स्थिति को कम करके आकता है (उपरोक्त पुस्तक, पृ० १५९)।

**"उज़्बेकिस्तान १५ वर्षों के दौरान", पृष्ठ ५३।

बिजलीघरों का निर्माण हुआ। मर्गिलान और पुराने बुखारा में रेशमी कपड़े की फैक्टरियां लगाई गईं। फरगाना में एक कताई-बुनाई फैक्टरी और ताशकन्द में जूते और तम्बाकू फैक्टरियां खोली गईं। तेल निस्सारण में भी कुछ प्रगति हुई। भारी उद्योग के विकास के लिए अभी प्रथम पंचवर्षीय योजना की प्रतीक्षा थी।

१९२७-१९२९ के बीच किर्गिज़स्तान के उद्योगीकरण के लिए भी कुछ कदम उठाये गये। इस अवधि में किज़िल किया और सुलूक्तह कोयला खदानों का विस्तार किया गया, करासुव में एक कपास शोधन कारखाना, ओश में एक रेशम फैक्टरी तथा फ्रूंज़े में दो चमड़े की फैक्टरियां कायम की गई। दो आरा मिलें भी खोली गई। इन कारखानों के निर्माण के बावजूद किर्गिज़स्तान में १९२९ में औद्योगिक पैदावार का कुल मूल्य केवल २ करोड़ ६० लाख रूबल था जबकि १९१३ में २ करोड़ ८० लाख था।* किर्गिजस्तान के वास्तविक उद्योगीकरण के लिए भी अभी प्रथम पंचवर्षीय योजना का इंतजार था।

तुर्कमानिस्तान में रेशम-कटाई, बुनाई और कताई फैक्टरियों का अशकाबाद में निर्माण किया गया। लगभग उसी समय तुर्कमान सो० स० जनतंत्र के साधनों का भूगर्भीय सर्वेक्षण शुरू किया गया। तुर्कमान मजदूरों के आधुनिक औद्योगिक उत्पादन में प्रशिक्षण का काम तात्कालिक महत्त्व का था, क्योंकि जनतंत्र में उसके अपने देशी औद्योगिक कमियों का बड़ा अभाव था। १९१६ में केवल २४२ तुर्कमान मजदूर थे जिनमें ७ दक्ष मजदूर थे।** इस कमी को पूरा करने के लिए तुर्कमान सूती मिलों और तेल कारखानों के मजदूरों को क्रमशः मास्को और बाकू में प्रशिक्षित किया गया।

ताजिकिस्तान में उद्योगीकरण प्रथम पंचवर्षीय योजना के साथ शुरू हुआ। उससे पहले १९२४-१९२५ में कुछ तेल मिलों और बिजलीघरों का निर्माण किया गया था।

---

* 'सोवियत संघ में समाजवादी जाति का निर्माण', मास्को १९६२, पृष्ठ ४९६। (रूसी संस्करण)

** वही, पृष्ठ ५९७।

मध्य एशिया म उद्योगीकरण का प्रथम महत्वपूर्ण चरण प्रथम पचवर्षीय योजना ही से शुरू हुआ। पार्टी की चौदहवी काग्रेस ने प्रथम पचवर्षीय योजना तैयार करने के लिए अपने निदेश मे इस बात पर जोर दिया था कि योजना मे पिछडे हुए इलाको के आर्थिक और सास्कृतिक विकास के सवाल पर खास ध्यान देना चाहिए।* प्रथम योजना मध्य एशिया म वास्तविक औद्योगिक क्राति की शुरुआत साबित हुई।

नवम्बर १६२७ मे उज्बेकिस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की तीसरी काग्रस ने प्रथम पचवर्षीय योजना से सबधित समस्याओ पर विचार किया। उसने उज्बेकिस्तान के विकास की योजना पर सम्पूर्ण सोवियत सघ की योजना के एक आवश्यक अग के रूप मे विचार किया। प्रथम योजना का एक मुख्य उद्देश्य था सोवियत सघ के वस्त्रोद्योग के लिए कपास मे आत्मनिर्भरता की प्राप्ति। योजना ने उज्बेकिस्तान मे कोयला और तेल उद्योगा के विकास की ओर बहुत ध्यान दिया। उसने मध्य एशिया मे एक धातुकर्म-उद्योग के निर्माण पर भी जोर दिया। कृषि की पैदावार के उपयोगीकरण से सबधित अन्य उद्योगो की ओर भी उचित ध्यान दिया गया। उज्बेकिस्तान के लिए योजना का पहला प्रारूप जून १६२८ मे तैयार हुआ। दूसरा सशोधित प्रारूप मई १६२६ मे उज्बेकिस्तान की सोवियता की तीसरी काग्रेस मे बहस के लिए पेश किया गया। तीसरा और अतिम प्रारूप जुलाई १६२६ मे केन्द्रीय समिति के पूर्णाधिवेशन द्वारा स्वीकृत हुआ।

उज्बेक सो० स० जनतन्त्र के औद्योगिक विकास के लिए भारी रकम लगाई गई। प्रथम योजना मे औद्योगिक विकास के लिए २,८८४ लाख रूबल की रकम दी गई, जो जनतन्त्र की योजना के अन्तगत कुल पूजी विनियोग का २६ प्रतिशत थी। इससे पहले के चार वर्षों (१६२४ १६२८) की तुलना म वह छह गुना ज्यादा था।**

---

*"सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी के प्रस्ताव", भाग २, पृष्ठ ३४३।

**श० न० उरमस्वायेव, 'सोवियत उज्बेकिस्तान का औद्योगिक विकास", ताशकन्द, १६५८, पृष्ठ १०८। (रूसी सस्करण)

उज्बेकिस्तान मे उस योजना के अतगत जो पूजी लगाई गई, उसका बडा हिस्सा केन्द्र ने दिया था। प्रथम पचवर्षीय योजना के दौरान उज्बेकिस्तान के औद्योगिक विकास का ताक्षणिक पहलू बिजली-उत्पादन, मशीन निर्माण तथा धातुकर्म-उद्योग का विकास था। ताशकन्द मे एक कृषि मशीनरी कारखाना बनाया गया, जो जनतत्र मे कृषि, खासकर कपास की खेती की जरूरत की मशीनें तथा अन्य सामान मुहैया करता था। कृषि मशीनो की मरम्मत के लिए भी एक कारखाना खोला गया। आल्मालीक ताम्र प्रोसेसिग प्लाट तथा चिरचिक रासायनिक कारखाने का निर्माण भी प्रथम योजना के ही दौरान हुआ। दूसरी योजना मे उनका आगे विकास हुआ और वे अखिल-सघीय महत्त्व के विशाल औद्योगिक उद्यम बन गये। प्रथम योजना के दौरान दो सीमेंट फैक्टरिया भी कायम की गई। १९३२ म ताशकन्द मे एक बड सूती कपडा कारखाने का निर्माण शुरू हुआ। बुखारा, फरगाना और मगिलान मे रेशम बाटने और कातने की कई फैक्टरिया कायम की गई। इनके अलावा फल और साग सब्जी की डिब्बाबदी के भी कई कारखाने खोले गये। १९२८ १९३२ की अवधि मे खाद्य-पदार्थ उद्योग की कुल पैदावार के मूल्य म २ ३ गुना, सूती कपडा उद्योग म ५६ गुना और रेशम उद्योग म ५ ४ गुना वृद्धि हुई।*

प्रथम पचवर्षीय योजना के दौरान उज्बेक सो० स० जनतत्र ने समाजवादी उद्योगीकरण मे बडी सफलता प्राप्त की। जबकि केन्द्रीय इलाका मे तो दो गुना वद्धि हुई उज्बेकिस्तान म औद्योगिक पैदावार २ ६ गुना बढी।

ताजिकिस्तान मे प्रथम योजना के दौरान मुख्यत ऐसे उद्योगो का निमाण हुआ, जिनका सबध कृषि की पैदावार के विधायन के पहले चरण स था यानी कपास की सफाई, फल और सब्जी की डिब्बाबदी और रेशम बाटने की फक्टरिया कायम की गई। प्रथम योजना मे औद्योगिक विकास मे केवल २० प्रतिशत पूजी लगाई गई और कृषि मे ५० प्रतिशत।**

---

*श० न० उत्मस्वायेव, उपरोक्त पुस्तक, पष्ठ १२३।

**"सावियत सघ की समाजवादी जाति का निर्माण", पृष्ट ५३२।

प्रथम पचवर्षीय योजना के दौरान किगिजस्तान मे औद्योगिक विकास मे उल्लेखनीय सफलताए प्राप्त हुइ। प्रथम योजना के अतगत किगिजस्तान के आर्थिक और सास्कृतिक विकास के लिए ७७ ७५१ हजार रूबल की रकम लगाई गई। इसमे से आधी से ज्यादा यानी ४०,८७८ २ हजार रूबल भारी उद्योगा मे लगाये गये।* ४१ बडे औद्योगिक उद्यमो का निमाण किया गया। १९३२ मे औद्योगिक उत्पादन का अनुपात कुल उत्पादन का २३ ५ प्रतिशत हो गया था।** किगिजस्तान मे औद्योगिक पैदावार १९२९ की तुलना मे चार गुना और १९१३ की तुलना मे ६१ गुना बढ गयी।***

तुर्कमानिस्तान मे प्रथम पचवर्षीय याजना के दौरान सूती कपडा, रासायनिक तथा खाद्य उद्योगो का निर्माण हुआ। योजना मे जनतत्र की अथव्यवस्था म २७,०८ लाख रूबल पजी लगाने का प्रबध था।**** यह रकम १९२५ १९२८ की अवधि के पूजी विनियोग की चौगुना से अधिक थी। कपास की सफाई, सूती कपडा, तेल और रेशम की फक्टरिया तथा कृषि की पैदावारो के प्रथम विधायन स सबधित अन्य उद्योगो का व्यापक पैमाने पर निर्माण शुरू हुआ। याजना ने तल रासायनिक तथा निर्माण वस्तुओ के उद्यमो जैस भारी उद्यागो की आधार शिला रखी। पयम पच वर्षीय योजना के दौरान औद्योगिक सहकारी सस्थाओ की सख्या मे लगातार वृद्धि हुई। कालीन बुननेवाली स्त्रियो का औद्योगिक सहकारी सस्थाओ म सगठित किया गया और हर सम्भव तरीके से उनकी तकनीकी और वित्तीय सहायता की गई।

---

*"किगिजस्तान का इतिहास", खण्ड २, फ्रूजे १९५६, पष्ठ १७१। (रूसी सस्करण)

**"किगिजस्तान सावियत सत्ता के ३० वर्षो की अवधि मे" फ्रूजे, १९४८, पृष्ठ ३७। (रूसी सस्करण)

***म० लितुनोव्स्काया, "किगिज सा० स० जनतत्र का बजट और आर्थिक तथा सास्कृतिक विकास', फ्रूजे, १९५८, पष्ठ ११। (रूसी सस्करण)

****"तुकमान सा० स० जनतत्र का इतिहास" अशकाबाद, १९५७, खण्ड २, पष्ठ ३१५। (रूसी सस्करण)

मध्य एशियाई जनतंत्रों मे प्रथम पंचवर्षीय योजना को सफलतापूर्वक पूरा किया गया। योजना के दौरान रूस के केन्द्रीय इलाकों की तुलना मे यहां के औद्योगिक विकास की रफ्तार ज्यादा तेज थी। अगर प्रथम योजना के दौरान पुराने औद्योगिक इलाकों मे औद्योगिक पैदावार दो गुना बढी, तो जातीय जनतंत्रों मे वृद्धि की दर ३.५ गुना थी।* योजना के दौरान सोवियत जनगण ने समाजवादी प्रतियोगिता मे बडी संख्या मे श्रम मजदूरों की शिरकत के जरिये श्रम की उत्पादनशीलता बढाने मे सफलता प्राप्त की। जनगण के तकनीकी और सांस्कृतिक स्तर को सुधारने की हर कोशिश की गई। पार्टी और ट्रेड-यूनियनों के बड़े प्रयत्न के फलस्वरूप आविष्कारकों के आंदोलन ने व्यापक रूप धारण कर लिया। केंद्र ने मध्य एशियाई जनतंत्रों के उद्योगीकरण मे बड़ी सहायता प्रदान की। उन्हें अत्यंत दक्ष विशेषज्ञों की सेवायें उपलब्ध करायी गईं और इसके अलावा ताशकन्द टेक्सटाइल मिल, चिरचिक बिजली रासायनिक कारखाने जैसे विशाल औद्योगिक उद्यमों तथा कई बड़े बिजलीघरों के निर्माण के लिए धन संघीय बजट से दिया गया था। जाहिर है कि प्रथम और दूसरी पंचवर्षीय योजनाओं मे परिकल्पित पूंजी विनियोग के कारण मध्य एशिया के जातीय जनतंत्रों के बजटों मे भयंकर घाटे की पूर्ति करना उनके बूते और साधनों मे बाहर की बात थी। १६२६-१६२७ मे यानी प्रथम योजना की पूर्ववेला के वर्ष मे उज्बेक सो० स० जनतंत्र के बजट मे तीन करोड़ रूबल का घाटा था। १६२४-१६२८ के दौरान उज्बेक सो० स० जनतंत्र को १० करोड़ रूबल, तुर्कमान सो० स० जनतंत्र को सात करोड़ रूबल और किरगिजस्तान को तीन करोड़ रूबल से अधिक रकम इन जनतंत्रों के घाटे की पूर्ति के लिए सोवियत संघ के सोवनारखोज के बजट से दी गई।** ताजिकिस्तान मे प्रथम दो पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान ४३.५ करोड़ रूबल पूंजी संघीय बजट से लगायी गई।***

---

*"सोवियत संघ के अर्थतंत्र के विकास की प्रथम पंचवर्षीय योजना की पूर्ति के परिणाम" मास्को १६३३, पृष्ठ २३६। (रूसी संस्करण)

**अ० अ० गादिर्येको, "मध्य एशिया मे सोवियत जातीय राज्यों की स्थापना", पृष्ठ २२३।

***वहीं, पृष्ठ २२६।

दूसरी पचवर्षीय योजना मे २२ अरब रूबल (प्रथम याजना की २२ गुनी) रकम उज्बेक सो० स० जनतत्र की अर्थव्यवस्था मे लगायी गई।* योजना के अतगत कुल पूजी विनियोजन का ४६ प्रतिशत औद्योगिक विकास के लिए अलग कर दिया गया था (प्रथम याजना मे यह २६ प्रतिशत था)। उज्बेक सो० स० जनतत्र मे दूसरी याजना के अतगत उद्योगा मे जो रकम लगाई गई, वह १११ ६ करोड रूबल थी।**

दूसरी याजना का उद्देश्य सभी शोषक वर्गो को मिटाना और समाजवाद की स्थापना करना था। उद्योग के क्षेत्र म यह उद्देश्य चार वप तीन महीने मे पूरा हुआ और कृषि म लक्ष्या की अधिपूर्ति हुई। सोवियत सघ मे औद्योगिक पैदावार १९१३ की तुलना मे ८ गुना और १९२९ की तुलना मे ४ ३ गुना बढ गई जबकि पूजीवादी देश १९२९ की तुलना म मुश्किल से १०२ ५ प्रतिशत तक पहुचे होगे और १९३७ के उत्तरार्द्ध मे वहा औद्योगिक पैदावार घटन लगी। १९३८ मे पूजीवादी देशा मे औद्योगिक पदावार १९२९ की तुलना मे ९० प्रतिशत रह गई थी। परन्तु सोवियत सघ मे १९३७ की तुलना मे ११ ३ प्रतिशत की वृद्धि हुई। पूजीवादी देशा मे उसी साल मे १३ ५ प्रतिशत की कमी हुई।***

दूसरी योजना मे भारी उद्योगो की ओर बहुत ध्यान दिया गया। इसमे उज्बेक सोवियत समाजवादी जनतत्र मे चिरचिक नदी का बाधन और बिजली शक्ति पैदा करन का लक्ष्य सामने रखा गया था। प्रथम बिजलीघर का निर्माण उसी समय शरू हुआ, जब पहली योजना पूरी हुई और दूसरी म तुरत हाथ लगा दिया गया था। इस बिजली शक्ति को इस्तेमाल करके चिरचिक मे एक रासायनिक कारखाने का निर्माण पूरा किया गया। आल्मालीक मे, जहा ताबा निकाला जाता था, ताम्र प्रोसेसिग प्लाट बनाया गया। कृषि मशीनें बनाने के ताशकन्द कारखाने का विस्तार किया गया और

---

* श०न० उत्मस्वायेव उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ १४१।

** "उज्बेकिस्तान का उद्याग, विकास का सक्षिप्त विवरण, १९१३ १९३८", ताशकन्द, १९४१, पृष्ठ १४। (रूसी सस्करण)

*** "सोवियत सघ के अर्थतत्र के विकास की दूसरी पचवर्षीय योजना की पूर्ति के परिणाम", मास्को, १९३९, पृष्ठ १२। (रूसी सस्करण)

एक सूती कपड़ा कारखाने का निर्माण दूसरी योजना के दौरान पूरा किया गया। उज्बेक सो० स० जनतंत्र में औद्योगिक पैदावार का मूल्य १९३२ के ६८४ करोड़ रूबल से बढ़कर १९३७ में १६६८ करोड़ रूबल हो गया (२४ गुना वृद्धि)।* सूती कपड़ा उद्योग में इस योजना के दौरान पैदावार ४८ गुना बढ़ी, तेल और गैस उद्योग में ७८ गुना बिजली-शक्ति उत्पादन में ३ गुना और धातुकर्म-उद्योग में ५ गुना।**

श्रम की उत्पादनशीलता की वृद्धि के लिए देशव्यापी सार्वजनिक आन्दोलन दूसरी योजना की अवधि में शुरू हुआ। आन्दोलन १९३५ के अगस्त में दोनबास में शुरू हुआ और वहां के एक कोयला मजदूर के नाम पर, जिसने मानक से १४ गुना अधिक कोयला निकालने का रिकार्ड कायम किया था, उस आन्दोलन की ख्याति स्तखानोव आन्दोलन के नाम से हुई। दूसरी योजना में समाजवादी प्रतियोगिता नई उत्पादन-तकनीकों के आधार पर की गई। तकनीकी शिक्षा और प्रशिक्षण व्यापक पैमाने पर फैल गये। १९३७ तक उज्बेक सो० स० जनतंत्र में उद्योग में काम करनेवाले ४४ प्रतिशत मजदूर किसी न किसी प्रकार का तकनीकी प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके थे। अगर १९२८ में १४०० इंजीनियर और तकनीकी मजदूर उज्बेकिस्तान में उद्योग में काम कर रहे थे, तो १९३७ में उनकी संख्या ६,००० तक पहुंच चुकी थी। तकनीकी विद्यालयों तथा अन्य संस्थानों में छात्रों की संख्या दूसरी पंचवर्षीय योजना के अंत तक २६,००० हो गई थी।*** उज्बेक सो० स० जनतंत्र में उद्योगों में श्रम-उत्पादनशीलता १९१३ की तुलना में चार गुना बढ़ गई थी।****

अब हम दूसरी योजना के दौरान उज्बेक सो० स० जनतंत्र की उपलब्धियों का खुलासा यहां कर सकते हैं। बिजली शक्ति का उत्पादन जो १९३२ में ९३६ करोड़ किलोवाट घंटे था, १९३७ में बढ़कर २७६२ करोड़ किलोवाट घंटे हो गया। १९१३ यह केवल ३३ लाख किलोवाट-

*वही पृष्ठ ५४।
**वही, पृष्ठ ५५।
*** श०न० उतमस्वायेव, उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ १३८।
****'उज्बेकिस्तान १५ वर्षों के दौरान', पृष्ठ ३६।

घटे था। अत १९१३ की तुलना मे ७३ गुना वृद्धि हुई।* तेल का उत्पादन, जो १९३२ मे ४६८ हजार टन था, १९३८ मे बढकर १९६४ हजार टन हो गया, यानी १९२४-१९२५ की तुलना मे ३५८ गुना वृद्धि हुई।** सूती कपडे की पैदावार १९३२ मे ८५ लाख मीटर थी, वह बढकर १९३६ मे ६१३ करोड मीटर हो गई।*** उज्बेकिस्तान म भारी उद्योग का उत्पादन १९२४-१९२५ की तुलना मे १५ गुना बढ गया। इसकी पैदावार का मूल्य १९३२ मे ६३ करोड रूबल था और १९३७ म बढकर १५१२ करोड रूबल हो गया।**** इस प्रकार उज्बेकिस्तान के उद्योगीकरण मे बडी सफलता प्राप्त हुई और वह एक दशक के भीतर एक शक्तिशाली औद्योगिक जनतत्र बन गया।

मध्य एशिया के अय जनतत्रो के उद्योगीकरण मे भी बडी प्रगति हुई। तुर्कमान सो० स० जनतत्र मे औद्योगिक पैदावार का मूल्य दूसरी योजना के दौरान १२९ करोड रूबल से बढकर २९३ करोड रूबल हो गया, यानी २३ गुना बढ गया।***** औद्योगिक पैदावार १९२५ म जनतत्र की कुल पैदावार का २७९ प्रतिशत थी, वह उसस बढकर १९३७ मे ६८९ प्रतिशत हो गई। मगर कृषि की पैदावार उत्पादन की आम वृद्धि के बावजूद ७२१ प्रतिशत से घटकर ३११ प्रतिशत पर पहुच गई।*) दूसरी योजना के दौरान तुर्कमान सो० स० जनतत्र के आर्थिक विकास की एक विशेषता तेल और रासायनिक उद्योग का द्रुत विकास थी। करा बोगाज गोल खाडी के खनिज साधनो के उपयोग के साथ रासायनिक उद्योग मे बडी प्रगति हुई। तेल की पदावार १९३२ मे ३४ हजार टन थी, वह बढकर १९३७ मे ४५२ हजार टन हो गई (१३ गुना वृद्धि हुई)।**)

*वही, पृष्ठ ३७।

**वही, पृष्ठ ३८।

***वही, पृष्ठ ३९।

****वही पृष्ठ ३३।

*****"दूसरी पचवर्षीय योजना की पूर्ति के परिणाम ", मास्को १९३९, पृष्ठ ५३–५४।

*)"तुर्कमान सो० स० जनतत्र के १५ वर्ष", अशकाबाद, १९३९, पृष्ठ ९। (रूसी सस्करण)

**)"दूसरी पचवर्षीय योजना की पूर्ति के परिणाम ", पृष्ठ ५३–५४।

किर्गिज सो० स० जनतंत्र में १९३२-१९३७ में ६१ बड़े औद्योगिक उद्यमों का निर्माण किया गया। स्थानीय कृषि की उपज से संबंधित हलके उद्योगों के साथ-साथ कई भारी उद्योगों का भी निर्माण हुआ। १९३५ में ताशा-कुमिर कोयला खान पर काम शुरू किया गया। कारा काल्ती चीनी कारखाना और फ़्रूंज़े चमड़ा कारखाना भी उसी अवधि में चालू किये गये। किर्गिज़स्तान मध्य एशियाई जनतंत्रों का कोयला केन्द्र बन गया। कोयले की पैदावार ७२० हजार टन से बढ़कर ८९६ हजार टन हो गई।*

इसी प्रकार ताजिकिस्तान में भी उद्योगीकरण ने बड़ी प्रगति की। अक्तूबर क्रांति से पहले इस इलाके में आधुनिक उद्योगों का नाम निशान तक नहीं था। प्रथम योजना के अंत तक इस जनतंत्र में १०० के करीब औद्योगिक उद्यम स्थापित हो चुके थे। दूसरी योजना के दौरान यह संख्या और बढ़कर १२५ हो गई। औद्योगिक पैदावार का मूल्य १९३२ के ४१ करोड़ रूबल से बढ़कर १९३७ में १८७ करोड़ रूबल तक, यानी ३.७ गुना बढ़ गया।** तेल का उत्पादन ५० प्रतिशत बढ़ा। शुराब कोयला खदानों की तैयारी के काम में प्रगति हुई। दुशांबे और इसफारा में सिलखड़ी और चूने के कारखानों का निर्माण हुआ। वर्ज़ाब में एक बड़ा बिजलीघर बनाया गया। दुशांबे की विशाल टेक्सटाइल मिल पर भी काम दूसरी पंच वर्षीय योजना के दौरान शुरू किया गया।

इन जनतंत्रों के आर्थिक ढांचे में बड़े परिवर्तन हुए और उनका सामाजिक आर्थिक रूप इतना बदल गया कि पहचाना नहीं जाता था। समाजवादी उद्योगीकरण के साथ मध्य रूस के इलाकों के और मध्य एशिया के विकास स्तर का फर्क बड़ी हद तक दूर हो गया और इस रास्ते के आधार पर जातीय प्रश्न को सफलतापूर्वक हल किया गया। दूसरी योजना की अवधि में पूरे सोवियत संघ में औद्योगिक पदार्थों में २२०.६ प्रतिशत वृद्धि हुई, मगर रू० सो० स० स० जनतंत्र में यह वृद्धि २२०.८ प्रतिशत, उज़्बेक सो० स० जनतंत्र में २४३.० प्रतिशत और

---

*वही, पृष्ठ ५७।
**वही, पृष्ठ ५५।

ताजिकिस्तान मे ३५५७ प्रतिशत थी।* आम तौर से पूजी विनियोग की दर भी मध्य एशिया के जनतत्रो मे सोवियत सघ से अधिक थी। दूसरा योजना के दौरान जहा इसमे सोवियत सघ मे २८ गुना वृद्धि हुई, वहा उज्बेक सो० स० जनतत्र मे ३८ गुना हुई।** मध्य एशियाई जनतत्रो के बडे उद्योगो मे मजदूरो की सख्या मे १९३२ १९३७ मे ५९५ प्रतिशत वृद्धि हुई, जबकि मध्य रूस के इलाको मे यह वृद्धि २२२ प्रतिशत था।

सतुलित क्षेत्रीय विकास

ज० ह्वीलर ने इस बात की चर्चा करते हुए कि मध्य एशिया का ९० प्रतिशत कपास सूत के रूप मे सोवियत सघ के अन्य भागो मे भेजा जाता है, मध्य एशियाई अर्थव्यवस्था के "औपनिवेशिक" स्वरूप का उल्लेख किया है।*** परतु इससे सोवियत मध्य एशिया की अर्थव्यवस्था का एकागी "औपनिवेशिक" स्वरूप लक्षित नही होता। कपास, जैसा कि मालूम है, कपडा उद्योग मे ही नही इस्तेमाल की जाती, बल्कि इसका प्रयोग मोटर-कार और रासायनिक उद्योगो मे भी किया जाता है और इनके विकास की अधिक अनुकूल परिस्थिति सोवियत सघ के अन्य क्षेत्रो मे है। कपास के सूत का एक बडा हिस्सा सोवियत सघ के अन्य भागो मे सूती कपडा कारखानो मे भेज दिया जाता है, क्योकि मध्य रूस के इलाकों

---

*"दूसरी पचवर्षीय योजना की पूर्ति के परिणाम ", पष्ठ ११५।

**"उज्बेकिस्तान के अथतत्र का इतिहास", खण्ड १, ताशकद, १९६२, पृष्ठ २७३। (रूसी सस्करण)

***ज० ह्वीलर, उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ १६१। परन्तु ज० ह्वीलर इस तथ्य के बारे मे कुछ नही कहते कि उज्बेकिस्तान, जिसकी जन सख्या सोवियत सघ की कुल जन-सख्या का ४६ प्रतिशत है, सघ का १५ प्रतिशत गैस, ७ प्रतिशत खनिज-खाद, ५० प्रतिशत सूती कपडा उद्योग का सामान, ७२ प्रतिशत कपास-सफाई सामान तथा १०० प्रतिशत कपास चुनने की मशीनें पैदा करता है।

की क्रांति के पहले ही सूती कपड़ा उद्योग में विशेषीकरण हो चुका था। मध्य एशिया अपनी कपास केवल रूस ही में नहीं, बल्कि समाजवादी देशों के अंतर्राष्ट्रीय श्रम विभाजन के अंतर्गत पोलैंड और चेकोस्लोवाकिया में भी भेजता है। इसके अलावा अगर मध्य एशिया की कपास की सारी पैदावार की खपत स्थानीय कारखानों में ही कर ली जाये, तो इससे इस क्षेत्र की अर्थव्यवस्था में असंतुलन पैदा हो जायेगा और यह उद्योग की अन्य १०० शाखाओं को, जो आज वहां हैं, विकसित करने की सम्भावना से वंचित हो जायेगा। आखिर संयुक्त राज्य अमरीका जैसे अत्यंत विकसित पूंजीवादी देश में भी कपास उत्पादक राज्यों का औद्योगिक विकास सूती कपड़ा उद्योग तक ही सीमित नहीं है और उनकी कपास का बड़ा हिस्सा अन्य राज्यों को भेजा जाता है।

मध्य एशिया से कपास की बड़ी मात्रा के निर्यात का यह मतलब नहीं कि वहां सूती कपड़ा उद्योग का विकास नहीं हो रहा है। उज़्बेक सो० स० जनतंत्र ने १९५८ में देश के कुल सूती कपड़े के ४ प्रतिशत का उत्पादन किया।* कपड़े का प्रतिव्यक्ति सालाना उत्पादन सोवियत संघ में २५ मीटर और उज़्बेकिस्तान में २७ मीटर था।**

इसी तरह व्हीलर का यह कहना भी सही नहीं है कि १९५७ में पशुओं की संख्या क्रांतिपूर्व की तुलना में केवल १७ प्रतिशत अधिक थी,

---

*"१९६१ में सोवियत संघ का अर्थतंत्र", मास्को, १९६२, पृष्ठ २५२। (रूसी संस्करण)

**यह सही है कि उज़्बेक सो० स० जनतंत्र में सूती कपड़ों का प्रतिव्यक्ति उत्पादन हाल के वर्षों में कुछ गिर गया है। १९६६ में वह २१.३ मीटर था। इसका कारण यह है कि एक ओर सूती कपड़े की मांग अपेक्षाकृत कम हो गई है और दूसरी ओर शुद्ध और कृत्रिम रेशम की मांग तथा सिंथेटिक कपड़ों की मांग बढ़ी है। रेशमी कपड़ों का प्रतिव्यक्ति उत्पादन १९५० में १.४ मीटर से बढ़कर १९६० में २.८ मीटर और १९६६ में ४ मीटर हो गया। ("५० वर्षों की अवधि में उज़्बेक सो० स० जनतंत्र का अर्थतंत्र", ताशकन्द, १९६७, पृष्ठ ५३, रूसी संस्करण)।

ताजिकिस्तान मे ३५५७ प्रतिशत थी।* आम तौर से पूजी विनियोग की दर भी मध्य एशिया के जनतन्त्रो मे सोवियत सघ से अधिक थी। दूसरी योजना के दौरान जहा इसमे सोवियत सघ मे २ ८ गुना वृद्धि हुई, वहा उज्बेक सो० स० जनतत्र मे ३ ८ गुना हुई।** मध्य एशियाई जनतत्रो के बडे उद्योगो मे मज़दूरी की सख्या मे १९३२ १९३७ मे ५९ ५ प्रतिशत वृद्धि हुई, जबकि मध्य रुस के इलाको म यह वृद्धि २२ २ प्रतिशत थी।

सतुलित क्षेत्रीय विकास

ज० ह्वीलर ने इस बात की चर्चा करते हुए कि मध्य एशिया का ९० प्रतिशत कपास सूत के रूप मे सोवियत सघ के अन्य भागो मे भेजा जाता है, मध्य एशियाई अर्थव्यवस्था के "औपनिवेशिक" स्वरूप का उल्लेख किया है।*** परतु इससे सोवियत मध्य एशिया की अर्थव्यवस्था का एकागी "औपनिवेशिक" स्वरूप लक्षित नही होता। कपास, जसा कि मालूम है, कपडा उद्योग मे ही नही इस्तेमाल की जाती, बल्कि इसका प्रयाग मोटर कार और रासायनिक उद्योगो मे भी किया जाता है और इनके *विकास की अधिक अनकूल परिस्थिति सोवियत सघ के अन्य क्षेत्रो मे है।* कपास के सूत का एक बडा हिस्सा सोवियत सघ के अन्य भागो मे सूती कपडा कारखानो मे भो दिया जाता है, क्योकि मध्य रूस के इलाको

---

* "दूसरी पचवर्षीय योजना की पूर्ति के परिणाम ", पष्ठ ११५।

** "उज्बेकिस्तान के अर्थतत्र का इतिहास" खण्ड १, ताशकन्द, १९६२, पृष्ठ २७३। (रूसी सस्करण)

*** ज० ह्वीलर, उपरोक्त पुस्तक पृष्ठ १६१। परन्तु ज० ह्वीलर इस तथ्य के बारे म कुछ नही कहते कि उज्बेकिस्तान, जिसकी जन सख्या सोवियत सघ की कुल जन-सख्या का ४ ६ प्रतिशत है, सघ का १५ प्रतिशत गस, ७ प्रतिशत खनिज-खाद, ५० प्रतिशत सूती कपडा उद्योग का सामान, ७२ प्रतिशत कपास-सफाई सामान तथा १०० प्रतिशत कपास चुनने की मशीनें पैदा करता है।

का क्रांति के पहले ही सूती कपड़ा उद्योग में विशेषीकरण हो चुका था। मध्य एशिया अपनी कपास केवल रूस ही में नहीं, बल्कि समाजवादी देशों के अंतर्राष्ट्रीय श्रम विभाजन के अंतर्गत पोलैंड और चेकोस्लोवाकिया में भी भेजता है। इसके अलावा अगर मध्य एशिया की कपास की सारी पैदावार की खपत स्थानीय कारखानों में ही कर ली जाये, तो इससे इस क्षेत्र की अर्थव्यवस्था में असंतुलन पैदा हो जायेगा और वह उद्योग की अन्य १०० शाखाओं को, जो आज वहां हैं, विकसित करने की सम्भावना से वंचित हो जायेगा। आखिर संयुक्त राज्य अमरीका जैसे अत्यंत विकसित पूंजीवादी देश में भी कपास उत्पादक राज्यों का औद्योगिक विकास सूती कपड़ा उद्योग तक ही सीमित नहीं है और उनकी कपास का बड़ा हिस्सा अन्य राज्यों को भेजा जाता है।

मध्य एशिया से कपास की बड़ी मात्रा के निर्यात का यह मतलब नहीं कि वहां सूती कपड़ा उद्योग का विकास नहीं हो रहा है। उज्बेक सो० स० जनतंत्र ने १६५८ में देश के कुल सूती कपड़े के ४ प्रतिशत का उत्पादन किया।* कपड़े का प्रतिव्यक्ति सालाना उत्पादन सोवियत संघ में २५ मीटर और उज्बेकिस्तान में २७ मीटर था।**

इसी तरह ह्वीलर का यह कहना भी सही नहीं है कि १६५७ में पशुओं की संख्या क्रांतिपूर्व की तुलना में केवल १७ प्रतिशत अधिक थी,

---

* "१६६१ में सोवियत संघ का अर्थतंत्र", मास्को, १६६२ पृष्ठ २५२। (रूसी संस्करण)

** यह सही है कि उज्बेक सो० स० जनतंत्र में सूती कपड़ों का प्रतिव्यक्ति उत्पादन हाल के वर्षों में कुछ गिर गया है। १६६६ में वह २१.३ मीटर था। इसका कारण यह है कि एक ओर सूती कपड़े की मांग अपेक्षाकृत कम हो गई है और दूसरी ओर शुद्ध और कृत्रिम रेशम की मांग तथा सिन्थेटिक कपड़ों की मांग बढ़ी है। रेशमी कपड़ा का प्रतिव्यक्ति उत्पादन १६५० में १४ मीटर से बढ़कर १६६० में २८ मीटर और १६६६ में ४ मीटर हो गया। ('५० वर्षों की अवधि में उज्बेक सो० स० जनतंत्र का अर्थतंत्र", ताशकन्द १६६७ पृष्ठ ५३, रूसी संस्करण)।

जबकि जनसख्या मे ७५ प्रतिशत वद्धि हो गई थी।* उनका दावा है कि क्राति से पहले के मुकाबले मे पशुओ की प्रतिव्यक्ति सख्या कम हो गई थी। पशुओ की सख्या १६१६ के २६ लाख से वढकर १६५६ म ३७ लाख हो गयी थी, यानी २७ प्रतिशत, और भेड-बकरी मे ७७ प्रतिशत वद्धि हुई थी।**

पशुओ की सख्या मे वृद्धि की तुलना जन-सख्या म आम वद्धि से नही, बल्कि कृषि आबादी मे वृद्धि से करनी चाहिए, जिसम मध्य एशिया म ५० प्रतिशत वृद्धि हुई, यद्यपि इसका अनुपात १६१३ मे ८१ प्रतिशत स घटकर १६५६ मे ५५ प्रतिशत हो गया।*** यह बात भी याद रह कि व्यापक पशुपालन खानाबदोश अर्थव्यवस्था से (खासकर किर्गिजस्तान और तुर्कमानिस्तान मे) आवासित कृषि मे सक्रमण का प्रभाव मध्य एशिया के किसानो की अर्थव्यवस्था मे पशुओ के महत्त्व पर और उनकी वद्धि की दर पर पडा। इसके अलावा पशुओ की सख्या म वद्धि या कमी से अपन आप काई बात सिद्ध असिद्ध नही होती, जबतक पशुओ की उत्पादिता तथा कृषि मे उनके सानुपातिक भाग पर विचार नही किया जाये। मध्य एशिया मे पशुओ की उत्पादिता म उल्लेखनीय सुधार हुआ है। भेडो स ऊन निकालने म औसतन मध्य एशिया का स्थान ससार के सबसे अगुआ देशा मे है। जैसा कि ज्ञात है पशुओ की कुल सख्या मे ससार मे प्रथम स्थान भारत का है (१७५६ कराड), परन्तु उत्पादिता के मामले म उसका स्थान सबसे पीछे है। फिर, मध्य एशिया मे कृषि शक्ति मे पशुओ का सानुपातिक हिस्सा ६० ७० प्रतिशत से लगभग शून्य पर पहुच गया है। १६६३ म कृषि म १ ३५ करोड अश्व शक्ति ऊर्जा का प्रयोग हुआ, जिसम केवल २ लाख अश्व शक्ति पशुओ द्वारा प्राप्त हुई।**** १६६३ मे मध्य एशिया के खेतो मे १३० हजार ट्रैक्टर काम कर रहे थे।

---

*ज० ह्वीलर, उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ १६१।

** '१६६१ म सावियत सघ का अर्थतत्र', पृष्ठ ३८४।

*** "१६६३ मे मध्य एशिया का अर्थतत्र", ताशकन्द १६६४ पृष्ठ ८। (रूसी सस्करण)

**** वही, पृष्ठ १६१।

पूरे सोवियत संघ तथा मध्य एशियाई जनतंत्रों के औद्योगिक उत्पादन में बड़ा अंतर नहीं है। उज़्बेकिस्तान में कुल उत्पादन में उद्योग का हिस्सा ७३ प्रतिशत और कृषि का २७ प्रतिशत है, जबकि पूरे संघ के लिए ये आंकड़े क्रमशः ८० प्रतिशत और २० प्रतिशत हैं।* परन्तु मध्य एशिया में प्रतिव्यक्ति औद्योगिक उत्पादन पूरे सोवियत संघ के प्रतिव्यक्ति औद्योगिक उत्पादन का लगभग आधा है (पूरे सोवियत संघ की तुलना में प्रतिव्यक्ति उत्पादन उज़्बेकिस्तान में ५२.५ प्रतिशत, तुर्कमानिस्तान में ५०.२ प्रतिशत, किर्गिज़िस्तान में ४२.१ प्रतिशत और ताजिकिस्तान में ४६ प्रतिशत है।)** इस "पीछे रहने" के दो कारण हैं। इसका पहला कारण है उस भयंकर आर्थिक असमानता के अवशेष, जो ज़ारशाही औपनिवेशिक शासन के फलस्वरूप चौथे दशक के आरम्भ तक मौजूद थे। सोवियत पंचवर्षीय योजनाओं ने शुरू ही से मध्य एशिया में औद्योगिक विकास-स्तर को ऊंचा करने की चेष्टा की। युद्धोत्तर वर्षों में इस दिशा में विशेष रूप से महत्वपूर्ण कदम उठाये गये। १९५० और १९६३ के बीच सोवियत संघ की कुल औद्योगिक पैदावार ३९४ प्रतिशत बढ़ी, जबकि मध्य एशिया में ५३० प्रतिशत बढ़ी।*** आठवीं पंचवर्षीय योजना (१९६६-१९७०) में मध्य एशिया के लिए नियोजित वृद्धि दर पूरे सोवियत संघ से अधिक थी। इस अवधि में औद्योगिक उत्पादन में उज़्बेकिस्तान में ६० प्रतिशत, किर्गिज़स्तान में ७० प्रतिशत वृद्धि हुई (सोवियत संघ में ४६-४९ प्रतिशत)।

नवीं पंचवर्षीय योजना (१९७१-१९७५) ने मध्य एशिया के जनतंत्रों के लिए औद्योगिक विकास की तेज़ गति को कायम रखा है। समस्त सोवियत संघ में ४२-४६ प्रतिशत के औसत की तुलना में उज़्बेकिस्तान

---

*"४० वर्षों की अवधि में सोवियत उज़्बेकिस्तान का विकास", ताशकन्द, १९६४, पृष्ठ २८ और '१९६१ में सोवियत संघ का अर्थतंत्र", मास्को, १९६२, पृष्ठ ७६। (रूसी संस्करण)

**"युद्धोत्तर अवधि में सोवियत संघ के समाजवादी अर्थतंत्र का विकास", मास्को, १९६५, पृष्ठ ५१९। (रूसी संस्करण)

***वही, पृष्ठ ५१८, "१९६३ में मध्य एशिया का अर्थतंत्र", पृष्ठ २३।

गयी और ५ गुना अधिक बिजली शक्ति का प्रयोग हो गया। इन सब कारवाइयो के फलस्वरूप कृषि की लाभकारिता लगभग उतनी ही हुई जितनी उद्योग की है और सभी सोवियत जनतत्रो की राष्ट्रीय आय का स्तर कमोवेश समान हो गया।

परन्तु अखिल-सघीय स्तर की तुलना मे इस सीमित "पीछे रहने" के बावजूद सोवियत मध्य एशिया न गत ४० वर्षों म बडी प्रगति की— औद्योगिक उत्पादन के उस स्तर से, जो तुर्की स पीछे था और लगभग भारत के स्तर क समान था, वह एक विकसित औद्योगिक देश के स्तर पर पहुच गया है। १९६१ म सोवियत मध्य एशिया न, जिसकी जन-सख्या १५ करोड है, पूरे ससार के औद्योगिक उत्पादन का ०७ प्रतिशत पैदा किया। परन्तु भारत ने, जिसकी जन-सख्या ससार की १६ प्रतिशत है, केवल १२ प्रतिशत किया। उसी अवधि म उज्बकिस्तान न जिसकी आबादी ससार की ०३० प्रतिशत है ससार के औद्योगिक उत्पादन का ०४५ प्रतिशत पैदा किया।

१९५७ म यूरोप के लिए आर्थिक आयोग द्वारा प्रकाशित 'सोवियत सघ म क्षेत्रीय आर्थिक नीति" की रिपोट म मध्य एशियाई जनतत्रा तथा मध्य रूस क उन्नत क्षेत्रा के विकास स्तर का खाई को दूर करन की दिशा मे दो पचवर्षीय योजनाओ की उपलब्धियो का खडन करने की चेष्टा की गई है। रिपोट म कहा गया है कि मध्य एशिया का उद्योग १९२६ मे बहुत छोटा था और जितन वर्षो म जितनी प्रतिशत वृद्धि का उल्लेख किया गया है (१९२६ स १९४० तक बारह गुना से अधिक), वह एक ऐस देश के लिए, जो पुनर्निर्माण के दौर से गुजर रहा हो, या औद्योगिक विकास की प्राथमिक अवस्था म हो, कोई अनोखा कारनामा नही है। एक और मिसाल ली जाय, पाकिस्तान म १९५० स १९५६ तक* छह वर्षो

---

*ज० व्हीलर द्वारा उद्धत उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ १५६ २६८ प्रतिशत (*Statistical Year Book*, United Nations New York, 1958) और ३६१ प्रतिशत (*Economic Survey and Statistics for 1958—1959* Karachi)

यूरोप की दो पूजीवादी शक्तिया के बीच मडियो के लिए, उपनिवेशो पर कब्जा करने के लिए, ससार का बटवारा करन के लिए सघप की स्थिति मे मध्य एशिया के कमजोर सामती खान प्रशासित राज्या के लिए अपनी स्वतत्रता को कायम रखना असम्भव था। जारशाही रूस ने मध्य एशिया का समामेलन करके वहा के लोगा को साम्राज्यवादी ब्रिटेन के चगुल मे फसने से बचा लिया। लेकिन इसका यह मतलब नही है कि जारशाही साम्राज्यवाद ब्रिटिश साम्राज्यवाद से किसी तरह बेहतर था। सच तो यह है कि दो प्रतिद्वन्द्वी साम्राज्या मे किसी को दूसरे पर तरजीह नही दी जा सकती। दोनो का एक ही उद्देश्य था–मध्य एशिया के लोगो का शोषण करना और उनको गुलाम बनाना। परतु भेद का कारण निहित था रूसी साम्राज्य की परिस्थिति के विशेप स्वरूप म साम्राज्यवादी देश तथा उपनिवेश की ग्राम जनता के विशेप राजनीतिक तथा आर्थिक सबधा म, रूसी जनगण और रूसी साम्राज्य के सीमावर्ती जनगण की भौगालिक निकटता म। इसके विपरीत भारत के जनगण अग्रेज मजदूरो या किसाना से कभी मिल नही सकते थे। वे केवल औपनिवेशिक अधिकारियो–**गोरे साहबो**–को ही जानते थे।

जारशाही के साम्राज्यवादी औपनिवेशिक उद्देश्या के बावजूद रूस से मध्य एशिया का समामेलन "इतिहास की दृष्टि से" निस्सदेह वस्तुत प्रगतिशील था। पूजीवाद के सारे नकारात्मक तथा स्याह पहलुग्रा के बावजूद मध्य एशिया के समामेलन के बाद पूजीवादी सबधा की उत्पत्ति प्रगतिशील थी। इसके कारण उत्पादक शक्तिया का विकास हुआ और मजदूर वग ने ज म लिया। अगर ब्रिटेन का कब्जा हो गया हाता तो मध्य एशिया के लोगो को रूसी जनगण के करीब आन का मौका नही मिलता, जो उनके भावी ऐतिहासिक विकास के लिए बहुत महत्वपूण साबित हुआ। औपनिवेशिक इलाके के श्रमजीवी जनगण के राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन का रूस के मजदूरो के क्रातिकारी आदोलन के साथ एक धारा मे मिल जाना वास्तव मे मध्य एशिया पर जारशाही के कब्जे का एक महान प्रगतिशील परिणाम था।

ब्रिटिश साम्राज्यवादियो ने सिक्याग को मध्य एशिया के खिलाफ आक्रमण का अड्डा बनाने की चेष्टा की। वे चाहते थे कि फरगाना घाटी मे अपना असर फैलाने के लिए याकूब बेग के राज्य का इस्तेमाल करे। काशगर मे अपनी स्थिति को मजबूत करने के लिए उन्होने तुर्की के सुलतान के धार्मिक प्रभाव से भी फायदा उठाया। अपनी कठपुतली याकूब बेग के पतन तथा उसके राज्य पर चीनियो का कब्जा हो जाने के बाद अग्रेजो ने चीनियो को रियायते देने की नीति अपनायी, क्योकि व जारशाही रूस के खिलाफ अपनी साम्राज्यवादी प्रतिद्वद्विता म उन्हे अपने साथ मिलाना चाहते थे।

अक्तूबर क्राति ने मध्य एशिया की जातियो के जीवन म एक नये युग का प्रारम्भ किया। उसने अतीत मे जारशाही द्वारा उत्पीडित जातियो को वास्तव मे स्वतत्र और समान बनाया, उन्हे राजनीतिक समानता और राजत्व ही प्रदान नही किया, बल्कि उन्हे अपने आर्थिक और सास्कृतिक पिछडेपन को दूर करने का अवसर भी दिया। सोवियत समाजवादी व्यवस्था ने सामाजिक और राष्ट्रीय उत्पीडन और असमानता का उन्मूलन किया और बडी तथा छोटी जातियो के बीच मैत्री और बिरादराना सहयोग की बुनियाद डाली। इस स्थिति म राष्ट्रीय समस्या का अत्यत उत्साहवर्धक समाधान हुआ।

सोवियत मध्य एशिया म जीवन-स्तर, सार्वजनिक स्वास्थ्य, शिक्षा, तकनीकी ज्ञान, सचार और उत्पादिता का स्तर अधिकाश अफ्रीकी और एशियाई देशो से बहुत ऊचा है।

सोवियत शासन द्वारा मध्य एशिया के जनगण क जीवन म अर्द्ध शताब्दी के ऐतिहासिक दृष्टि से कम समय म जबरदस्त सामाजिक-सास्कृतिक तब्दीली हो गयी है। सामाजिक रूपातरण की सोवियत विधियो और तरीको, उनके परिणामो तथा उनके प्रति जनगण की प्रतिक्रियाओ और अनुभवो का अध्ययन सभी नवस्वाधीन अफ्रीकी और एशियाई देशो के लिए बहुत ही दिलचस्प और लाभदायक होगा, क्योकि ये देश भी स्वतत्र राष्ट्रीय विकास के मार्ग पर सामाजिक परिवर्तन की व्यापक प्रक्रिया से गुजर रहे हैं। मध्य एशिया म पुराने से नये म परिवर्तन आसान नही

था। कभी-कभी गलतिया और कुछ ज्यादतिया भी हुईं। परन्तु इसको स्वीकार करने का मतलब इसस इनकार करना नही है कि जो तब्दीलिया हुइ, व बडी हद तक जनगण की अपनी इच्छा और मर्जी से की गयी थी।

मध्य एशिया के जनगण की इन महान सफलताओ का श्रेय समाज वादी सामाजिक व्यवस्था, नियोजित आर्थिक विकास तथा सोवियत जा तिया की मैत्री और परस्पर सहायता को है। मध्य एशिया की जातिया का ऐतिहासिक अनुभव विश्वव्यापी महत्त्व का है। इतिहास म वे पहली जातिया थी, जिन्होने पूजीवादी विकास की पीडाओ मे गुजर बिना समाजवाद का रास्ता अपनाया। आर्थिक दृष्टि से कम विकसित देशा के लिए पजीवादी विकास का रास्ता दुख और पीडा का रास्ता है। इससे पिछडापन और दरिद्रता कायम रहती है। सोवियत मध्य एशियाई जनतत्रो के ऐतिहासिक अनुभव न साबित कर दिया है कि एकमात्र समाजवादी विकास का रास्ता ही इन देशा के लिए तेजी से प्रगति करन का रास्ता है। सावियत मध्य एशिया के जनतत्र पूव म समाजवाद के प्रकाश-स्तम्भ है, जो करोडा जनगण के लिए शाति और समाजवाद के मधय का माग उज्ज्वल कर रहे है।

कुछ पश्चिमी लेखको ने सोवियत मध्य एशियाई जनतत्रो के शानदार आर्थिक और सास्कृतिक विकास मे समाजवादी व्यवस्था के महान योगदान को नजरअदाज करने की चेष्टा की है। उदाहरण के लिए, अमरीकी विद्वान रिचड अ० पियस न टिप्पणी की है

"ये उपलब्धिया अवश्य ही वास्तविक है, परन्तु सिक्के की दूसरी तरफ भी है। पहली बात यह कि यह विकास बडी हद तक शायद सोवियत व्यवस्था के बिना ही हो जाता क्योकि दुनिया आगे बढती जाती है और प्रगति किसी एक व्यवस्था का इजारा नही है।"*

लेकिन सावियत मध्य एशिया के जनतत्रो की प्रगति के स्तर का मुकाबला पडोस के मुस्लिम राज्यो से किया जाये, तो इसमे कोई सन्देह

*उपरोक्त पुस्तक, पृष्ठ ३०५।

नही रहेगा कि व्यवस्था का महत्त्व बहुत है। पिछले जमाने मे तुर्की मध्य पूर्व का सबसे शक्तिशाली राज्य था। १९१७ से पहले वह कई लिहाज से मध्य एशिया से आगे था। मध्य एशियाई राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के नेता उसे एक आदर्श राज्य तथा अनुकरणीय उदाहरण मानते थे। परन्तु तुर्की आज तक एक कृषिप्रधान देश है। उसकी राष्ट्रीय आय म उद्योग का हिस्सा दसवे भाग से कुछ ही अधिक है। तुर्की लगभग केवल कृषि की उपज का निर्यात करता है, आयात मुख्यत मशीना और अन्य औद्योगिक सामाना का होता है। परन्तु समाजवाद की विजय न सोवियत मध्य एशिया के जनतत्रो को उन्नत औद्योगिक कृषिक क्षेत्र बना दिया है। अन्य सघीय जनतत्रा तथा विदेशा को उनका निर्यात कृषिक उपज तक ही सीमित नही है, बल्कि उसम मशीनें और औद्योगिक सामान भी शामिल है। उज्बेकिस्तान म १९६२ म बिजली का प्रति व्यक्ति उत्पादन तुर्की का लगभग सात गुना था। अन्य देश—ईरान, अफगानिस्तान और पाकिस्तान—अभी मध्य एशिया के मुकाबले म तुर्की से भी अधिक पीछे है।

सोवियत एशिया की पिछडी हुई जातिया की भौतिक और सांस्कृतिक उन्नति का कारण एडवर्ड क्रैंक्शा* और सीटन वाटसन जसे लेखक इस तथाकथित "सर्वव्यापी नियम" मे ढूढने का प्रयास करते हैं कि साम्राज्यवाद सदा भौतिक प्रगति का वाहक होता है। कहा गया है कि साम्राज्यवादी राम ने यूरोप को फायदा पहुचाया और ब्रिटेन न अफ्रीका को। (अवश्य ही मलान, राय वलस्की, फेरवुड और स्मिथ जसे लोग अफ्रीकी जातिया का ब्रिटिश साम्राज्यवाद की अनमोल भेंट है!) सीटन वॉट्सन सोवियत सत्ता और ब्रिटिश साम्राज्य की भौतिक उपलब्धियों के अतर के दो कारण बताता है। एक यह कि रूसी साम्राज्य की गैर रूसी जातियां सभ्यता के अपने आम स्तर की दृष्टि से अफ्रीका के ब्रिटिश उपनिवेशो और भारत तक की भी जातियो से अधिक उन्नत थीं। (याना

---

* Foreword to *Communism and Colonialism* by Walter Kolarz London New York 1964 p XIV

बदोश किगिज, कज़ाख और तुकमान, जिनकी अपनी भाषाओ की क्रान्ति से पहले कोई लिपि भी नही थी, भारत के बगालियो और तामिला से, जिनके साहित्य की परम्परा सैंकडा वप पुरानी है, अधिक उन्नत थे।) दूसरा कारण था शासक देश के लोगो तथा औपनिवेशिक जातिया के अनुपात म फक। सीटन वॉटसन के अनुसार रूसिया और मध्य एशियाई मुसलमानो का अनुपात १ ५ का था, जबकि अग्रेजो और उनकी एशियाई और अफ्रीकी रिआया का अनुपात १ ५० का था।* परतु भौतिक प्रगति के प्रश्न का सारतत्व गोरे और काले लोगो की सख्या का अनुपात नही, बल्कि यह है कि लोग किस सामाजिक व्यवस्था मे जीवन व्यतीत करते और काम करते है।

सोवियत युग म मध्य एशिया के जनगण ने, जो पहले ज़ारशाही रूस और ब्रिटेन की साम्राज्यवादी प्रतिद्वद्विता मे शतरज के मोहरा की तरह थे, अब स्वय अपना व्यक्तित्व विकसित कर लिया है। एशिया के पडोसी देशा से उनका बिलगाव अब अतीत की बात हो गई है और अब वे उनसे तथा ससार के अय देशा से सफलतापूवक गहरे दोस्ताना सबध विकसित कर रहे है। मध्य एशिया के मुख्य शहरो के अनक कारखाने और प्लाट ऐसा सामान और मशीनें पैदा कर रहे है जिनसे भारत मिस्र, सीरिया, अफगानिस्तान, बर्मा और नपाल जस देशा के आर्थिक विकास म योगदान मिलता है। अनक अफ्रो एशियाई और लैटिन अमरीकी दशा के नौजवान विशेषज्ञ ताशक द मे प्रशिक्षित हो रहे है। ताशक द सारी दुनिया के लेखका, प्राच्यवेत्ताओ, फिल्मनिर्माताओ, सावजनिक स्वास्थ्यकमिया, पौधे उपजानेवाला तथा सहकारिता विशेषनो का मिलन स्थान बन गया है। अफ्रो एशियाइ लेखका का पहला सम्मेलन अक्तूबर १९५८ म ताशक द म ही हुआ था। और फिर यही अतर्राष्ट्रीय ट्रेड-यूनियन सेमिनार, सयुक्त राष्ट्र सघ के तत्वावधान म स्वास्थ्य शिक्षा पर गाष्ठी, उष्णदशीय रागा के सवध म सम्मलन, शुष्क इलाका के अध्ययन के लिए यूनेस्का सलाहकार समिति का अधिवेशन तथा महिलाओ की शिक्षा के सवाल पर एशियाई

---

* H Seton Watson *New Imperialism*, p 124

और अफ्रीकी देशा की महिलाओं का अतर्राष्ट्रीय सेमिनार आयोजित हुआ था।

ताशकन्द घोषणापत्र जिसके जरिये दो एशियाई देशा—भारत और पाकिस्तान—मे शान्ति स्थापित हुई, इस बात का शानदार सबूत है कि मध्य एशिया के लोग अपने दो महान एशियाई पडोसियो के बीच सामान्य सबध पुन स्थापित करने मे अधिकाधिक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे है। उज्बेक जनगण ने भारत और पाकिस्तान के नेताओ के सम्मेलन की सफलता के लिए अनुकूल वातावरण कायम करने का पूरा प्रयत्न किया। अनेक मध्य एशियाई राजनीतिज्ञ और जन नेता जैसे शरफ रशीदोव, मिर्ज़ा तुसुन ज़ादा और बाबाजान गफूरोव अफ्रो एशियाई एकजुटता, राष्ट्रीय मुक्ति तथा विश्वशान्ति के आन्दोलना म प्रमुख भाग ले रहे है। स्वतन्त्र और समान सोवियत जातिया की बिरादरी म मध्य एशिया की जातिया धीर धीर उस स्थान पर पहुच रही ह, जहा वे अतर्राष्ट्रीय क्षेत्र म अपनी सामूहिक जिम्मेदारी निभा सके। इस प्रक्रिया का सभी शातिप्रेमी एशियाई देशा, खासकर भारत द्वारा सक्रिय समथन और हार्दिक स्वागत किया जाता है। भारत के लोगो के मन म मध्य एशिया की जातिया के प्रति सदा ही मैत्रीपूर्ण सदभावना रही है।

पाठका से

प्रगति प्रकाशन इस पुस्तक के अनुवाद और डिज़ाइन सम्बन्धी आपके विचारा के लिए आपका अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त कर भी हम बडी प्रसन्नता होगी। हमारा पता ह

प्रगति प्रकाशन, २१, जूबोव्स्की बुलवार,
मास्को, सोवियत सघ।

उन्होंने विशेष ध्यान उन बातों पर दिया कि
तब्लीलिया—सामती अवस्था ने पूजी को
छोडते हुए समाजवादी समाज म रूपान्तरण
की विशेष प्रक्रिया—की ओर दि जा
इन जनतत्रों म पिछले पचास वर्षों में हुई हैं।
लेखक ने बताया है कि रूसी जनगण तथा
सोवियत सघ की अन्य विकसित जातियों
की सहायता स इन इलाकों का जो पहले
जारशाही रूस के पिछडे हुए, औपनिवेशिक
सीमावर्ती इलाके थे, कैसे रूपातरण हुआ और
वे कैसे बहुत कम समय म स्वतत्र, और
उन्नत समाजवादी जनतत्र बन गये जहा
विकसित उद्योग, मशीनीकृत कृषि है और
विज्ञान और सस्कृति ने बडी प्रगति की है।

देवेन्द्र कौशिक ने तथ्यो के आधार पर
सोवियत मध्य एशिया के इतिहास के बारे म
जेफ्रोफी व्हीलर रिचर्ड पाइप्स और सीटन
वाटसन जैसे पूजीवादी इतिहासविदो के विकृत
विचारों का खडन किया है।

सोवियत मध्य एशियाई जनतत्रों के
इतिहास और वतमान जीवन की जानकारी
प्राप्त करने मे अपने पाठको की सहायता
करके लेखक ने सोवियत सघ और भारत के
लोगो मे एक दूसरे की समझ सास्कृतिक
समीपता और मैत्री स्थापित करने म बहुमूल्य
योगदान किया है।